प्रेमपत्र जिल्द छठवीं जो कि सन् १८९८ ई० पहिली मई से सन् १८९८ ई० १५ दिसम्बर तक ख़तम हुआ उसके बचनों का

सूचीपत्र

नम्बर बचन	सुर्ख़ी यानी खुलासा मज़मून बचन	नम्बर सफ़ा
१	पिछले वक़्तों में जीवों का उद्धार बावजूद तप और जप वग़ैरह के नहीं हुआ	१
२	कालकरम से डरो और कुल मालिक राधास्वामी दयाल और संत सतगुरु की ओट गहो और उनके चरनों की तरफ़ भागो	८
३	जब तक संसारी स्वभाव और विकारी अंग मन के घटाये न जावेंगे, तब तक चढ़ाई और ऊंचे देश में ठहरना मुमकिन नहीं है	१९
४	राधास्वामी मत के सतसंगी को अपने उद्धार की निसबत, किसी तरह का शक और संदेह नहीं करना चाहिये...	२७

नम्बर वचन	सुरखी यानी खुलासा मजमून वचन	नम्बर सफ़ा
५	जो राधास्वामी दयाल की सरन में आया है, उसको मौज के साथ मुवाफ़िक़त करना मुनासिब और लाज़िम है ...	३८
६	मालिक के चरनों में प्रीत और प्रतीत करना और बढ़ाना, और दुनिया और उसके सामान और दुनियादारों से भाव और प्यार कम करना और घटाते जाना	४६
७	भक्ती मारग और अंतर अभ्यास की कमाई के हालत में, कुल मालिक राधास्वामी दयाल को एक देशी और भी सर्वदेशी मानना चाहिये, ...	५४
८	प्रथम ज़रूरत स्वरूपवान सतगुरु और उनकी प्रीत और प्रतीत की है, तब अरूपी सतगुरु यानी कुल मालिक से मेला होगा, ...	६२
९	वाचक ज्ञानियों का अपने तईं ब्रह्म कहना या मानना गलत है, ...	७६
१०	सरन और करनी के वास्ते प्रेम और मेहर दरकार है, ...	८०

नम्बर वचन	सुर्ख़ी यानी खुलासा मज़मून वचन	नम्बर सफ़ा
११	मालिक घट २ में मौजूद है, ...	८५
१२	मालिक को भक्ती प्यारी है, और भक्ती सतगुरु की और किसी की भक्ती मंजूर नहीं है, ...	९१
१३	सतसंगियों को सेवा के मुआमले में आपस में क्रोध करना नहीं चाहिये, ...	१००
१४	परमार्थ की चाह मुवाफ़िक दुनिया की चाह के जबर होना चाहिये, ...	१०७
१५	सच्चा परमार्थी गुरू के वचन के मुवाफ़िक वर्ताव करेगा, ...	११३
१६	जो कोई सचौटी के साथ सतसंग करेगा, उसकी हालत जरूर बदलेगी,...	१२१
१७	यह मन मस्त और गाफ़िल है और दुनिया के भोग विलास में बंधा हुआ है,...	१२६
१८	सतगुरु को दीनता पसंद है, सो जो कोई सच्चा दीन होकर उनकी सरन लेवे, उसी को पार पहुंचाते हैं, ...	१३०
१९	गुरु स्वरूप मालिक की महिमा हर स्वरूप से ज्यादा है, ...	१३३

नम्बर बचन	सुरख़ी यानी ख़ुलासा मज़मून बचन	नम्बर सफ़ा
२०	जब तक कि जड़ चेतन्य की गांठ न खुलेगी तब तक मन बिकारी अंगों में थोड़ा बहुत बर्तता रहेगा, ...	१४२
२१	शब्द तुलसी साहब के, ...	१४७
२२	संबाद तुलसी साहब का साथ फूलदास साधू कबीर पंथी वग़ैरह के, ...	२३१

राधास्वामी दयाल की दया
राधास्वामी सहाय

बचन १

पिछले वक़्तों में जीवों का उद्धार बावजूद तप और जप वग़ैरह के नहीं हुआ। अब राधास्वामी दयाल अति दया करके, थोड़ी प्रीत उनके चरनों में लाने से, सहज में उद्धार फ़रमाते हैं। बड़भागी जीव उनसे या संत सतगुरु या उनके प्रेमी जन से, किसी न किसी क़िस्म का नाता प्रीत का जोड़ते हैं और अभागी जीव उनके भक्त जन से बिरोध या उनकी निंद्या करते हैं॥

१-पिछले वक़्तों में लोग बहुत मेहनत और काष्टा बाहर मुखी परमार्थी कामों में अपने तन मन पर

धारन करते थे, लेकिन फिर भी सच्चा उद्धार किसी का नहीं हुआ, यानी माया के घेर के पार कोई नहीं गया॥

२-कोई जप यानी नाम के ज़बानी और स्वांसा के सुमिरन में अटके रहे और कोई तप यानी अनेक तरह की काष्ठा देह पर सहते रहे, जैसे पंच अग्नी तपना, जल सैन करना, खड़े रहना या किसी ख़ास आसन से बैठे रहना, या उलटे टंगना या मौन धारन करना, और कोई धोती नेती और बस्ती क्रिया यानी अस्थूल शरीर के अंदर की सफ़ाई रखने में पचते रहे, पर यह सफ़ाई क्योंकि त्यों मुमकिन न थी, यानी चौबीस घंटे में फिर बदस्तूर मल मूत्र इन्द्री द्वारों में भर जाता है ॥

३-सिवाय इसके बाज़े लोग बहुत सख़्ती के साथ ब्रत धारन करतेरहे, यानी एक दो तीन दिन से लेकर इक्कीस दिन तक और बाज़े इससे ज्यादा बे खाने पीने के गुज़ारते रहे। और हर चंद भारी तकलीफ़ पाते रहे वल्कि कहीं २ मौत भी होगई, पर फिर भी इन कामों से बाज़ न आये, और आइंदह के जनम में सुख अस्थान के प्राप्ती की आसा पर यह कार्रवाई करते रहे ॥

४-खुलासा यह है कि जो कुछ ऊपर लिखा गया

उस्से भी ज़्यादा तकलीफ़ के काम जैसे डंडौती परि-कर्मा, और हमेशा नंगे वदन रहना, और धूप और मेह और सरदी की वरदाश्त करना वग़ैरे वग़ैरे लोगों ने इख़्तियार किये, पर सच्चे मालिक का भेद और पता उनको न मिला, और न उसके धाम में पहुंचने की जुगत उनको मालूम पड़ी ॥

५–अष्टाङ्ग जोग की जो कि एक मुशकिल अभ्यास प्राणों के साधन का है, वहुत महिमां पिछले जोगी-श्वरों और औतारों ने करी, वल्कि उसी को एक ख़ास साधन ब्रह्म पद की प्राप्ती के वास्ते क़रार दिया। मगर यह साधन ऐसा कठिन था, कि सिवाय विरले ईश्वर कोटी मनुष्यों के और किसी से दुरुस्त और पूरा न वना, और इस वास्ते सब के सब नीचे के देश में रहे, और ब्रह्म पद तक न पहुंच सके ॥

६–ऐसी हालत जीवों की देखकर कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल ने अति दया करके संत सतगुरु रूप धारन किया, और सहज जुगत जीव के उद्धार की सुरत शब्द मारग की कमाई से प्रघट करी ॥

७–हर चंद सुरत और मन का घट में चढ़ाना शब्द के वसीले से कुछ आसान काम नहीं है, यानी इसके वास्ते भी वैराग संसार और उसके भोगों से और गहरा

अनुराग चरनों में संत सतगुरु और कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल के दरकार है, लेकिन निहायत दया करके और जीवों को बलहीन और लाचार देखकर ऐसी मौज फ़रमाई है, कि जो कोई इस अभ्यास को जिस क़दर उस्से बन सके बराबर करे जावेगा, तो राधास्वामी दयाल अपनी ख़ास मेहर और दया के साथ, उसको चौरासी से बचाकर ऊंचे और सुख अस्थान में बासा देंगे और दो या तीन बार जब २ संत सतगुरु इस लोक में प्रघट होवें, उसको नरदेही देकर और सतसंग में शामिल करके और कमाई करा के, निज घर में पहुंचाते हैं ॥

८—ऐसी भारी दया जीवों पर आज तक कभी नहीं हुई, और न किसी दूसरे की ऐसी ताक़त हैं, कि इस क़िसम की दया कर सके। यह काम कुल्ल मालिक और सर्व समर्थ राधास्वामी दयाल का है, कि अपनी मौज से जैसे चाहें आसान से आसान तरकीब के साथ जीवों का उद्धार फ़रमावें। किस की ताक़त है कि इस दया का शुकराना अदा कर सके, या उनकी दया और बख़्शिश के मुवाफ़िक करनी कर सके ॥

९—अलावे इसके कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल ने और एक निहायत आसान तरकीब जीवों के उद्धार

के वास्ते जारी फ़रमाई कि जिस्से हर एक क़िसम का जीव चाहे उस्से सतसंग और अभ्यास भी कम बनता होवे, या जैसा चाहिये दुरस्त न बन सके, तो भी वह थोड़ी बहुत दया और उसके मुवाफ़िक़ उद्धार का अधिकारी हो सक्ता है, यानी उसके उद्धार का सिल-सिला जारी हो कर एक दिन वह धुर मुक़ाम में पहुंचने के लायक़ बन सक्ता है ॥

१०–वह आसान तरकीब यह है कि जीव कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल और संत सतगुरु के सतसंग की महिमा सुनकर, उनके चरनों में थोड़ी बहुत प्रीत लावें, और मुहब्बत का नाता उनसे और उनके सत-संग में जोड़ें। जिस क़दर प्रीत जिसको चरनों में और सतसंग में आवेगी, उसी क़दर उसके अंतर में सफ़ाई होती जावेगी, और नाम यानी हिरदे में चरन बस्ते जावेंगे, यानी याद बढ़ती जावेगी ॥

११–यह प्रीत आहिस्ते २ और दुनिया की प्रीतों को घटावेगी, और बढ़ती २ इस क़दर तरक़्क़ी पकड़ेगी, कि गहरा प्रेम चरनों का जीव के हिरदे में पैदा हो जावेगा और सब तरफ़ से आहिस्ते २ हटाकर एक दिन निज धाम में पहुंचावेगा ॥

१२–जिसके हिरदे में थोड़े से थोड़ी भी प्रीत राधा-

स्वामी दयाल और संत सतगुरु की पैदा हुई है, वह भी चौरासी से बचा लिया जावेगा, और सुख अस्थान में बासा पावेगा, और तीन चार जनम संत सतगुरु की मौज और दया से धारन करके वह भी एक दिन निज धाम में पहुंचा दिया जावेगा ॥

१३–अब ख़्याल करो कि लोग दुनिया में अनेक जगह और अनेक जीवों से किसी न किसी दरजे की प्रीत कर रहे हैं, तो उनको थोड़ी बहुत प्रीत राधास्वामी दयाल और संत सतगुरु के चरनों में लाना कुछ मुश्किल बात नहीं है, क्योंकि प्रीत करना और उसके मुवाफ़िक़ ब्योहार बर्तना वे अच्छी तरह से जानते हैं ॥

१४–अब ग़ौर का मुक़ाम है कि राधास्वामी दयाल ने किस क़दर आसान तरीक़ा, अलावे सतसंग और अभ्यास के, वास्ते उद्धार आम जीवों के जारी फ़रमाया है। जो ज़रा भी दीनता के साथ प्रीत करे, वही उद्धार का अधिकारी हो सक्ता है ॥

१५–सिवाय इसके और ज़्यादा तर दया कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल ने इस तरह पर फ़रमाई है कि जो कोई उनसे या संत सतगुरु से प्रीत न कर सके, लेकिन उनके सच्चे सतसंगी यानी प्रेमी सेवक से किसी तरह पर प्रीत करे, यानी रिश्तेदार होकर अपने रिश्ते के

मुवाफ़िक़ मुहब्बत करे, या उसकी भक्ती देखकर परमार्थी प्रीत करे; तो उसकी प्रीत का फल उसको थोड़ा बहुत वैसा ही मिलेगा, जैसा कि राधास्वामी दयाल के चरनों में प्रीत करने से हासिल होता। अब इस दया का विचार करो कि कहीं वार पार नहीं है, कि बग़ैर करनी के भी जीवों को मेहरी जीवों के ग़ोल में शामिल करके, आइंदह को विशेष मेहर और दया यानी पूरे उद्धार के लायक़ बनाते हैं ऐसी मेहर जीवों पर कभी नहीं हुई, और न कोई दूसरा सिवाय कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल के कर सक्ता है॥

१६–जो कोई इस क़दर आसानी और निहायत दरजे की दया की, जो जीवों पर इस ज़माने में फ़रमाई गई है क़दर न करे और बख़्शिश न लेवे, तो जानना चाहिये कि वह जीव अभागी है। और जो जीव कि बजाय भाव और प्रीत करने के, कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल या उनके सतसंगियों से विरोध रक्खे या उनकी निंद्या करे तो उनको जानना चाहिये कि वे महा अभागी हैं, और इस जनम में और आइंदह महा कष्ट और कलेश भोगेंगे। मगर फिर भी दया उनको थोड़ा बहुत दंड पाने के बाद सच्चे रास्ते पर लाकर उद्धार का अधिकारी बनावेगी॥

बचन २

काल करम से डरो और कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल और संत सतगुरु की ओट गहो और उनके चरनों की तरफ़ भागो ॥

१-काल और करम बड़े ज़बरदस्त हैं, और इस रचना में भारी ज़ोर इनका है ॥

२-जीवों को अनेक रीत से दुख पहुंचाते हैं, और सख़्त मुसीबत में उनको गिरफ़्तार करते हैं, जहां किसी का बल और चतुराई किसी तरह की मदद नहीं कर सक्ती ॥

३-जिस २ रीत से यह काल और करम जीवों को सताते हैं, उसकी थोड़ी सी शरह लिखी जाती है ॥

आफ़त आसमानी जैसे (१) बे वक़्त या बहुत ज़्यादा बारिश (२) बे वक़्त या ज़्यादा ओले का बरसना (३) बे वक़्त या ज़्यादा बर्फ़ का बरसना (४) भौचाल (५) तूफ़ान हवा या पानी का (६) मरी या सख़्त वबा (७) बिजली का गिरना (८) बारिश बिल्कुल न होना या अकाल का पड़ना ॥

आफ़त दुनियावी

(१) रोग यानी देह की अनेक क़िसम की बीमारी (२) सोग यानी रंज मौत प्यारों का (३) नुक़सान धन और माल व असबाब (४) लड़ाई राजाओं की (५) नुक़सान माल व जान लड़ जाने रेल से (६) नुक़सान माल व जान डूब जाने व टूट जाने जहाज़ों से (७) नुक़सान माल व जान गिरजाने मकानात से (८) नुक़-सान माल व जान लग जाने आग से (९) क़ज़िये व झगड़े बसबब ना इत्तफ़ाकी या क्रोध विरोध और लोभ के (१०) मुफ़लिसी व नादारी (११) ख़राबी मन की और झुकाव उसका नाक़िस सोहबत और बुरे कामों की तरफ़ (१२) नुक़सान जान व माल व सबब चोरी व डाकेज़नी ॥

४—यह सब तकलीफ़ें और मुसीबतें जीवों पर समय २ पर, कभी ख़ास और कभी आम तौर से गुज़रती रहती हैं, और वे लाचार होकर इनको सहते हैं और हर चंद रोते और पुकारते हैं, पर कोई सिवाय बाज़ी २ हालतों के उनको मदद किसी तरह नहीं कर सक्ता ॥

५—सब लोग ऐसा कहते हैं और समझते हैं कि यह सब तकलीफ़ें जीवों के पिछले अगले करमों का फल हैं, पर उन करमों को कोई नहीं काट सक्ता, और

न कोई उनके कटने का जतन या इलाज बतलाता है; इस सबब से जीव निहायत दुखी और निर आसरे रहते हैं ॥

६-संत सतगुरु दया करके जुगत और जतन बतलाते हैं। जो जीव उनके बचन की प्रतीत करके और उनके उपदेश को ग्रहन करके दिलोजान से उसका थोड़ा बहुत अभ्यास करें, और कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल के चरनों में प्रीत और प्रतीत लावें, तो आहिस्ते आहिस्ते उनके अगले पिछले करम कट सक्ते हैं, और जिन आफ़तों का ऊपर ज़िकर हुआ उनसे किसी क़दर बचाव मुमकिन है ॥

७-बचाव की दो सूरतें हैं, और यह ऊपर प्रीत और प्रतीत यानी भक्ती और अभ्यास हर एक शख़्स के मुनहसिर हैं यानी जिस दरजे की भक्ती जिस शख़्स की होगी, उसी क़दर बचाव उसका दोनों सूरतों में हो सक्ता है ॥

८-पहिली सूरत यह है कि सख़्त और भारी मुसीबतें उस पर बिल्कुल न आवें या बहुत कम आवें, और उसमें भी दया की मदद शामिल रहे ॥

९-दूसरी सूरत यह है कि चाहे किसी क़िसम की तकलीफ़ या मुसीबत आवे, और ज़ाहरा उस पर

गुज़रती मालूम भी होवे लेकिन उसके अंतर में उसका असर बहुत कम होवे या बिल्कुल न होवे, यानी अंतर में प्रेम और दया और मेहर की धारा उसको शान्ती और ताक़त बरदाश्त की देती रहे ॥

१०–सिवाय सत्तपुर्ष राधास्वामी दयाल के जो इस लोक में संत सतगुरु रूप धारन करके प्रघट हुये, और भी उनकी जुगत के और कोई इलाज काटने करमों, और दूर करने या घटाने मुसीबतों का क़ितई नहीं है, और न किसी दूसरे मत में उस जुगत का ज़िकर या इशारा है ॥

११–जो कुछ जतन या तदबीरें वास्ते दूर करने या घटाने बाज़ तकलीफ़ों के जीव अमल में लाते हैं, वह मामूली और दुनियावी हैं, और किसी २ मुआमले में और किसी २ वक़्त थोड़ा बहुत फ़ायदा भी देती हैं, लेकिन बहुत सी जगह वह तदबीरें कुछ काम नहीं आती हैं ॥

१२–राधास्वामी मत के मुवाफ़िक़ बहुत से करम सतसंग और अभ्यास करके काटे और ढीले किये जा सक्ते हैं, और बाज़े मेहर और दया से कमज़ोर हो जाते हैं, यानी उनका असर कम ब्यापता है ॥

१३–यह क़ैफ़ियत दया और मेहर की सतसंगी जीव की मौत के वक़्त बहुत साफ़ नज़र आती है, यानी

करमों का असर कम ब्यापता दिखलाई देता है, और मेहर और दया का भारी असर प्रघट नज़र आता है, कि जिस्से जीव देह छोड़ने के वक़्त निहायत मगन और मसरूर हो जाता है, और उस ख़ुशी का निशान उसके चेहरे पर साफ़ दिखलाई देता है ॥

१४–जो कोई इस बात की प्रतीत न करे तो उसको समझना चाहिये, कि जिस क़दर दुख सुख देह और दुनिया का है, वह जीव को बसबब उसके बंधन के ब्यापता है। और बंधन देह और दुनिया के साथ जाग्रत अवस्था में सुरत के आंख के मुक़ाम पर नशिस्त[१] होने से पैदा होता है। जिस किसी को जुगत और तरकीब सुरत को आंख के मुक़ाम से सरकाने की मालूम है, वह जिस क़दर उसका अभ्यास है, उसी क़दर सुरत को हटा कर और चरनों में लगा कर, देह और दुनियां के दुख सुख से अपना बचाव कर सक्ता है ॥

१५–यह बात साफ़ ज़ाहर है कि सुपन और सुषोपति अवस्था में, किसी को देह और दुनिया का दुख सुख नहीं ब्यापता। यह ख़राबी सिर्फ़ जाग्रत अवस्था में है, सो उसके दूर करने का जतन संतों ने यही फ़रमाया है, कि जैसे बने मन और सुरत को शब्द और

[१] बैठक।

सरूप में लगाकर जाग्रत के मुक़ाम से हटाओ। और यह जुगत सुरत को हटाने और सरकाने की निज घर की तरफ़ और किसी मत में सिवाय राधास्वामी संगत के जारी नहीं है। फिर ज़ाहर है कि जो कोई राधास्वामी मत में शामिल होकर, और सच्चे मन से प्रीत और प्रतीत के साथ, सुरत शब्द मारग का अभ्यास शुरू करेगा, वही एक दिन हर क़िसम की तकलीफ़ और मुसीबत, बल्कि मौत की सख़ती से, बचकर अपने निज घर में, जो कि कुल्ल मालिक राधास्वामी दयाल का धाम, और अमर और परम आनंद का अस्थान है, पहुंच कर हमेशा को महा सुखी हो जावेगा॥

१६–और मालूम होवे कि राधास्वामी दयाल अपने बच्चों की, जो सच्चे होकर उनकी सरन में आये हैं, और जिस क़दर बनता है सुरत शब्द मारग का अभ्यास भी कर रहे हैं, अनेक तरह से ख़लासी और छुटकारा काल और माया के जाल से फ़रमाते हैं। यानी अंतर और बाहर सतसंग कराके उनके अगले पिछले करमों का काटना शुरू करते हैं, ताकि जल्दी सफ़ाई होकर सुरत क़ाबिल अपने घर की तरफ़ जाने के हो जावे। और यह करम कटने के वक़्त, कोई २ अंतर में अभ्यास वग़ैरे के वक़्त, और कोई २ बाहर

भक्ती अंग में बरताव के वक़्त, या ब्योहारी और रोज़गारी कारोबार के इजराय में अपना फल देते हैं, लेकिन राधास्वामी दयाल की दया हमेशा संग रहती है। और जिस क़द्र और जिस तरह रक्षा और सम्हाल के साथ करमों का भुक्तवाना मंजूर है, उसी मुवाफ़िक़ कार्रवाई अंतर और बाहर मौज से जारी होती है ॥

१७—जिस किसी के जैसे करम हैं उस मुवाफ़िक़ दुख सुख भी ज़रूर थोड़ा बहुत व्यापता है, और मन में ख़ौफ़ और घबराहट भी पैदा होती है, लेकिन नतीजा उसका मसलहत से ख़ाली नहीं होता, यानी उन करमों के भोग में जो चिन्ता और फ़िक्र और ख़ौफ़ या तकलीफ़ थोड़ी बहुत मन और तन पर गुज़रती है, वह किसी क़दर सफ़ाई और सिमटाव या चढ़ाई मन और सुरत का, या टूटने या ढीले होने कोई २ बंधन का, और उदासीनता पैदा होने का, संसार और उसके पदार्थों से, फ़ायदा देता है ॥

१८—इस तरह पर बहुत से करम जो आगे जनम देकर अपना भोग देते, वे संत सतगुरु और राधास्वामी दयाल की मेहर से, एकही जनम बल्कि कुछ थोड़े ही अर्से में अपना सूक्षम फल देकर साफ़ हो जाते हैं। यह बात बग़ैर ख़ास दया और मेहर के हासिल नहीं

हो सक्ती, यानी मेहरी जीवों में भी जो ख़ास हैं, उनके वास्ते ऐसी जल्दी की जाती है, और बाक़ी का हिसाब आहिस्ते २ जिस क़दर उनकी ताक़त बरदाश्त की देखी जाय, और जैसी उनकी हालत और संगत और रहनी वग़ैरा होवें, उसके मुवाफ़िक़ तै किया जाता है ॥

१९—सब जीवों को जो राधास्वामी दयाल की सरन में आये हैं, इस बात का यक़ीन करना चाहिये, कि वे अति दया करके सब के अगले पिछले करम आहिस्ते २ या जल्द जैसा मुनासिब होगा काटकर एक दिन निर्मल करके निज घर में पहुंचावेंगे ॥

२०—और मालूम होवे कि जिस वक्त़ राधास्वामी दयाल किसी जीव के करम काटते हैं, या उसकी सफ़ाई करते हैं, तो जीव को ऐसा नहीं मालूम होता कि उस की सफ़ाई हो रही है, बल्कि दोनों मुआमलों में चाहे दुनिया का होवे या परमार्थ का, उसको ऐसा नज़र आता है, कि कुछ ख़राबी हो रही है या होनेवाली है। बल्कि मामूली तौर व क़ायदे के मुवाफ़िक़ से भी कार्रवाई कुछ नाक़िस व अबतर मालूम होती है, इस वजः से घबराहट और परेशानी ज़्यादा होती है, और दया और मेहर और रक्षा का हाथ बिल्कुल नज़र नहीं आता, या ऐसा मालूम होता है कि समर्थ धनी

राधास्वामी दयाल, इस वक्त में मुतलक़ तवज्जः नहीं फ़रमाते हैं। कहीं थोड़े अर्से बाद जबकि वह कार्रवाई ख़तम हो जाती है, या क़रीब खतम के होती है, अक्सर जीव को साफ़ मालूम होता है, कि शुरू से अख़ीर तक जो कुछ कि हुआ, और जैसा कुछ कि नतीजा निकला ऐन दया और मेहर से हुआ, और उसी में उसका फ़ायदा था ॥

२१–कभी २ ऐसा भी होता है कि जीव को राधास्वामी दयाल के दया की कार्रवाई की ख़बर भी नहीं होती और वह अपने मन में ऐसा समझता है, कि उस पर हर तरफ़ से सख़्ती हो रही है, और उसकी बेहतरी के वास्ते राधास्वामी दयाल कुछ तवज्जः नहीं फ़रमाते। बल्कि परमार्थी कार्रवाई में भी कि जिसके वास्ते वह शौक के साथ तड़प रहा है, कुछ मदद या तरक़्क़ी नहीं देते, लेकिन असल में और ही हाल है, यानी हर तरह से परमार्थी कार्रवाई बढ़ा रहे हैं, और अनेक रीति से सफ़ाई कर रहे हैं, और जीव को उसका भेद और हाल जताना मुनासिब नहीं समझते हैं। हर मुआमले में उनकी समलहत वेही ख़ूब जानते हैं, जीव की ताक़त नहीं कि उसको फ़ौरन समझ सके, अलबत्ता कुछ अर्से गुज़रने के बाद कुछ २ या थोड़ी समझ समझाये से आ सक्ती है ॥

२२—हर हालत में सच्चे सतसंगी और सतसंगन पर फ़र्ज़ है, कि जब कुल मालिक राधास्वामी दयाल को सर्व समर्थ और अंतरजामी और अपना मुरब्बी और सतगुरु और मालिक क़रार दिया है, तो चाहे सख़्ती होवे चाहे नरमी, या तकलीफ़ होवे या आराम, इस मुआमले में करता धरता उन्हीं को समझे और माने। और जब उस हालत की पूरी २ बरदाश्त न होवे, तो उन्हीं के चरनों में प्रार्थना वास्ते प्राप्ती दया और ताक़त बरदाश्त के करे, और फ़ौरन् जवाब न मांगे, कुछ देर इन्तज़ार करे, तब उस को दया की ख़बर थोड़ी बहुत ज़रूर पड़ेगी॥

२३—जो किसी वक़्त में ख़ातिरख़्वाह यानी जीव की मांग के मुवाफ़िक़ दया होती मालूम न पड़े, और कोई दिन सख़्ती और तकलीफ़ जारी रहे, तो भी समझना चाहिये, कि फ़िलहाल ऐसी ही मौज राधास्वामी दयाल की है, और उसके साथ जैसे बने वैसे मुवाफ़क़त करे, मगर ऐसी सूरत में राधास्वामी दयाल थोड़ी बहुत ताक़त बरदाश्त की ज़रूर बख़्शेंगे, और सख़्ती और तकलीफ़ में कुछ कमी भी ज़रूर होगी॥

२४—सख़्ती और तकलीफ़ में बचाव की सूरत सिवाय राधास्वामी दयाल के चरनों के और नहीं है, सो

जीवों को मुनासिब और लाज़िम है, कि अंतर और बाहर उनके चरनों की तरफ़ भागें और ओट लेवें तो थोड़ा बहुत सहारा ज़रूर मिलेगा ॥

२५—इस मुक़ाम पर एक बात का याद दिलाना सब सतसंगी और सतसंगनों को मुनासिब मालूम होता है, और वह यह है कि जब वे मुवाफ़िक़ क़ायदे भक्ती के तन मन और धन जिस क़दर जिस्से बन सका, कुल मालिक राधास्वामी दयाल के चरनों में अर्पन कर चुके, फिर इनके ज़ाहरी या असली घाटे और बाढ़े में, किसी क़िसम की शिकायत दुरुस्त और सही नहीं हो सक्ती है। लेकिन जो कि इस ज़माने में जीव निहायत निबल, और नादारी और दुनिया के बखेड़ों के सबब से सख़्त लाचार हैं, इस वास्ते जो कुछ वे शिकायत करें, या मांग मांगें वह रवा रक्खी गई है। पर इस क़दर अहतियात चाहिये, कि जो किसी मुआमले में उनकी मरज़ी के मुवाफ़िक़ कार्रवाई न होवे, तो अपने मालिक राधास्वामी दयाल से बेमुख और बे ऐतक़ाद न हो जावें। और जब कि दुनिया के लोग सख़्ती और तकलीफ़ की जैसे बने रो पीट कर बरदाश्त और सबर करते हैं, तो सब सतसंगियों पर भी फ़र्ज़ है, कि अपने मालिक की मौज समझ कर,

जिस क़दर बने उसकी दया का बल लेकर, उसके साथ मुवाफ़क़त यानी उसकी बरदाश्त करें। और वास्ते आइंदह के ख़ास दया और मेहर के उम्मेदवार रहें, क्योंकि सख़्ती के बाद ज़रूर कुछ नरमी होती है, जैसा कि इस कड़ी में कहा है॥

॥ दोहा ॥

दया भली न असाध की भली संत की त्रास।
जो सूरज गरमी करै तो घन बरसन की आस॥

और राधास्वामी दयाल ने फ़रमाया है, कि संतों के क्रोध में भी दात है, और मूर्खों की दया में भी घात है॥

बचन ३

जब तक संसारी स्वभाव और बिकारी अंग मन के घटाये न जावेंगे, तब तक चढ़ाई और ऊंचे देश में ठहरना मुमकिन नहीं है, इस वास्ते परमार्थी को चाहिये कि सूरमाओं की तरह दया का बल लेकर, मन और उसके दूतों और इंद्रियों से

जूझ कर, मलीन तरंगों को रोके और दूर करे, तब रन जीतकर अपने निज अस्थान में पहुंचेगा और सुरत वहां से न्यारी होकर सत्तपुर्ष राधास्वामी देश की तरफ़ चलेगी ॥

१–जो कि जीव वक्त पैदायश से और जब तक कि उनको सतसंग में शामिल होने का मौक़ा मिले, संसारियों के संग में परवरिश पाते हैं, और उन्हीं के साथ रोज़ानह बर्ताव और व्यौहार वर्तते हैं, इस सबब से उनमें संसारी आदतें और ख़्वाहशें भरी रहती हैं, और उन्हीं के मुवाफ़िक़ उनका चालचलन और ख़ियालात और सोच और बिचार होता है ॥

२–यह संसारी स्वभाव और व्यौहार खुद मतलबी से भरा हुआ रहता है, यानी हर एक शख़्स सिवाय अपने मतलब के दूसरे का कुछ ख्याल नहीं करता, और जैसे बने वैसे अपना मतलब बनाता है, चाहे उसमें दूसरे का नुक़सान हो या फ़ायदा ॥

३–जितने करम कि संसारी लोग करते हैं, उनमें से बाज़े ज़रूरी और बहुत से फ़जूल हिर्स करके करते हैं, और निहायत अहंकार अपना उनके करने में ज़ाहिर

करते हैं, और बहुत जल्द मतलब के पूरे होने या न होने पर दुखी सुखी हो जाते हैं ॥

४—यह लोग अपने मन के हाल और चाल से बेख़बर रहते हैं, और दूसरे की कसर जताने को या उस पर तान मारने को तइयार रहते हैं, और ज़रासी बात पर बे समझे बूझे जल्द गुस्से में भर आते हैं, और शिकवा और शिकायत करने लगते हैं ॥

५—किसी की निंद्या और किसी की अस्तुत करना संसारियों का स्वभाव है, और यह कार्रवाई अक्सर बे तहक़ीक़ात और बिना विचारे हुआ करती है, और किसी के हर्ज और नुक़सान का, जो उनकी निंद्या और अस्तुत से पैदा होवे, ज़रा भी ख़्याल नहीं करते ॥

६—एक भारी ऐब संसारी मर्द और औरतों में यह है, कि चाहे कोई उनके सामने किसी की कैसी ही बुराई या बदनामी करे, तो उस पर फ़ौरन यक़ीन ले आवें, और उस अपने यक़ीन के मुवाफ़िक़ थोड़ी बहुत कार्रवाई शुरू कर देते हैं, और बग़ैर तहक़ीक़ात के उस बुराई की बात को, हर एक के सामने ज़ाहिर करने में कुछ दरेग़ नहीं करते, जो कोई उस बात को ना दुरुस्त या झूठा बतलावे, तो उसके कहने को जल्दी सही नहीं मानते ॥

७–एक दूसरे की ईर्षा करना और उसकी बड़ाई और तरक़्क़ी को देखकर हसद करना यह भी संसारियों का ख़ास स्वभाव है, चाहे कोई अपना ख़ास अज़ीज़ या रिश्तेदार होवे, बल्कि जहां मुहब्बत और रिश्ता है, वहां ईर्षा और भीतरी अनदेखनापन ज़्यादा होता है, और उसकी चाल ढाल पर चाहे वह दुरुस्त ही होवे ज़रूर तान और तंज़ करके कुछ न कुछ ऐब और बुराई निकालें। ख़ुलासा यह है कि अपने से बढ़ कर किसी को ख़ुशी के साथ देख नहीं सक्ते ॥

८–संसारी जीवों में यह भी स्वभाव ज़बर रहता है, कि ज़रा सी तकलीफ़ और सख़्ती में घबरा कर शिकायत मालिक की और जीवों की करने लगते हैं। क्षिमा और बरदाश्त बहुत कम रखते हैं, और जो तदबीर उस तकलीफ़ के दूर होने के वास्ते कोई शख़्स बतलावें, उसको फ़ौरन करने को तइयार होते हैं, चाहे वह दीन और दुनिया के क़ायदे के मुवाफ़िक़ दुरुस्त होवे या नहीं ॥

९–संसारियों का पूरा बिस्वास और ऐतक़ाद किसी में नहीं होता, जब तक काम निकले जाय तब तक यक़ीन दुरुस्त रहता है, और जब किसी काम में ख़लल पड़े तबही एतक़ाद जाता रहता है, मगर कहीं २ ख़ौफ़ के सबब से निभाते रहते हैं ॥

१०–अपने बचाव और अपने मतलब के हासिल करने के वास्ते झूंठ बोलने में दरेग़ नहीं करते और जिस किसी से अदावत या बरख़िलाफ़ी हो जावे, तो उस पर झूंठा इलज़ाम या तान लगाना, या किसी तरह से उसकी बदनामी कराने में ख़ौफ़ नहीं करते, मगर यह बात आम नहीं है। आला दरजे के यानी उत्तम लोग ऐसी कार्रवाई नहीं करते, और औसत दरजे वाले भी अक्सर ख़ौफ़ करते हैं॥

११–जिस सतसंग में मालिक और उसके प्रेम की महिमा या भेद का वर्णन होवे, संसारियों का मन कम लगता है, लेकिन जहां क़िस्से और कहानी और लड़ाई और झगड़ों की कथा होवे, उसको बहुत ख़ुशी से सुनते हैं॥

१२–सच्चे परमार्थ में पैसा ख़र्च करना नहीं चाहते, मगर जब कभी तकलीफ़ होवे, या दिखावे और शुहरत की चाह या कुछ मतलब होवे, तो वहां ख़ुशी के साथ ख़र्च करते हैं॥

१३–पाखंडी परमार्थियों की महिमा जो कि अनेक तरह के स्वांग बनाकर, और अपनी देह को तकलीफ़ देते हैं; बहुत जल्द चित्त में समाती है, और वहा उमंग के साथ दर्शन और सेवा करते हैं, लेकिन सच्चे पर-

मार्थियों के संग में उनका मन नहीं लगता और न उन पर भाव आता है ॥

१४-यह थोड़ा सा हाल संसारी जीवों के स्वभाव और आदत का (जो संसारियों के संग से पैदा होते हैं) लिखा गया है। जो संतों का सतसंग भाग से मिल जावे, तो यह स्वभाव बहुत जल्द दूर होकर, सच्चे भक्त और प्रेमी जन के मुवाफ़िक़ बर्तावा जारी होना मुमकिन है ॥

१५-बग़ैर संतों और अंतर मुख अभ्यासियों के सतसंग के, संसारी स्वभाव और आदतों का बदलना मुमकिन नहीं है ॥

इस वास्ते हर एक शख़्स को जो अपने जीव का सच्चा कल्यान चाहे मुनासिब है, कि संतों या उनके प्रेमी जन का सतसंग तलाश करके उसमें शामिल होवे और उनकी दया लेकर अपना भाग बढ़ावे, यानी बचन चित्त से सुनकर और उनका मनन करके, थोड़ी बहुत करनी उनके मुवाफ़िक़ करना शुरू कर दे, और उपदेश लेकर अंतर अभ्यास भी जारी कर दे, तो आहिस्ते आहिस्ते सफ़ाई होती जावेगी, और कुल्ल मालिक के चरनों का प्रेम हिरदे में पैदा होता जावेगा ॥

१६-मालूम होवे कि बिना बाहर के सतसंग के संसै

और भरम किसी के दूर नहीं हो सक्ते, और न मोटे बंधन जगत के कट सक्ते हैं, और न संसार और संसारियों की प्रीत घट सक्ती है ॥

१७–जिस किसी को दुनिया का हाल वक्त पैदायश से मौत तक देखकर, कुछ सोच और विचार मन में आया है, और सच्चा फ़िकर अपने जीव के कल्यान का पैदा हुआ है, वह शख़्स सतसंग के बचनों को बड़ी तवज्जै के साथ सुनेगा, और अपने मन के हाल को उनसे मिलाकर फ़ौरन फ़ज़ूल और नामाकूल स्वभाव और बंधन को दूर करेगा। और इसी तरह अन्तर और बाहर की सफ़ाई हासिल करने के लिये कोशिश करेगा ॥

१८–जब कि सतसंग करके संत सतगुरु और मालिक के चरनों का थोड़ा बहुत प्रेम हिरदे में जागना शुरू होगा, उस वक़्त अंतर अभ्यास सुरत शब्द मारग का थोड़ा बहुत दुरुस्ती से बन पड़ेगा, और दया के परचे पाकर प्रीत और प्रतीत चरनों में बढ़ेगी ॥

१९–फिर ऐसे सतसंगी की नज़र में दुनिया और उसका सामान और भोग बिलास ओछे नज़र आवेंगे, और दिन २ उनकी तरफ़ से तवज्जः हटकर, परमार्थ की महिमा चित्त में ज़्यादा से ज़्यादा समाती जावेगी ॥

२०–उस वक़्त ऐसे सतसंगी का मन दया और मेहर का बल लेकर, बिघन कारक स्वभाव और तरंगों से जूझकर उनको दूर हटावेगा, या उनका ज़ोर इस क़दर घटावेगा, कि फिर वह उसके अभ्यास में ख़लल न डालें ॥

२१–ऐसे सतसंगी पर मेहर और दया संत सतगुरु और कुल मालिक राधास्वामी दयाल की दिन २ बढ़ती जावेगी, और उसके साथ ही प्रीत और प्रतीत भी उसके हिरदे में नित प्रति बढ़ती जावेगी ॥

२२–जीव की ताक़त नहीं है कि काल और करम और मन और माया से मुक़ाबला कर सके, लेकिन संत सतगुरु और कुल मालिक राधास्वामी दयाल की दया का बल लेकर उनको हटा सक्ता है। फिर जिस प्रेमी जन पर ऐसी दया और मेहर है, वही एक दिन माया की हद्द को तै करके, निज धाम में बासा पावेगा, और वहां हमेशा को सुखी हो जावेगा ॥

बचन ४

राधास्वामी मत के सतसंगी को अपने उद्धार की निसबत, किसी तरह का शक और संदेह नहीं करना चाहिये। राधास्वामी दयाल अपनी मेहर से सब कारज उसका दुरुस्त बनावेंगे ॥

१—जिस किसी ने कि राधास्वामी मत धारन किया है, और उपदेश लेकर सुरत शब्द मारग का अभ्यास कर रहा है, उसको निसबत अपने पूरे उद्धार के किसी वक्त और किसी हालत में किसी तरह का शक और संदेह मन में नहीं लाना चाहिये, और न किसी सबब से अपने मन में निरास होना चाहिये ॥

२—राधास्वामी दयाल की ऐसी दया और मौज है, कि जो कोई उनकी सरन में आया है और सच्चे मन से उनके चरन वास्ते अपने जीव के कल्यान के पकड़े हैं, उसकी वे हर तरह से सम्हाल और ख़बरगीरी आप करते हैं। और जिस क़दर भक्ती और भजन उस्से बन पड़े, उतने ही को मंजूर और क़बूल फ़रमा

कर अपनी दया की बख़्शिश फ़रमाते हैं. यानी अख़ीर वक़्त पर उसकी सुरत की सम्हाल आप करते हैं, और अपने दर्शन देकर और शब्द सुनाकर, सहज में उसकी सुरत को पिंड से न्यारा करके, ऊंचे देश और सुख अस्थान में बासा देते हैं। और फिर आइंदा मुवाफ़िक़ ज़रूरत के, एक दो या तीन बार संग सतगुरु के नरदेही में लाकर और बाक़ी करनी करा कर निज अस्थान में पहुंचाते हैं॥

३-हर चंद कुल मालिक राधास्वामी दयाल ने कई बार अपने मुख से ऐसा बचन फ़रमाया (और वह कई जगह बानी में लिखा हुआ मौजूद है) कि जो जीव हमारी सरन में आया है, या सच्चे मन से दीन अधीन हुआ है, या जिसने प्रेम के साथ सतसंग और अभ्यास किया है, और हमने प्रशन्न होकर उसको अपनाया है, इन सब जीवों का फ़िक्र और ख्याल हम आप रखते है, और उनसे जैसी और जिस क़दर करनी बन पड़े करा कर सुख अस्थान में और फिर एक दिन उनको निज धाम में पहुंचावेंगे॥

४-लेकिन मन का ऐसा स्वभाव है कि जब इससे करनी मुवाफ़िक़ हुकम के न बन पड़े, या तरंगें बिकारी और फ़ज़ूल उठाता रहे, तो फ़ौरन् शक और संदेह अपने उद्धार की निसबत ख़ातिर में लाकर दुखी हो

जाता है और डर जाता है, कि ऐसी सूरत में सतगुरु राधास्वामी दयाल उसका उद्धार कैसे करेंगे। और जब अक्सर मन की ऐसी हालत होती रहती है, और जीव का बल वास्ते उसकी सम्हाल के पेश नहीं जाता, तब किसी क़दर निरासता चित्त में आ जाती है और ऐसा ख़्याल पैदा होता है, कि जब मन में ऐसी नापाकी धरी हुई है, और जब तब संसार और उसके भोगों की तरफ़ झोके खाता है, और रोकने से नहीं रुकता, तो वह कैसे क़ाबिल बासा पाने के ऊंचे और शुद्ध अस्थान में हो सक्ता है॥

५-ऐसी हालत में चाहे जिस क़दर बचन तसल्ली और दिलासा के सुनाये और समझाये जावें, लेकिन जब तक कि किसी क़दर दुरुस्ती अपने मन की नज़र न आवे, या दया ख़ास की वजह से अभ्यास में दुरुस्ती या कुछ तरक़्क़ी मालूम न पड़े, तब तक मन को तसल्ली और संतोष नहीं होता और उसकी हालत सुस्ती और उदासीनता या निरास्ता की नहीं बदलती॥

६-जब जीव अपनी कसरों को निहारता है, और जिस क़दर इसका बल है उस क़दर कोशिश भी वास्ते दूर करने उनके करता है, फिर भी वह कसरें बदस्तूर क़ायम रहती हैं, तब यह जीव लाचार होकर दया

मांगता है, और जो वह दया फ़ौरन् प्राप्त न हुई तो निरास हो जाता है ॥

७—लेकिन यह मुक़ाम ग़ौर का है, कि जिस क़दर कसरें और बिकारी तरंगें मन में पैदा होती हैं या धरी हैं, उन सब की जड़ संसारी भोगों की वासना है, जो कि गुप्त या प्रघट मन में बसी हुई है। इस वास्ते जो ऐसे जीव पर पहिले दया की जावेगी, वह वास्ते दूर करने या पूरा करके निकालने बासना के होगी, और जब बासना की सफ़ाई हो लेगी, तब कुछ अंतर में, अभ्यास की दुरुस्ती या सफ़ाई या तरक़्क़ी नज़र आवेगी। इस सबब से इस क़िसम के सतसंगी जब वे प्रार्थना करते हैं, और उन पर दया भी होती है मगर उस दया की उनको परख नहीं होती, और वे बेफ़ायदा अपनी अनसमझता से दुखी या निरास होते हैं॥

८—बासना की पहिचान बड़ी कठिन है। यह इस क़दर झीनी होती है, और अंतर के अंतर से वक़्तन् फ़वक़्तन् इकबारगी जैसे बिजली चमकती है पैदा हो जाती है। सिवाय ऐसे सतसंगी के जो हर वक़्त अपने मन और इंद्रियों की निगरानी और चौकीदरी करता है, दूसरे की ताक़त नहीं कि उसके उत्थान को मालूम कर सके या रोक लगा सके, बल्कि इस दरजे के सत-

संगी को भी बाज़ी दफ़े तरंग की ख़बर भी नही होती। सबब इसका यही है कि जब तक मन में बारीक से बारीक भी ख़्वाहश किसी भोग की है, तब तक मन और बुद्धी दोनों उस भोग की तरंग के उठते ही, उसमें आशक्त होकर बेख़बर हो जाते हैं, और उस तरंग का रस लेने को उसके संग लिपट जाते हैं॥

९-इस वास्ते जब तक कि पूरी २ या किसी दरजे तक की सफ़ाई अंतर में नहीं होगी, यानी चित्त संसारी भोग और इंद्रियों के विषयों की तरफ़ से, उनको विघन कारक और अपने भक्ती और अभ्यास की तरक़्क़ी का विरोधी समझ कर थोड़ी बहुत नफ़रत नहीं करेगा, तब तक वासना और उसके साथ तरंगें नहीं घटेंगी, और मन और इन्द्री ऐसी तरंगों के साथ लिपट कर बहते रहेंगे, और अभ्यास में ख़लल डालेंगे और जो अभ्यासी होशियार नहीं है, तो उसको ऐसी हालत अपने मन और इन्द्रियों के बहने की ख़बर भी नहीं पड़ेगी, और वह ऐसा ख्याल करेगा कि मैंने इतनी देर तक बराबर भजन या ध्यान किया। और जो अभ्यासी होशियार है तो वह तरंगों को उठतेही रोकेगा और हटावेगा, लेकिन फिर भी ख़ौफ़ रहेगा, कि बाज़ी २ तरंग के साथ उसका मन भी बहजावे, और कुछ देर तक ख़बर न पड़े और होश न आवे॥

१०-ऐसे सतसंगी कम हैं कि जो अपने मन और इन्द्रियों की निगरानी और चौकीदारी कर सक्ते हैं, और यह अभ्यास भी कुछ आसान नहीं है, यानी कोई अर्से की मश्क़ से यह ताक़त थोड़ी बहुत हासिल होगी, फिर भी पूरी ताक़त आने को अर्सा चाहिये ॥

११-सच्चे परमार्थी को जिसको अपने जीव के कल्यान का दिल से फ़िकर लगा है, मुनासिब है कि सतसंग के वक्त निहायत चेतकर बचन सुने, और उसी वक्त अपनी हालत से मिलान करता जावे, और बाक़ी वक्त जिस क़दर मुमकिन होवे, अपने मन की वासना और तरंगों की निगाह रक्खे, कि आया वह मुनासिब हैं या नामुनासिब। और जो नामुनासिब हैं तो उनको बिघन कारक समझ कर, फ़ौरन उठते ही रोके, और तरंग की धारा को बहने न देवे, तो अलबत्ता कोई अर्से में मन और इन्द्रियों के सम्हाल की ताक़त किसी क़दर हासिल होना मुमकिन है। यह काम सतसंग के बचनों का असर और नाम और स्वरूप के अभ्यास यानी सुमिरन और ध्यान का बल लेकर दुरुस्ती से बनना मुमकिन है ॥

१२-लेकिन ज़्यादा तर दुरुस्ती से यह काम यानी तरंगों का रोकना जब बन पड़ेगा, जब कि मन में

भोगों की तरफ़ से किसी क़दर बैराग और नामुनासिब बर्ताव का ख़ौफ़ होगा। नहीं तो चौकीदार आप चोर से मिलकर चोरी करावेगा, यानी मन और बुद्धी की जिस भोग की तरंग में आशक्ती है, लिपट कर चेतन धारा को माया की लहरों के साथ बहावेंगे ॥

१३–इस जगह पर यह कहना ज़रूर मालूम होता है, कि मन और इन्द्रियों की सफ़ाई और समझ बूझ और बुद्धी की होशियारी बग़ैर कोई दिन चेतकर सत- संग करने के हासिल नहीं हो सक्ती। क्योंकि बग़ैर सतसंग के किसी सतसंगी को, इस बात की ख़बर भी अच्छी तरह नहीं हो सक्ती, कि उस पर परमार्थ में क्या क्या फ़र्ज़ हैं, और कैसे २ उसको परमार्थी यानी भक्ती के मुआमले में बर्ताव करना चाहिये, और किस क़दर संसार और उसके सामान से मोह और बंधन तोड़ना या ढीला करना चाहिये, तब सतसंग और अंतर अभ्यास का असर दुरुस्ती से नज़र आवे ॥

१४–जो सतसंगी तेज़फ़हम और बिचारवान और रोशन अक़्लवाले हैं, वे थोड़े दिन सतसंग करके और परमार्थ की रीत बख़ूबी समझ कर, बानी और बचन को होशियारी से नेम के साथ रोज़ानह पढ़कर, थोड़ा बहुत सतसंग के मुवाफ़िक़ फ़ायदा उठा सक्ते हैं, यानी

अपने मन और इन्द्रियों की सफ़ाई, और बासना और तरंगों के रोकने की मश्क़, अपने मकान पर रह कर कर सक्ते हैं। और ऐसों के संग से और सतसंगी कम दरजेवाले भी फ़ायदा उठा सक्ते हैं॥

१५–जिस किसी के दिल में सच्चा शौक़ हासिल करने सच्चा परमार्थ और दर्शन कुल मालिक राधास्वामी दयाल का है, उसकी तबीअ़त में संसार और उसके भोगों की तरफ़ से किसी क़दर नफ़रत या उदासीनता ज़रूर आवेगी। और यह दोनों यानी चरनों में अनुराग और संसार से बैराग सहज में उसके परमार्थ का कारज बनाते जावेंगे और संत सतगुरु का दर्शन और भी उनकी मेहर और दया उसको प्राप्त होवेगी॥

१६–बड़ा भारी फ़ायदा सतसंग का यह है, कि वहां परमार्थी जीव हर एक दरजे के प्रेमियों की समझ बूझ और रहनी और बर्ताव देखकर सहज में उनके साथ मिलकर भक्ती के अंगों में बर्त सक्ता है। और अभ्यास भी थोड़ा बहुत दुरुस्ती से कर सक्ता है, यानी उसके मन और इन्द्रियों की गढ़त और समझ बूझ, और करनी और रहनी की दुरुस्ती जल्द और सहज में होती चली जाती हैं॥

१७–कैसी ही कठिन सेवा होवे, या कोई मन और

इन्द्रियों के खिंचाव या रुकाव की हालत होवे, प्रेमियों के गोल में मिलकर परमार्थी आसानी के साथ उस सेवा और हालत में वर्त सक्ता है। ऐसे ही समझ बूझ और गिरिफ़्त यानी पकड़ भी प्रेमियों के संग से सहज में बदल सक्ती है यानी संसार का भाव और मोह कम, और परमार्थ की क़दर और चाह ज़्यादा, हो सक्ती है ॥

१८–इस वास्ते संग की महिमा बहुत भारी है, चाहे संसारी कार्रवाई होवे या परमार्थी, दोनों में संग की मदद से काम दुरुस्ती से बनता है। यानी संसारियों के संग से संसारी और परमार्थियों के संग से आदमी परमार्थी बन सक्ता है, और इसी तरह जब अन्तर में शब्द का अभ्यास करे, तो शब्द स्वरूपी सतगुरु से मिलकर आप भी शब्द स्वरूप हो जाता है ॥

१९–हर एक सतसंगी को चाहिये कि ऊपर के लिखे हुए वचन को विचार कर जब २ मौक़ा मिले, और चाहे थोड़े दिन के वास्ते होवे, सतसंग में शामिल होकर, और सच्चे परमार्थी और प्रेमियों की हालत देख कर अपनी समझ और हालत बदलावे। और जब सतसंग प्राप्त न होवे तब राधास्वामी दयाल के बानी और बचन और उनकी शरह और तफ़सील जो दूसरी

क़िताबों में मिसूल प्रेमपत्र वग़ैरह छापी हुई है, ग़ौर और तअम्मुल के साथ थोड़ा सा रोज़ानह पढ़कर, और अपनी हालत की जांच और सम्हाल उसके मुवाफ़िक़ करता रहे। इस तरह से भी सफ़ाई होवेगी, और राधास्वामी दयाल और संत सतगुरु की दया से प्रीत और प्रतीत बढ़ती जावेगी, और एक दिन कारज पूरा हो जावेगा॥

२०–जो किसी सतसंगी का चित्त बसबब न मिलने ख़ातिरख़्वाह रस और आनंद के अंतर में, कभी २ अपनी अनसमझता से दुखी होवे, तो कुछ मुज़ायका नहीं है। यह भिचाव मन का बिरह का जगानेवाला और किसी क़दर सफ़ाई करनेवाला है। कोई दिन या थोड़े अर्से ऐसी हालत रहेगी, और फिर मेहर और दया से कुछ रस और आनंद मिलकर मन किसी क़दर खिलेगा, और दया के परचे भी मिलेंगे, कि जिस्से नई प्रतीत और प्रीत जागेगी। इस क़िसम का चक्कर अभ्यासियों पर कभी २ आता रहता है॥

२१–कुल मालिक राधास्वामी सर्ब समर्थ हैं, और अपने बच्चों की हर वक़्त निगरानी और संम्हाल रखते हैं, वे कभी किसी को खाली नहीं रक्खेंगे। पर शर्त यह कि थोड़ी बहुत लगन या प्रीत उनके चरनों की,

सतसंगी के हिरदे में क़ायम होनी चाहिये, और सुमिरन ध्यान भजन और बानी का पाठ करके, थोड़ी बहुत याद उनकी हररोज़ह दिल से करता रहे और कभी उनके दरबार से निरास न होवे। क्योंकि जैसी दया और मेहर इस समय में जीवों पर करी है और कर रहे हैं, उसका वारपार नहीं है॥

२२–परमार्थी जीवों को चाहिये कि जिस क़दर अपनी निबलता और निकामता देखें, उसी क़दर समर्थ की सरन दृढ़ करें और चरन मज़बूत पकड़े। फिर उनके उद्धार में किसी तरह का शक नहीं रहेगा, और यह कैफ़ियत उनको खुद अपनी ज़िंदगी में थोड़ी बहुत मालूम हो जावेगी। और अख़ीर वक़्त की हालत और सतसंगियों की देखकर या सुनकर पूरा यक़ीन हो जावेगा, कि राधास्वामी दयाल हर तरह से उनकी सम्हाल और रक्षा वक़्त छोड़ने इस देह के फ़रमावेंगे॥

बचन ५

जो राधास्वामी दयाल की सरन में आया है, उसको मौज के साथ मुवाफ़िक़त करना मुनासिब और लाज़िम है, और प्रेमियों से प्रेम भाव और बाक़ी जीवों से दया भाव का बर्ताव चाहिये ॥

१-राधास्वामी दयाल कुल मालिक और सर्व समर्थ हैं। कुल्ल रचना उनके चरनों के आधार से ठहरी हुई है, यानी जो धार कि उनके चरनों से आती है, और जो कि सत्तलोक से निकसी है, उसी के आसरे दयाल देश और ब्रह्माण्ड की रचना की कार्रवाई हो रही है। और इसी तरह जो धारें कि त्रिकुटी और सहस दल कंवल से प्रघट हुई हैं, उनके द्वारे पिंडी रचना की कार्रवाई हो रही है। यह सब धारें आपस में एक दूसरे से मदद ले रही हैं, यानी ऊंचे की धार नीचे की धार को मदद दे रही है ॥

२-जब राधास्वामी दयाल वास्ते उद्धार जीवों के संत सतगुरु रूप धारन करके संसार में आवें, तब जैसी मौज जिन जीवों की निसबत होवे, उसी के मुवाफ़िक़

धुर से नीचे तक बर्ताव जारी होता है और जब अपनी खास अंस को संसार में, वास्ते उपकार जीवों के छोड़ें या भेजें तब भी जैसी मौज राधास्वामी दयाल की वास्ते फ़ायदे और उपकार जीवों के होवे, वह मौज बदस्तूर साबिक़ या उसी अंस के द्वारे धुर से नीचे तक जारी होती है। क्योंकि जैसी मौज राधास्वामी दयाल की होवे वही संत सतगुरु स्वरूप के द्वारे, और वही जाबजा रचना में यानी हर एक मुक़ाम से ज़ारी होगी, और उसमें किसी तरह की कमी बेशी नहीं हो सक्ती ॥

३—अब समझना चाहिये कि ऐसी सूरत में राधास्वामी मत के सतसंगी को मुनासिब और लाज़िम है, कि जैसी मौज जिस समय में जारी होवे, उसके साथ जैसे बने तैसे मुवाफ़क़त करे यानी जो सख़्त होवे तो उसके बरदाश्त की कोशिश करे, और जो बरदाश्त की पूरी ताक़त न देखे, तो चरनों में संत सतगुरु और राधास्वामी दयाल के प्रार्थना वास्ते कम व्यापने सख़्ती या हासिल होने ताक़त बरदाश्त के करे ॥

४—राधास्वामी मत के सतसंगी को ग़ौर से मुलाहज़ा करना चाहिये, कि बग़ैर मौज के साथ मुवाफ़क़त किये, चाहे ख़ुशी से होवे या ज़बर दस्ती, गुज़ारह नहीं

होगा। संसारी जीव रो पीट कर श्रौर बुद्धिवान समझ बूझ श्रौर विचार करके श्रौर प्रेमी जन अपने मालिक यानी भगवंत की मरज़ी श्रौर हुक्म समझ कर मुवा-फ़क़त करते हैं। बाज़े कच्चे भक्त शिकवा श्रौर शिकायत करने लगते हैं, लेकिन जब मौज की मसलहत समझ में श्राती है, तब अपने हाल पर शरमिंदा होकर प्रार्थना वास्ते माफ़ी क़सूर के करते हैं॥

५–मौज की मसलहत वक़्त पर नहीं जनाई जाती है, वरनह मुवाफ़क़त करने में कोई तकल्लुफ़ न होवे, लेकिन जब सतसंगी का फ़ायदा इसी तरह की कार्र-वाई में मंजूर होता है, तब वह मसलहत श्राइंदह किसी वक़्त मुनासिब पर जताई जाती है, श्रौर उसी वक़्त यह सतसंगी भी क़ाबिल उसके समझने के होता है॥

६–जब प्रेमी सतसंगी ऐसी श्रादत करेगा, कि हर काम में मौज को निहारता चले, श्रौर मौज श्रौर दया का ही श्रासरा श्रौर भरोसा रक्खे, श्रौर जो कुछ करे मौज के श्रासरे करे, श्रौर जो कुछ कि दुनियां में हो रहा है या होवे, उसको भी मौज का ही ज़हूरा समझे, तब इसके चित्त में रंज या गुस्सा या विरोध या शिकायत नहीं पैदा होगी। सिर्फ़ जब कि पूरी ताक़त बरदाश्त की न होगी, तो दया के वास्ते प्रार्थना करेगा, श्रौर मेहर से उसको ताक़त बरदाश्त की मिलेगी॥

७–जब प्रेमी सतसंगी का संत सतगुरु और राधास्वामी दयाल के चरनों में, इस तरह भाव और प्यार बराबर क़ायम रहेगा, तब प्रेमी सतसंगियों में भी इस की मुहब्बत बराबर रही आवेगी, और बाक़ी जीवों की हालत को, दया की नज़र से देखेगा ॥

८–जो सतसंगी कि ग्रहस्त आश्रम में है, उसके मन की हालत हमेशा बदलती रहती है, यानी कभी दुखी और कभी सुखी और कभी चिन्ता और फ़िकर में गिरिफ़ार रहता है, और यह दुख सुख और चिन्ता चाहे अपनी देह और माल और करम के सबब से होवे, या दूसरे अज़ीज़ और रिश्तेदार के करमों की वजै से आयद होवे। इन दोनों में थोड़ा सा फ़र्क़ रहेगा, लेकिन मौज पर क़ायम होना और उसके साथ मुवाफ़क़त करना बड़ा कठिन मालूम होता है। क्योंकि अपने ऊपर जो हालत गुज़रे, उसकी निसबत अपने स्वामी प्रीतम की मौज क़ायम कर सक्ता है, लेकिन दूसरे लोगों की निसबत जो भक्ती में नहीं आये हैं करम प्रधान रहेगा, यानी वे अपने अगले पिछले करमों का फल भोगते हैं, और उसमें कमी बेशी नही हो सक्ती यानी उनको अंतरी सहारा नहीं मिल सक्ता है॥

९–जो कोई पूरा परमार्थी है यानी जिसका प्रेम

और अभ्यास ज़बर है, वह सब हालतों में मौज को सही करता है, और सख़्ती और नरमी में चरनों की तरफ़ चित्त जोड़कर करमों के असर से किसी क़दर बचाव हासिल करता है। और जिस क़दर उसका मोह घरबार और कुटम्ब परवार में कम है, उसी क़दर इनके सबब से दुख सुख और चिंता भी उसको कम व्यापती है, लेकिन जिसकी परमार्थी हालत ऐसी ज़बर नहीं है, वह अलबत्ता थोड़ी देर के वास्ते झोके झकोले खा जाता है॥

१०-खुलासा यह है कि जीव हर तरह से निबल है, और अपनी ताक़त से जैसा कुछ कि भक्ती अंग का बर्ताव अंतर और बाहर चाहिये नहीं कर सक्ता। अलबत्ता संत सतगुरु और राधास्वामी दयाल की दया से सब काम इस्से दुरुस्त बन सक्ते हैं। सो जो कोई सच्चे मन से हर काम में संत सतगुरु और राधास्वामी दयाल की मौज और मेहर निहारता चलता है, और क्या ज़मानह हाल और क्या आइंदह की कार्रवाई में मेहर और दया का भरोसा रखता है, और अपनी ताक़त या अहंकार किसी काम में पेश नहीं करता, तो उसकी कुल कार्रवाई की सम्हाल और ख़बरगीरी संत सतगुरु और राधास्वामी दयाल आप करते हैं। और जो

किसी बात में क़सर रहे, या हर्ज और नुक़सान वाक़े होवे, वह भी उनकी मौज से समझना चाहिये, जिसकी मसलहत चाहे इसकी समझ में आवे या नहीं, मगर ज़रूर उसमें गढ़त मन की यानी तोड़ने मान और अहंकार और चाह बड़ाई की मंज़ूर होगी ॥

११–कुल मालिक राधास्वामी और संत सतगुरु दयाल हैं, और जीवों की निबलता और लाचारी की हालत से खूब वाक़िफ़ हैं। जिस क़दर जिस्से कार्रवाई परमार्थ की बनती है उतनी ही को मंज़ूर करके दया फ़रमाते हैं, और जीव को पूरे उद्धार के हासिल करने के वास्ते हर तरह से मदद देकर, एक दिन उसका काम पूरा बनाते हैं। इस वास्ते किसी जीव को अपनी कसरें या नाताक़ती देखकर, उनकी दया की तरफ़ से निरास नहीं होना चाहिये, बल्कि अपने को निबल देखकर, उनके चरन ज्यादा मज़बूती के साथ पकड़ना और सरन को ज्यादा दृढ़ करना चाहिये। वे ज़रूरत के वक़्त हमेशा इसकी सहायता करेंगे, और जब मुनासिब होगा, उसको उसकी कसर जताकर और अपने बल की मदद देकर, उस कसर को दूर करावेंगे ॥

१२–कुल मालिक राधास्वामी दयाल और संत सतगुरु के चरनों में प्रेम और निश्चय होने से, प्रेमी सतसंगी

के हिरदे में ज़रूर प्यार और भाव उन लोगों की तरफ़ आवेगा, जो राधास्वामी दयाल और संत सतगुरु की भक्ती में आये हैं, और उनके चरनों में दिन २ प्रीत और प्रतीत बढ़ाते हैं। यह लोग निज भाइयों से ज़्यादा प्यारे लगेंगे, और उनके संग से दिन २ प्रेम रस और भक्ती अंग की तरक़्क़ी होगी ॥

१३–प्रेमी परमार्थी कुल रचना में अपने प्रीतम राधास्वामी दयाल की अंसों को व्यापक और कार्रवाई करनेवाला देखता है, और चाहे उन अंसों की तवज्जै अपने अंसी राधास्वामी दयाल की तरफ़ आई है या नहीं, उसकी नज़र उनकी तरफ़ दया भाव की रहती है। यानी उनके साथ प्रीत और मेल तो नहीं कर सक्ता लेकिन उनकी हालत पर रहम करता है, और मदद देने को वास्ते उनके उद्धार के हमेशा तइयार रहता है, और उनसे किसी सूरत में विरोध या असली नुकसान पहुंचाने या ईज़ा देने का इरादह नहीं करता, चाहे वे अपनी अनसमझता से उसके साथ विरोध करें, और नुक़सान और तकलीफ़ भी पहुंचावें। अलबत्ता वह तरकीब कि जिस्से यह लोग राह रास्त पर आवें, और सच्चे मारग में लग जावें, ज़रूर अमल में लाता है, चाहे धमका कर या ख़ौफ़ दिला कर या कुछ चिन्ता

और फ़िकर पैदा करके, या कोई हर्ज और नुक़सान का डर दिखाकर वग़ैरह वग़ैरह ॥

१६–मालूम होवे कि परमार्थ यानी भक्ती मारग के जारी करने के वास्ते, किसी पर जब्र या ज़बर-दस्ती करना या बेजा ज़ोर डालना या किसी तरह का लालच देना, या फुसलाना और बहलाना या उसको नुक़सान देना, किसी सूरत में जायज़ और मुनासिब नहीं है। सिर्फ़ बचन सुनाना चाहिये, और जो नुक़-सान और तकलीफ़ें बसबब अटके और लिपटे रहने के संसार और उसके भोग बिलास में पैदा होती हैं, उनको जताकर होशियार करना मुनासिब है। जो कोई माने और शौक़ शामिल होने का भक्ती मारग में ज़ाहर करे उसको मदद देना और जो कोई न माने और हुज्जत और तकरार बेफ़ायदा करे, उस्से ज्यादा कुछ न कहना और चुप्प हो रहना चाहिये, और मुन्तज़िर मौज राधास्वामी दयाल और संत सतगुरु के रहना चाहिये ॥

बचन ६

मालिक के चरनों में प्रीत और प्रतीत करना और बढ़ाना, और दुनिया और उसके सामान और दुनियादारों से भाव और प्यार कम करना और घटाते जाना ॥

१–जो कि रचना का रचाव और ठहराव प्रेम यानी खैंच और बनाव शक्ती पर मुनहसिर है, इस वास्ते कुल कामों में प्रथम यही शक्ती प्रघट होकर काम देती है ॥

२–जब तक किसी का किसी तरफ़ झुकाव या लुभाव या बंधाव नहीं है, तब तक वह उस तरफ़ को कभी रुजू या मेल नहीं करता ॥

३–इसी तरह जब तक किसी की चाह या ख़्वाहिश किसी काम या चीज़ की नहीं होती है, तब तक उस्से जतन या मिहनत उस काम के पूरा करने या चीज़ के हासिल करने के लिये नहीं बनती ॥

४–ऐसे ही जहां दो चार या ज्यादा आदमियों का मेल मिलाप है, वह भी बग़ैर कुल्ल के झुकाव के एक तरफ़ या आपस में एक दूसरे की तरफ़ के नहीं हो

सत्ता। चाहे यह मेल और झुकाव कुदरती रिश्तेदारी के सबब से होवे, या कोई खास मतलब हासिल करने के लिये सब एक जगह जमा होवें, या अपने २ मतलब और स्वारथ के लिये, एक की तरफ़ जहां से वह मतलब बनता होवे, रुजू लावें॥

५-इस तरह दुनिया के कुल काम चाहे वह मामूली होवें, जैसे रोज़गार और व्यौपार और व्यौहार, या ग़ैर मामूली होवें, जैसे विद्या और बुद्धी से नई बात नया इल्म नई कल नई चीज़ नया कारख़ाना नई क़िसम की कारंवाई पैदा करना, सब प्रेम यानी खैंच शक्ती से, जिसको चाहे शौक़ कहो चाहे लाग चाहे इश्क़ चाहे ख़ास स्वभाव और आदत या बंधन और मोह या ख़्वाहिश, चलते और बनते हैं। बग़ैर इस शक्ती के किसी क़िसम की कारंवाई गुप्त या प्रघट हो नहीं सक्ती॥

६-इसी शक्ती यानी प्रेम और लगन के सबब से मनुष्य हर तरह की मिहनत और मशक़्क़त और अनेक तरह की तकलीफ़ और सख़्ती की बरदाश्त करते हैं, और कोई क़िसम का लालच करके (जैसे चाह नामवरी और मान बड़ाई या धन और माल की) जान तक देने को तइयार हो जाते हैं, और देदेते हैं॥

७-यह लगन या शौक़ या चाह या झुकाव और

लुभाव संग और सुहबत करके पैदा होता है, यानी जिस तरफ़ एक गोल या फ़िरक़े या मजमे या संगियों का झुकाव और शौक है, उसी तरफ़ को उस शख़्स का जो इनका संग करैगा, झुकाव और शौक़ बढ़ता जावेगा॥

८-यही सबब है कि संसारी लोगों के जिनकी दुनिया में बहुत कसरत है, संग करने से हर कोई चाहे लड़की होवे या लड़का, दुनिया की चाहें और लगन दिन २ पैदा करते और बढ़ाते जाते हैं। फिर जो बाद पक्के हो जाने दुनिया के शौक़ और लगन के, जो कोई उनको परमार्थी बचन सुनावे या दुनिया के जाल से निकसने की जुगत बतावे, तो वह उसको तवज्जह के साथ नहीं सुनते, बल्कि अपनी बुद्धी के मुवाफ़िक़ दलील और हुज्जत निसबत बड़ाई और पकाई संसारी शौक़ और लगन के पेश करके, संतों के बचन का ऐतबार नहीं करते॥

९-दुनिया में लोग इस क़दर लिप्त हो रहे हैं कि उनको इस बात की ख़बर भी नहीं पड़ती कि यह जगह नाशमान और धोखे की है, और यहाँ पूरा और ठहराऊ आराम किसी को हासिल नहीं है, और न हो सक्ता है॥

१०-बहुत कम ऐसे जीव हैं कि जो दुनिया की हालत को देखकर, और जीवों की ख़राबी और परेशानी

मुलाहज़ा करके खोज इस बात का करें, कि परम सुख का अस्थान कहां है और कैसे मिलै ॥

११-लेकिन संत सतगुरु कि जो सच्चे कुल मालिक के निज पुत्र और निज मुसाहब हैं, दुनिया के जीवों की ख़राब हालत देखकर, अति दया करके उनसे फ़रमाते हैं, कि तुम्हारा निज घर कुल मालिक राधास्वामी के धाम में है, और वही परम सुख और अमर आनंद का अस्थान है, जहां किसी क़िसम का कष्ट और कलेश और जनम मरन का दुख नहीं है। और यह देश माया और ब्रह्म का है, और इन्होंने अनेक तरह की रचना तुम्हारे फंसाने और इसी देश में क़ैद रखने के लिये करी है; कि जिस्से तुम्हारा छुटकारा मुशकिल हो गया है। जो इस क़ैद से और जनम मरन के चक्कर और दुख सुख से (जो देह धर कर भोगना पड़ता है) छूटना चाहो, तो संत सतगुरु की सरन में आओ। वे आप निज धाम के वासी हैं, और तुम को भी वहां अपनी दया के बल से पहुंचा सक्ते हैं, और ब्रह्म और माया और उनकी रचना के जाल से भी निकाल सक्ते हैं। और जो इस बचन को न मानोगे, तो संसार में ऊंचे नीचे देश और ऊंची नीची जोन में भरमते रहोगे और बारम्बार देह धर कर दुख सुख और जनम मरन का कलेश सहते रहोगे ॥

१२–यह बचन ख़ास दया का भरा हुआ कुल मालिक राधास्वामी दयाल ने, जब संत सतगुरु रूप धारन करके संसार में प्रघट हुये, अपनी ज़बान मुबारक से फ़रमाया, और संत भी जो उनकी निज अंस हैं यही कहते हैं। जो जीव उनका बचन मानते हैं वेही बड़ भागी हैं, और उन्हीं का छुटकारा देह और दुनियां से दिन २ होता जाता है॥

१३–जो जीव दुनिया के हाल को देखकर परमार्थ का खोज थोड़ा बहुत करते हैं, उन्हीं का संजोग मौज से खुद संत सतगुरु या उनकी संगत से लगता है, और वेही चित्त देकर बचन सुनते और मानते हैं॥

१४–इसी क़िसम के जीवों को जिनके मन में डर मौत और बारम्बार देह धरकर दुख सुख भोगने का पैदा हुआ है, संत सतगुरु इस तरह पर समझाते हैं, कि जैसे दुनिया के कुल काम शौक़ और मिहनत के साथ सरंजाम पाते हैं, ऐसे ही परमार्थ की कार्रवाई भी यानी अपने निज घर की तरफ़ चलने की तरकीब तब दुरुस्त बनेगी, जब कि सच्चा शौक़ कुल मालिक राधास्वामी दयाल और उनके निज धाम के दर्शनों का मन में पैदा होगा, और सच्चा ही खौफ़ जनम मरन और दुख सुख के चक्कर में पड़े रहने का मन में जागेगा॥

१५–यह शौक़ मन और सुरत की तवज्जह को संसार और संसारियों की तरफ़ से हटाकर, संत सतगुरु और सच्चे मालिक के चरनों में लगावेगा, और जिस क़दर रस और आनन्द सुरत शब्द मारग का अभ्यास करके अन्तर में मिलता जावेगा, उसी क़दर बंधन और मोह संसार और उसके सामान का मन से घटता जावेगा ॥

१६–माया के रचे हुये पदार्थ और इंद्रियों के भोगों में खैंच शक्ती बहुत है। हर एक के मन और इंद्रियों को, वे अपनी तरफ़ मुतवज्जह करके, किसी क़दर अपने संग लपेट लेते हैं; यहां तक कि फिर उनका छूटना या बंधन का ढीला होना बहुत मुशकिल हो जाता है। इस वास्ते जब तक कि मन और सुरत को कुछ रस और आनन्द विशेष अंतर में नहीं मिलेगा, या उसके प्राप्ती की आसा और चाह दृढ़ न होगी, तब तक संसारी पदार्थों और भोगों की तरफ़ से, चित्त में सच्ची नफ़रत या उदासीनता नहीं आवेगी ॥

१७–यह बात सिर्फ़ संतों के या उनके प्रेमी जन के संग से हासिल हो सक्ती है, क्योंकि इनकी मोहब्बत सर्व अंग करके कुल मालिक राधास्वामी दयाल के चरनों में लगी हुई है, और संसारी सुखों को उन्हों

ने तुच्छ और नाशमान समझकर छोड़दिया है, या उन में बर्ताव कम कर दिया है ॥

१८–एक सूरत संसार और भोगों की तरफ़ से हटने की यह भी है, कि इस शख़्स को कोई सख़्त सदमा या रंज या बीमारी वाक़ै होवे, या संसार और भोगों की तरफ़ से किसी क़िस्म का दुख पहुंचा होवे, तौ भी लाग ढीली हो जाती है, लेकिन इसका कुछ ऐतबार नहीं है, क्योंकि जब किसी क़िस्म का भारी सुख, या माया के पदार्थ विशेष करके प्राप्त होवें, तब रंज और दुख को भूल कर मन और इंद्रियां फ़ौरन संसार और भोगों में बदस्तूर लिपट जाते हैं ॥

१९–इस वास्ते यह हुक्म संतों का क़तई समझना चाहिये, कि बग़ैर उनके सतसंग और अंतर अभ्यास सुरत शब्द मारग के, जिस से मन और सुरत ऊंचे देश की तरफ़ चढ़ेंगे, और कोई तरकीब हासिल होने सच्चे बैराग की, संसार और उसके भोगों की तरफ़ से, नहीं है ॥

२०–संत सतगुरु और प्रेमीजन के सतसंग से दिन २ प्रीत और प्रतीत कुल मालिक राधास्वामी दयाल और संत सतगुरु के चरनों में बढ़ती जावेगी, और उसी क़दर औरतरफ़ की प्रीत और बंधन ढीले होते और घटते जावेंगे ॥

२१–सच्ची प्रीत का क़ायदा है कि प्रेमी को एक दिन उसके प्रीतम से मिलाकर छोड़ेगी, सो जब कि झुकाव और खिंचाव चरनों में ज़बर होता चला, तो सुरत और मन भी नीचे देश यानी पिंड को छोड़ कर ब्रह्मांड में चढ़ेंगे और फिर वहां से सुरत मन से न्यारी होकर. अपने निज देश में कुल मालिक राधास्वामी दयाल के चरनों में पहुंच कर वासा पावेगी। इसी का नाम सच्चा उद्धार और सच्ची मुक्ती है ॥

२२–यह काम जल्दी का नहीं है, आहिस्ते २ बाहर सतसंग और अंतर अभ्यास करके हालत मन और सुरत की बदलती जावेगी यानी चरनों में अनुराग और संसार से वैराग पैदा होता और बढ़ता जावेगा। और एक दिन सुरत कुल्ल रचना से न्यारी होकर, राधास्वामी धाम में विस्राम पावेगी ॥

वचन ७

भक्ती मारग और अंतर अभ्यास की कमाई की हालत में, कुल मालिक राधास्वामी दयाल को एक देशी और भी सर्ब देशी मानना चाहिये, नहीं तो उनके निज धाम में पहुंचना कठिन होगा, और यह सिर्फ़ मानन नहीं है, बल्कि हक़ीक़त में सच्चे मालिक का ज़हूरा इसी तौर पर हुआ है ॥

१—जितने मत कि इस वक़्त में दुनिया में जारी हैं, वे सब कुल मालिक को सर्व व्यापक और सर्व देशी समझते हैं, और इस सबब से उस से मिलने के वास्ते चलना और चढ़ना बहुत कम मानते हैं ॥

२—जो कोई मालिक को सर्व देशी मानते हैं, तो वे एक ठिकाने पर ध्यान नहीं कर सकते, क्योंकि कोई ख़ास मुक़ाम उसका मुकर्रर नहीं हो सकता फिर उनका ध्यान भी जैसा चाहिये दुरुस्त नहीं बन सकता ॥

३—अक्सर मालिक को आकाशवत व्यापक मानते हैं, और आकाश को ही उसका नमूना समझ कर ध्यान करते हैं, या रोशनी का जैसे धूप या चांदनी छाई हुई होती है ध्यान करते हैं, और उसी को चिदाकाश यानी चेतन्य आकाश मानते हैं। यह ध्यान मन के मुक़ाम पर चाहे वह हिरदे का स्थान होवे, या तीसरे तिल या त्रिकुटी में, किया जाता है, बग़ैर भेद मुक़ाम और उसके धनी या रास्ते के।

४—इस क़िसम के ध्यान में मन किसी क़दर एकाग्र हो जाता है, और रोशनी देखकर आनंद को प्राप्त होता है। इसी आनंद में बहुत से ज्ञानी और सूफ़ी मस्त और मगन रहते हैं, पर इस आनंद के ठहराव का ख़ास कर सख़्ती के वक़्त पूरा एतबार नहीं हो सकता।

५—अब समझना चाहिये कि इस रचना में दो पदार्थ हैं, एक चेतन्य और दूसरा जड़ यानी माया। इस हिसाब से इनके तीन देश हुए, एक निरमल चेतन्य देश, एक चेतन्य और माया की मिलौनी का देश, और उसमें दो बड़े दरजे हैं, यानी शुद्ध माया देश और मलीन माया देश, पहिले

को ब्रह्मागड कहते हैं और दूसरे को पिंड, और तीसरा माया देश हुआ, जहां किसी क़िसम की रचना नहीं है। इसी मुवाफ़िक़ संतों ने रचना के तीन बड़े दरजे मुकर्रर किये—पहिला निर्मल चेतन्य यानी सत्तपुर्ष राधास्वामी देश जहां चेतन्य ही चेतन्य है और किसी तरह की मिलौनी नहीं है, दूसरा निर्मल चेतन्य और शुद्ध माया देश जिसको ब्रह्माग्ड कहते हैं और तीसरा निर्मल चेतन्य और मलीन माया देश जिसको पिंड कहते हैं।

६—अब विचार करो कि निर्मल चेतन्य देश निज देश कुल्ल मालिक का है, जहां किसी क़िसम की मिलौनी नहीं है। जो कोई कुल मालिक से मिलना चाहे तो उस देश में जाकर मिले और दूसरे देश में माया की मिलौनी है, यानी माया के मसाले के ग़िलाफ़ चेतन्य पर चढ़े हुये हैं, और उसका आवरन और परदा हो रहे हैं। इस देश में निर्मल चेतन्य का दर्शन नहीं हो सकता, जब कोई नज़र करेगा तो ग़िलाफ़ नज़र आवेगा। अलबत्ता जिस किसी ने सब ग़िलाफ़ यानी परदों को फोड़ कर, और माया के घेर के पार जाकर निर्मल चेतन्य देश में मालिक का दर्शन किया है, वह फिर उसको सर्व देश में देख

सक्ता है। लेकिन बगैर अभ्यास और दूर करने परदों के कोई दर्शन सच्चे मालिक का नहीं कर सकता। तीसरे दरजे में माया प्रधान है और वहां चेतन्य का दर्शन निहायत मुशकिल है।

७-ऊपर के बचन के मुवाफ़िक़ संतों ने मालिक कुल को एक देशी और भी सर्व देशी कहा है, बगैर एक देशी मानने के चलना और चढ़ना यानी माया की हद्द को तै करना नहीं बन सकता, और इस वजह से सच्चे मालिक का दर्शन भी नहीं हो सकता। इस से साफ़ ज़ाहर है कि सिवाय संतों के और किसी ने जैसा चाहिये उस मालिक का भेद नहीं जाना, और न उसके निज धाम में कोई पहुंचा, यानी माया के घेर के पार न गया।

८-माया में सिवाय दो बड़े दरजों के और भी कितनेही दरजे हैं, और उन्हीं के मुवाफ़िक़ रास्ते में मंज़िल या मुक़ाम जिन को चक्र या कँवल कहते हैं रचे हुये हैं, और हर एक मुक़ाम का शब्द जुदा है। जो सच्चे मालिक के दर्शनों का चाहने वाला है, वह भेद रास्ते और मंज़िलों और शब्दों का लेकर, और सुरत शब्द योग का अभ्यास करके सहज में इन मुक़ामों को तै करके माया की हद्द के पार पहुंच सकता

है, और वहां सच्चे मालिक का दर्शन पाकर हमेशह को सुखी हो सकता है। लेकिन जिस जगह भेद नहीं है और न रास्ते और मंज़िलों का हिसाब है, वहां चलना और चढ़ना नहीं बनता, और इस वास्ते निर्मल चेतन्य देश यानी कुल मालिक के धाम में पहुंचना भी मुमकिन नहीं है।

९–यही सबब है कि किसी मत में जो आज कल जारी हैं, भेद सच्चे मालिक का कि वह (१) कौन है (२) कैसा है (३) कहां है और (४) कैसे मिले, पाया नहीं जाता, और न तरीक़ा चलने और चढ़ने का ऐसा आसान कि जिसका अभ्यास हर कोई कर सके, बयान किया है॥

१०–अलबत्ता मुक्ती के हासिल करने के वास्ते बहुतसी तरकीबें बयान की हैं, मगर वह सब शुभ करम में दाख़िल हैं, और उनकी कमाई का नतीजा या फल इस जिंदगी में नज़र नहीं आता, यानी बंधनों की निवृत्ती होती हुई और आज़ादगी का कुछ आनंद मिलता हुआ मालूम नहीं होता॥

११–योग शास्त्र में प्राणायाम के वसीले से छः चक्रों का, जो पिंड यानी मलीन माया देश में वाक़ै हैं, बेधना बयान किया है, मगर यह अभ्यास प्राणों

के रोकने और चढ़ाने का ऐसा कठिन और ख़तरनाक है, कि किसी से दुरुस्त नहीं बन सक्ता, और संजम उसके ऐसे सख़्त हैं कि ग्रहस्ती से बिल्कुल नहीं बन सक्ते ॥

१२–वेदान्त शास्त्र में तीन स्वरूप यानी अवस्था जीव की और तीन स्वरूप ईश्वर के बयान किये हैं, और यही छः देही या आवरन समझने चाहिये, लेकिन इन परदों के फोड़ने की जुगत सिवाय प्राणायाम के दूसरी नहीं कही है ॥

१३–कहीं २ मुद्रा का साधन वर्णन किया है। हरचंद वह प्राणायाम के मुवाफ़िक़ कठिन नहीं है, लेकिन उसकी चाल छः चक्कर के अंतरगत ख़तम हो जाती है, इस सबब से अभ्यासी माया की हद्द में रहता है, पार नहीं जाता ॥

१४–मालूम होवे कि सिवाय संत अथवा राधास्वामी मत के, और किसी मत में पूरा भेद सच्चे मालिक और उसके निजधाम और रास्ते का नहीं है, बल्कि जिसको उन्होंने ईश्वर और परमेश्वर या ब्रह्म और पारब्रह्म और ख़ुदा माना है, उसका भी भेद मुक़ाम और रास्ते का साफ़ साफ़ नहीं कहा, और न मिलने की जुगत वर्णन की है ॥

१५-साफ़ २ बचन तो, यह है कि जिस मत में दयाल और काल का भेद नहीं है, और निर्मल चेतन्य देश का जो माया की हद्द के पार है, कुछ ज़िकर नहीं है, तो वह मत चाहे जैसा होवे निरंजन यानी काल पुर्ष का है, और सिद्धान्त उसका माया के घेर में है, इस वास्ते उस मत में पूरा उद्धार जीव का किसी सूरत में मुमकिन नहीं है ॥

१६-जो कोई अपना सच्चा और पूरा उद्धार चाहे, उसको चाहिये कि राधास्वामी संगत में शामिल होकर और कुछ दिन सतसंग करके और, फिर सुरत शब्द मारग का उपदेश लेकर अभ्यास शुरू करे, और सत्त-पुर्ष राधास्वामी दयाल की सरन दृढ़ करे, वे अपनी दया से उसका कारज सब तरह दुरुस्त बनावेंगे, यानी एक दिन निज घर में पहुंचा कर बिस्राम देंगे, जहां जनम मरन और देह सम्बंधी दुख सुख और कष्ट और कलेश बिल्कुल नहीं है, और हमेशा आनंद ही आनंद है ॥

१७-कुल मालिक राधास्वामी दयाल ने सुरत शब्द अभ्यास को ऐसा अपनी दया से आसान कर दिया है, कि ग्रहस्त और विरक्त और इस्त्री और पुर्ष जवान और बूढ़े बल्कि लड़के बाले भी सहज में कर सक्ते

हैं, और बहुत जल्द उसका फल और फ़ायदा अपने अंतर में देख सक्ते हैं। और कोई दिन के अभ्यास के बाद कुल मालिक राधास्वामी दयाल की दया और रक्षा अपनी निसबत अंतर और बाहर परख सक्ते हैं, कि जिस्से उनको पूरा यक़ीन इस बात का हासिल होगा, कि उनके पूरे उद्धार में किसी तरह का शक और शुभा नहीं है॥

१८–जीव बहुत निबल है और ग्रहस्ती ख़ास कर अनेक बंधनों और ख़्वाहिशों में गिरिफ़्तार रहता है, इस वास्ते उद्धार के लायक़ करनी हर किसी से बन पड़नी निहायत कठिन है। लेकिन राधास्वामी दयाल अपनी मेहर से, चाहे जिस्से जो करनी वे मुनासिब और ज़रूर समझें, बनवालें, और अपनी तरफ़ से बख़्शिश में जीव का कारज बनावें। ऐसी दया आज तक जीवों पर कभी नहीं हुई। और हक़ीक़त में सिवाय कुल मालिक राधास्वामी दयाल के, या जिसको वे इख़्तियार बख़्शें, और किसी की ताक़त नहीं है कि ऐसी दया की कार्रवाई कर सके॥

१९–जो जीव कि राधास्वामी दयाल के सन्मुख आये, या उनकी संगत में शामिल होकर, और उपदेश सुरत शब्द मारग का लेकर अभ्यास करते हैं,

और चरन सरन दृढ़ करते जाते हैं, उनको महा बड़भागी समझना चाहिये, यानी एक दो तीन या चार जनम में, वे निज धाम में पहुंच कर बासा पावेंगे, और अमर और परम आनंद को प्राप्त होंगे ॥

बचन ८

प्रथम ज़रूरत स्वरूपवान सतगुरु और उनकी प्रीत और प्रतीत की है, तब अरूपी सतगुरु यानी कुल मालिक से मेला होगा ॥

१—इस दुनिया में सब जीव नाम और रूप में लग रहे हैं, और कुल रचना यहां की रूपवान है, और हर एक रूपका नाम जुदा २ है, चाहे वह चेतन्य है या जड़ ॥

२—जो कोई किसी पदार्थ का भेद सुनावे कि जिस का रूप नज़र नहीं आता, या जो अति सूक्ष्म रूप या अरूप है, और कोई ख़ास नाम भी उसका नहीं है, तो वह भेद या हाल हर एक की समझ में नहीं आता, बल्कि उस अरूप और अनाम पदार्थ के मौजूदगी का भी यक़ीन पूरा २ नहीं होता ॥

३—रचना में बहुत से पदार्थ ऐसे सूक्ष्म रचे गये हैं, कि वे इस लोक में मुतलक़ नज़र नहीं आते, सिर्फ़

उनकी कार्रवाई से वे जाने जाते हैं, और निज पदार्थों की कार्रवाई गुप्त है, और ख़ास तौर पर जुदा प्रघट नहीं हुई है, उन पदार्थों की किसी को ख़बर भी नहीं है ॥

४-इस दुनिया में कुल रचना अस्थूल है, और इसका सूक्ष्म और अति सूक्ष्म रूप अस्थूल के अंतर गुप्त है। जब तक कि कोई उस स्वरूप के मंडल में न पहुंचे, और उसकी अंतर दृष्टी न खुले, तब तक वह सूक्ष्म और अति सूक्ष्म रूप नज़र नहीं आ सक्ता ॥

५-विद्या और बुद्धिवान लोग दो या तीन दरजे के सूक्ष्म सरूप की समझ और कुछ अनुमान कर सक्के हैं, लेकिन उसके परे के महा सूक्ष्म स्वरूप और असली अरूप और अनाम पद का कोई अनुमान नहीं कर सक्ता ॥

६-मालूम होवे कि रचना में तीन दरजे बड़े हैं, और हर एक दरजे के पेट में छोटे दरजे हैं। यह लोक तीसरे दरजे में है, इस सबब से यहां के लोगों को चाहे विद्या और बुद्धिवान हैं या नहीं, दूसरे और अव्वल दरजे के रचना की ख़बर भीं नहीं हो सक्ती ॥

७-बल्कि इसी दरजे के ऊंचे मुक़ाम की ख़बर बहुत कम है, क्योंकि सिवाय जोगी के जो प्राणों को चढ़ा

कर छठे चक्र के पार गये, और कोई भेद रास्ते और मुक़ामों का नहीं जान सक्ता ॥

८—जोगेश्वर ज्ञानी ने प्राण और शब्द का अभ्यास करके, दूसरे दरजे में कई मुक़ाम तै किये, और उनका भेद अपनी बानी बचन में इशारे में कहा, लेकिन पहिले दर्जे का भेद सिवाय संतों के और किसी को मालूम नहीं हुआ, क्योंकि संत कुल मालिक के ख़ास मुसाहब हैं, और वे उसी धाम से वास्ते उपकार और उद्धार जीवों के तशरीफ़ लाये ॥

९—अब ख़्याल करो कि सब से ऊंचे मुक़ाम का, जो कुल मालिक राधास्वामी का धाम है, और भी ब्रह्म और पार ब्रह्म पद का, जो दूसरे दरजे में वाक़ै है, और भी आत्मा और परमात्मा का जो तीसरे दरजे के ऊंचे मुक़ाम हैं, भेद और कैफ़ियत बग़ैर इन कुल देशों के भेदी और वाक़िफ़कार के किस तरह मालूम हो सक्ती है। और कुल देश यानी तीनों दरजे के भेदी संत सतगुरु हैं, सो जब तक वे न मिलें कोई जीव हाल रास्ते, और भेद तीनों दरजों और उनके मुक़ामों का, और जुगत चलने और रास्ता तै करने की, जान नहीं सक्ता ॥

१०—जब जो कोई भेदी और बासी पहिले या दूसरे

या तीसरे दरजे के, जिनको संत सतगुरु और जोगेश्वर ज्ञानी और जोगी कहते हैं, संसार में आये, उन्होंने भेद अपने २ देश का अधिकारी जीवों को समझाया, और जुगत चलने की जोगी और जोगीश्वरों ने प्राणायाम के वसीले से, और संत सतगुरु ने सुरत शब्द योग की कमाई से, बतलाई॥

११—प्राणायाम की जुगत महा कठिन और खतरनाक है, और संजम भी उसके निहायत मुशकिल हैं, सो वह किसी से दुरुस्ती के साथ बन नहीं सक्के, यानी विरक्त जीव उसकी कमाई में लाचार और आजिज़ हैं, फिर ग्रहस्त जीव और खास कर औरतों की क्या ताक़त कि इस अभ्यास को शुरू भी कर सकें। फिर कोई भी जीव सिवाय चंद ईश्वर कोटियों के परमातम या पार ब्रह्म पद तक नहीं पहुंचा, और सब के सब कर्म और धरम में अटक कर रह गये॥

१२—जो कि दूसरा दरजा निर्मल चेतन्य और शुद्ध माया का देश है, और तीसरा दरजा निर्मल चेतन्य और मलीन माया देश कहलाता है, इस वास्ते जोगी और जोगीश्वर ज्ञानी, जो प्राणायाम का अभ्यास करके तीसरे और दूसरे दरजे के ऊंचे मुकाम में, जो परमातम पद और पारब्रह्म पद है पहुंचे, वह माया

के घेर में रहे, और उसकी हद्द के पार जो संतों का देश है न गये। तो फिर उन जीवों का जो तीसरे और दूसरे दरजे के ऊंचे मुकामों से बेख़बर रहे, और चलने और चढ़ने का जतन न उनको मालूम हुआ, और न उन्हों ने कभी उसका अभ्यास किया, क्या हाल कहा जावे। यह सब जप तप और तीर्थ बर्त्त और मूर्त पूजा और अनेक तरह के करमों में, मुवाफ़िक़ उपदेश ब्राह्मणों और भेखों के (जो आप असली परमार्थ से बेख़बर हैं) अटके और फंसे रहे, और इस सबब से उनका जनम मरन और ऊंचे नीचे देश और ऊंची नीची जोन में बासा बदस्तूर जारी रहा, यानी सच्ची मुक्ती या उद्धार किसी का नहीं हुआ॥

१३—जब संत सतगुरु प्रघट हुये और उन्होंने सुरत शब्द योग का भेद प्रघट किया, तब बहुत कम जीवों ने उन के बचन का एतबार किया, क्योंकि सब के सब बाहर मुखी कार्रवाई में लगे हुये थे। और जो कि उस वक़्त में प्राणायाम की महिमां बिशेष थी, तो संतों के जुगत में भी प्राणों का संग थोड़ा बहुत लगा कर उसको कठिन कर दिया, और उसके फ़ायदे से महरूम रहे।

१४—जब ऐसा हाल जगत का देखा कि कोई जीव

घर की तरफ़ नहीं चलता और सब के सब चौरासी में बहते और भरमते जाते हैं, तब कुल मालिक राधास्वामी दयाल आप दया करके जगत में प्रघट हुये, और संत सतगुरु रूप धारण करके जीवों को उपदेश सुरत शब्द मारग का (बग़ैर प्राणों के संग के) किया, और अपने चरनों में जीवों की प्रीत लगाई और महिमा संत सतगुरु और उनके सतसंग की, बजाय मूर्त और तीरथ के खोल कर सुनाई और कहा कि सतसंग रूपी तीरथ में अश्नान करके यानी बैठ कर बहुत जल्द जीव सफ़ाई अंतर और बाहर की हासिल कर सक्ता है। और बजाय मूर्त के जो न बोले और न चाले और न संसय और भरम दूर कर सके, संत सतगुरु के चरनों में प्रीत करने से सुरत और मन अंतर अभ्यास में रस ले सक्ते हैं और ऊंचे देश की तरफ़ चढ़ाई कर सक्ते हैं और जगत से सहज बैराग हासिल हो सक्ता है ॥

१५—इस बचन को जिन जीवों ने चित्त देकर सुना और समझा और हित करके मांना, उनको बहुत जल्द फ़ायदा अभ्यास का अंतर में मालूम पड़ा, और प्रीत और प्रतीत चरनों में जागने और बढ़ने लगी ॥

१६—जो अभ्यास की राधास्वामी दयाल ने बताया वह इस क़दर आसान है कि लड़का जवान बूढ़ा औरत या मर्द विरक्त होवें या ग्रहस्त, बहुत आसानी से दो चार बार हर रोज़ कर सक्ते हैं, और संत सतगुरु के चरनों में प्रीत भी बहुत आसानी से लगा सक्ते हैं। क्योंकि दुनिया में स्त्री पुत्र और धन से लगाकर बेशुमार जीवों, माल और असबाब में, कम से कम और ज़्यादा से ज़्यादा दरजे की प्रीत करने की सब को आदत है, और प्रीत की रीत का बर्ताव भी हर कोई अच्छी तरह से जानता है, कोई बात सिखाने और समझाने की ज़रूरत नहीं है॥

१७—प्रीत का क़ायदा है कि इकतरफ़ी नहीं बढ़ती, बल्कि उसका एक रस क़ायम रहना भी मुशकिल है, लेकिन जब दोनों तरफ़ से होवे तब बहुत जल्द बढ़ती है, और उसका आनंद और बर्ताव भी दिन २ ज़्यादा होता जाता है। इसी सबब से जो कोई मूरत में प्रीत करे उसका एतबार नहीं हो सक्ता, कि न तो वह प्रीत बढ़ती है और न कुछ रस और आनंद उसका ख़ास तौर पर प्रीत करने वाले को मिलता है। और जब कोई संत सतगुरु के चरनों में जो कि चेतन्य और समर्थ हैं प्रीत करे तो वह उलट कर उस

पर दया करेंगे, और उसकी ताक़त दिन २ बढ़ा कर, गहरा प्रेम चरनों का अंतर और बाहर बख़्शेंगे, तब हालत इसकी सहज में बदलती जावेगी, यानी दुनिया की तरफ़ से वैराग और चरनों में अनुराग बढ़ता जावेगा॥

१८—संत सतगुरु जब जीव को सतसंग में लगाते हैं, और चरनों की प्रीत दृढ़ाते हैं, तब पहिलेही भेद कुल मालिक के स्वरूप का जो उनका भी निज रूप है, और हर एक के घट २ में मौजूद है, बतौर उपदेश के समझा कर हिदायत करते हैं, कि बाहर और अंतर स्वरूप में बराबर प्रीत लगावे, और फिर जिस क़दर अभ्यास में तरक्क़ी होवे, अंतर के स्वरूप में प्रीत बढ़ाता जावे, ताकि एक दिन निज अरूपी स्वरूप से मेला हो जावे॥

१९—इस वास्ते जो कोई अपना सच्चा छुटकारा और उद्धार चाहे, उसको चाहिये कि संत सतगुरु के सतसंग में शामिल होकर उनके चरनों में गहरी प्रीत करे, और बचन उनके चित्त देकर सुने, और मनन करके अपनी समझ और पकड़ और रहनी बदलता जावे। तब उनकी मेहर और दया से अंतर में रास्ता तै होना शुरू होगा, और रफ़्ते २ माया के घेर के

पार पहुंच कर, कुल मालिक राधास्वामी दयाल के चरनों में विश्राम पावेगा ॥

२०—चेतन्य मूरत संत सतगुरु की है, जो कोई उनसे प्रीत लगावेगा उसका उद्धार होवेगा, और जो कोई पत्थर या धात की बनी हुई मूर्तों या कोई और निशान या ग्रन्थ में भाव लावेगा और पूजा करेगा, उसको जिस क़द्र तन मन धन लगावेगा उसके मुवा-फ़िक़ शुभ करम का फल मिलेगा, पर उद्धार नहीं होगा ॥

२१—मूर्तों की प्रीत का कुछ ऐतबार नहीं है, अक्सर मूर्तें औतारों या देवताओं की होती हैं और इनकी लीला बिलास सुन कर या पढ़ कर, लोग उनमें परमेश्वर का भाव लाते हैं, लेकिन वह मूरत उस भाव के ठहराव या तरक़्क़ी में कुछ मदद नहीं देती, बल्कि जब उसके असली स्वरूप की रहनी और लीला बिलास का वर्णन उलटी तरह से किया जावे, तौ फ़ौरन मूरत और उसके औतार स्वरूप में अभाव आ जाता है और भक्ती जाती रहती है, बरख़िलाफ़ इसके चेतन्य स्वरूप जो सच्चा गुरू है, संसय और भरम और अभाव वग़ैरह को अपने बचन सुना कर दूर करेगा, और अंतर अभ्यास करा कर अपने निज रूप में बिशेष प्रीत जगावेगा ॥

२२–अब ग़ौर करो कि जब कुल मालिक अनाम और अरूप है, और जीव उसकी अंस हैं, तो जब तक कि यह तन मन और इंद्रियों से, बल्कि माया के घेर से न्यारे न होंगे और बिदेह होकर कुल मालिक के धाम यानी निर्मल चेतन्य देश में जहां माया की मिलौनी नहां है नहीं पहुंचेंगे, तब तक जनम मरन और देही के बंधन और कष्ट कलेश से छुटकारा नहीं होगा, और न परम आनन्द प्राप्त होगा ॥

२३–जीव इस क़दर माया में डूब रहे हैं और भूल और भरम का इस क़दर इस लोक में ज़ोर शोर है, कि किसी को अपने सच्चे माता पिता कुल मालिक राधास्वामी दयाल और उनके निज धाम की सुध भी नहीं रही बल्कि जो कोई पता और भेद बतावे, और निज घर की याद दिलावे, उसके बचन का ऐतबार भी नहीं करते और बजाय मुवाफ़क़त और मुहब्बत के, उस से विरोध बांधते हैं। फिर किस तरह इन का उद्धार होना मुमकिन है ॥

२४–सिवाय कुल मालिक राधास्वामी दयाल और संत सतगुरु के, जब वे नर स्वरूप धारन करके, जगत में प्रघट होवें, और सत्तपुर्ष राधास्वामी धाम का भेद और तरीक़ा चलने का सुरत शब्द मारग के वसीले

से समझावें, और किसी की ताक़त नहीं है कि जीव को इस मारग पर चला सके, या उस जुक्ती का अभ्यास करा सके, फिर जब इन में अभाव आया तो कौन सूरत उद्धार की बाक़ी रही। इसी सबब से कसरत से जीव कुल मतों के चौरासी में भरम रहे हैं॥

२५—यह क़ायदा है कि जब तक किसी मुक़ाम या इल्म या हुनर का भेदी और वाक़िफ़कार नहीं मिलेगा, तब तक कोई शख़्स उस मुक़ाम या इल्म या हुनर को हासिल नहीं कर सक्ता, इस वास्ते जो कोई पूरा उद्धार चाहे, वह जब तक कि माया के पार न जावेगा, तब तक कारज उसका नहीं बनेगा॥

२६—मालूम होवे कि जब कुल मालिक सब रचना के परे है, और आप अनाम और अरूप है, तो जितने नाम और रूप और रचना पैदा हुई, वह उसी अरूप और अनाम की धार या किरनियों से ज़ाहर हुई। फिर जिस मुक़ाम पर कि इस रचना में जीव का क़याम है, वहां से जितनी रचना कि ऊपर है, सूक्ष्म और अति सूक्ष्म और महा सूक्ष्म वग़ैरा, सब को ते नहीं किया जावेगा, तब तक उस अरूप से मेल किस तरह हो सक्ता है। इस वास्ते भेद रास्ते और मंज़िल और नाम और रूप का, जो जहां २ वक़्त उतार

आदि धार के पैदा हुये, मालूम होना और उसके मुवाफ़िक़ रास्ते का तै होना ज़रूर दरकार है, क्योंकि बग़ैर इस कार्रवाई के किसी अरूप से मिलना नामुमकिन है । और यह भेद सिवाय भेदी और बासी उस देश के, जो संत सतगुरु हैं, दूसरा नहीं समझा सक्ता, और न रास्ता तै करने में मदद दे सक्ता है ॥

२७–इस वास्ते जब तक नर स्वरूप सतगुरु नहीं मिलेंगे, और उनके चरनों में प्रीत और प्रतीत नहीं आवेगी, और दया और मेहर उनकी शामिल नहीं होगी, तब तक कोई जीव निज घर और सच्चे मालिक का भेद नहीं जान सक्ता, और न चलने का जतन शुरू कर सक्ता है, और न उस देश में पहुंच सक्ता है ॥

२८–अनाम और अरूप संत सतगुरु का निज रूप है, और वही अरूप शब्द स्वरूप होकर प्रघट हुआ, शब्द भी अरूप और निराकार है, और सब जगह और घट २ में मौजूद है । सो उसी शब्द की धुन को पकड़ा कर, संत सतगुरु जीवों की सुरत को घट में चढ़ा कर निज धाम में पहुंचाते हैं ॥

२९–जब तक कि रचना प्रघट नहीं हुई, सिवाय अनाम और अरूप के और कुछ नहीं था, और जब मौज रचना की हुई, तब वही अनाम और अरूप को

धार शब्द स्वरूप होकर प्रगट हुई, सो कुल रचना असल में शब्द स्वरूप है, यानी अरूप और निराकार। यही शब्द स्वरूप प्रेमी जीवों को अरूप और अनाम पद में पहुंचावेगा, और यही स्वरूप सतगुरु का और सब मुकामों और पदों का और भी कुल जीवों का है। बाहर से संत सतगुरु शब्द का भेद देकर और जुगत समझाकर, अंतर में धसाते और चलाते हैं, और अंतर में शब्द गुरू सुरत को ऊंचे देश यानी निज धाम की तरफ़ खैंच कर, और अपना रूप बना कर, कुल मालिक राधास्वामी दयाल के चरनों में पहुंचाता है। इस्से ज़ाहर है कि बग़ैर मदद नर स्वरूप सतगुरु के बाहर से और दया और मेहर शब्द स्वरूप सतगुरु केअंतर में, किसी जीव का कारज नहीं बन सक्ता, और यह दोनों स्वरूप एक ही हैं। शब्द स्वरूप सतगुरु से मिलकर जीव अरूप और अनाम कुल मालिक का, थोड़ा बहुत अनुमान और ध्यान कर सक्ता है, औरतरह से उसको कुछ भी समझ अरूप और अनाम की नहीं आ सक्ती। और जिन लोगों ने इसी देश में अरूप और अनाम से मिलना, बग़ैर तै करने रास्ते के और सुरत शब्द मारग के अभ्यास के बयान किया है, वह अपनी समझ के अनुसार जड़ या चेतन्य आकाश से मिले, और अपनी ग़लती और नादानी

से उसी को अरूप और अनाम क़रार दिया, मगर इस तरह कारज उनके जीव का जैसा चाहिये नहीं बना ॥

३०—मालूम होवे कि हर मुक़ाम पर सरूप और अरूप मौजूद हैं, एक को बाच्य यानी शब्द स्वरूप कहते हैं, और दूसरे को लक्ष यानी अरूप और निरा-कार। लेकिन यह सब रास्ते के लक्ष यानी, निराकार स्वरूप असली अरूप नहीं हैं, इन सब के पेट में बीज रूप माया और निहायत सूक्ष्म आकार मौजूद है, कि वह अभ्यासी के देखने और समझने में नहीं आसक्ता, जब तक कि उस्से ऊंचे देश में न चढ़े ॥

३१—मुवाफ़िक़ संतों के बचन के असली अरूप कि जहां किसी क़िसम का आकार बल्कि रेखा भी नहीं है, सब मुक़ामों के परे है। फिर जो कोई कि माया की हद्द में, जहां तहां के लक्ष स्वरूप को अरूप और अनाम समझ कर या मान कर रह गये, वे किसी काल के बाद फिर रचना में आवेंगे, और जनम मरन के चक्कर से छुटकारा उनका नहीं हुआ। खुलासा यह कि उन्होंने बसबब न मिलने संत सतगुरु के धोखा खाया और रास्ते ही में रह गये यानी उनका पूरा उद्धार नहीं हुआ ॥

बचन ९

बाचक ज्ञानियों का अपने तईं ब्रह्म कहना या मानना ग़लत है, जब तक कि अभ्यास करके ब्रह्म को अपने घट में प्रघट न करें ॥

१—आज कल के ज़माने में ज्ञानी और सूफ़ी जो कि अपने तईं बिद्यावान कहते हैं, और असल में बिद्या पढ़ कर उन्होंने अपना ज्ञान या समझ दुरुस्त की है, अपने तईं और कुल जानदारों बल्कि रचना को ब्रह्म यानी खुदा कहते हैं। यह कहन उनकी सिर्फ़ ज़बानी है, क्योंकि बग़ैर प्राप्ती ब्रह्म के दर्शन के अपने घट में यह बचन मुख से उच्चारन करते हैं, और इस वास्ते वे बाचक ज्ञानी और बाचक सूफ़ी हैं ॥

२—यह बचन (कि मैं ब्रह्म हूं) जो उन्होंने बरमला कहा, वह मुवाफ़िक़ क़ौल सच्चे ज्ञानी और सच्चे सूफ़ियों के, जो ब्रह्म पद में पहुंचे और दर्शन पा कर वहां यह बोली बोले सही है, मगर यह लोग मन और इन्द्रियों के घाट पर बैठे हुये अपने तईं ब्रह्म मानते हैं, यह ख्याल उनका ग़लत है ॥

३—अफ़सोस का मुक़ाम है कि बाचक ज्ञानी और

सूफ़ी अपने मन की हालत कभी नहीं परखते, नहीं तो इनको अपने असली हाल की ख़बर पड़ जाती, कि उनका मन कहां २ अटका और बँधा हुआ है, और ज़रा २ से आराम और तकलीफ़ में दुखी सुखी होता है, तब यह ऐसा बचन कि मैं ब्रह्म हूं प्रघट करके न बोलते ॥

४-इसमें कुछ शक नहीं कि ब्रह्म सब जगह मौजूद है; लेकिन इस माया देश में उसपर कितने ही खोल चढ़े हुये हैं, असल सूरत उसकी गुप्त और पोशीदा है इसवास्ते जबतक कोई शख़्स अभ्यास करके, उन खोलों या परदों को नहीं फोड़ेगा, तब तक ब्रह्म का दर्शन उसको नहीं मिलेगा ॥

५-सच्चे ज्ञानी ने प्राणायाम का अभ्यास करके और अपने मन और सुरत को छः चक्र के पार चढ़ा कर ब्रह्म का दर्शन पाया । पर प्राणायाम की जुगत ऐसी कठिन और ख़तर नाक है, कि किसी शख़्स और ख़ासकर ग्रहस्ती और औरतों वग़ैरह से उसका अभ्यास बिल्कुल नहीं बन सक्ता, इस सबब से भेष और ग्रहस्ती दोनों का उद्धार मुमकिन नहीं ॥

६-जबकि ऐसी हालत जीवों की देखी, कि कोई भी निज घर की तरफ़ (जो कुल मालिक का धाम

है और जहाँ से आदि में सुरत उतरी) नहीं जाता, और सब के सब माया के घेर में भरमते हैं, कुल मालिक राधास्वामी ने संत सतगुरु रूप धारन करके सहज मारग जीवों के उद्धार का प्रघट किया। इस जुगत को सुरत शब्द योग कहते हैं, और ग्रहस्त और विरक्त और इस्त्री और पुर्ष इस को ब आसानी कर सक्ते हैं, और फ़ौरन उसका फ़ायदा भी देख सक्ते हैं॥

७–जो कोई राधास्वामी संगत में शामिल होकर और उपदेश लेकर सुरत शब्द का अभ्यास शुरूकरे, वह एक दिन ब्रह्म पद और फिर माया की हद्द के परे, सत्तनाम और कुल मालिक राधास्वामी दयाल का दर्शन अपने घट में कर सक्ता है। घट में दर्शन पाने के बाद फिर पहुंचा हुआ शख़्स कुछ नहीं बोलेगा, कि मै ब्रह्म हूं या सत्तपुर्ष हूं या राधास्वामी ॥

८–ब्रह्म पद के प्राप्त होने पर जो कोई वहाँ ठहरेगा उसका पूरा उद्धार नहीं होगा, क्योंकि माया के घेर में रहने से जनम मरन का चक्कर, चाहे बहुत देर के बाद होवे, नहीं छूटेगा, लेकिन जो कोई सत्तलोक या राधास्वामी पद में पहुचेगा, वह अमर और परम आनंद को प्राप्त होवेगा ॥

९–इस वास्ते कुल जीवों को और बाज़क सूफ़ी

ज्ञानियों को ख़ास कर लाज़िम और मुनासिब है कि कुल मालिक राधास्वामी दयाल की सरन लेकर, सुरत शब्द मारग का अभ्यास शुरू करें, तो एक दो तीन हद्द चार जनम में उनका सच्चा और पूरा उद्धार हो जावेगा। और जो इस बचन को न मानेंगे, तो हमेशा माया के घेर में ऊँचे नीचें देश और ऊंची नीची जोन में भरमते रहेंगे, और कच्ची बोली जैसे मैं ब्रह्म हूं, जब तक कि ब्रह्म पद की प्राप्ती न होवे, अपने मुख से न निकालें ॥

१०—और मालूम होवे कि ब्रह्मपद की प्राप्ती भी, सुरत शब्द मारग के अभ्यास से होवेगी और किसी अभ्यास के वसीले से इस ज़माने में चढ़ाई मन और सुरत की मुतलक़ बंद है, और न किसी से दूसरा अभ्यास दुरस्ती से बन पड़ेगा ॥

११—मुक़ाम नाभी और हिरदे में अभ्यास करके, थोड़ी बहुत सिद्धी और शक्ती या सफ़ाई और रोशनी और नूर का मुशाहिदा[1] हासिल हो सक्ता है, लेकिन सुरत मन की चढ़ाई छः चक्र के परे बग़ैर अभ्यास राधास्वामी दयाल की जुगत के किसी तरह मुमकिन नहीं है, और न इन अभ्यासों में जीव का उद्धार

१ देखना

मुमकिन है बल्कि जो सिद्धी और शक्ती में अटक गया, तौ नीचे के दरजे में गिर जावेगा ॥

बचन–१०

सरन और करनी के वास्ते प्रेम और मेहर दरकार है ॥

॥ सरन का बयान ॥

सरन से यह मतलब है, कि सर्व अंग करके जीव समर्थ के आसरे, और उनके चरनों में दीन और अधीन हो जावे, और अपना किसी क़िसम का बल या ताक़त पेश न करे, और न उसका अहंकार मन में लावे, बलकि अपने आप को निहायत निबल और नाकारा देखकर, समर्थ के चरन ढूंढ़ कर पकड़े, और उनकी ओट लेवे, और वास्ते अपने उद्धार और उपकार के, सिवाय समर्थ के दूसरी तरफ़ नज़र या ख्याल या किसी क़िसम की आसा न लावे ॥

२–समर्थ से मुराद कुल मालिक सत्तपुर्ष राधास्वामी दयाल और संत सतगुरु से हैं, जो घट २ में मौजूद हैं, और संत सतगुरु स्वरूप से बाहर संत संग और उपदेश करते हैं ॥

३-ऐसी सरन बग़ैर कुछ अर्से संत सतगुरु का सत

संग और अंतर में सुरत शब्द मारग का अभ्यास करने के हासिल नहीं हो सक्ती, यानी पहिले सतसंग करके समझ बूझ बदलेगी और संसार की पकड़ ढीली होवेगी, और अंतर में अभ्यास करके और दया पाकर प्रीत और प्रतीत जागेगी, और अंतर और बाहर परचे दया और रक्षा के निरख कर प्रेम पैदा होगा, और चरनों में पूरा बिस्वास आवेगा ॥

४–जिसको ऐसी सरन प्राप्त है, वह कुल कारोबार में, क्या परमार्थी क्या स्वार्थी, अपने सतगुरु स्वामी की मौज को निहारता है, और दया का भरोसा रखता है, और फिर मौज से कुल काम उसके, थोड़े बहुत सम्हलते और दुरुस्त होते जाते हैं । और जहां कहीं और जब कभी कोई काम, इसके मन और चाह के मुवाफ़िक़ नहीं होता, उसमें भी मौज को मुख्य रख कर, उसके साथ जहां तक बने मुवाफ़क़त करता है ॥

५–ऐसे सरनवाले की सुरत में शौक़ धुर मुक़ाम में पहुंचकर, दर्शन कुल मालिक और अपने सच्चे माता पिता राधास्वामी दयाल का बढ़ता रहता है, और उसके साथ ही रास्ता चढ़ाई का खुलता जाता है, और प्रेम बढ़ता जाता है ॥

६–यह सरन मेहर और दया से हासिल होती है,

यानी मेहर और दया से जीव का संजोग सतसंग और सतगुरु के साथ लगता है, और सतगुरु के बचन और उपदेश के मुवाफ़िक़ करनी बनती जाती है, और अंतर और बाहर फल भी उसका मिलता जाता है। और दिन २ बिस्वास और भरोसा चरनों में कुल मालिक राधास्वामी दयाल और संत सतगुरु के बढ़ता जाता है, और सरन मज़बूत होती जाती है, और प्रेम दर्शनों का जागता और बढ़ता जाता है ॥

७--जो कोई संतों की जुगत किताबों या किसी और तौर से दरियाफ़्त करके अभ्यास शुरू करेगा और बानी बचन पढ़कर और अपनी बुद्धी अनुसार करनी और रहनी दुरुस्त करना चाहेगा, और कुल मालिक और संत सतगुरु की दया और मेहर शामिल नहीं है, तो उसका काम पूरा नहीं बनेगा, यानी अभ्यास सुरत शब्द मारग का बराबर नहीं कर सकेगा, रास्ते में बिघन वग़ैरा उसको रोकेंगे और डरावेंगे, और अनेक तरह के ख्याल मन में पैदा करके उसको चंचल और मलीन कर देंगे ताकि अभ्यास उसका रुक जावे, और सच्चे रास्ते पर क़दम न रखने पावे ॥

करनी का बयान

८--(१) संत सतगुरु का सतसंग करना और चित्त

देकर बचन सुन्ना और बिचारना, और अपनी समझ और दुनिया में पकड़ और रहनी को उनके मुवाफ़िक़ दुरुस्त करते चलना (२) सुरत शब्द मारग का उपदेश लेकर, बिरह और प्रेम अंग के साथ तब अभ्यास करना, और अपने मन और सुरत को सचेत कर, जिस क़दर बन सके ऊंचे देश की तरफ़ चढ़ाना और रस लेना (३) कुल मालिक राधास्वामी दयाल और संत सतगुरु के चरनों में, प्रेम पूर्वक भक्ती यानी सेवा और दीनता करना, और उनकी प्रशन्नता हासिल करने के लिये जतन मुनासिब करना (४) प्रेमी और भक्त जन से प्रीत के साथ वर्ताव करना, और जब मौक़ा मिले उनकी सेवा मुनासिब करना, और बाक़ी जीवों के साथ दया अंग लेकर के वर्ताव करना (५) मन में चिन्ता और फ़िकर अपने उद्धार की लगी रहे और अपने मन और इन्द्रियों की चाल को निरखता और सम्हालता चले, ताकि पूरे उद्धार में विघन न डालने पावें, और राधास्वामी धाम में पहुंचने के वास्ते रास्ते में न अटकावें ॥

९--ऐसी करनी बग़ैर मेहर और दया संत सतगुरु और राधास्वामी दयाल के नहीं बन पड़ेगी, और जिस से बन पड़े वही जीव बड़ भागी और मेहरी है ॥

१०--ऐसी करनी वाला हमेशा अपने चित में दीन अधीन रहता है, और अपने मन की कसरों को निहार कर, हमेशा कोशिश वास्ते उनके दूर करने के करता रहता है, और संत सतगुरु और राधास्वामी दयाल के चरनों में प्रार्थना, वास्ते प्राप्ती विशेष दया और मेहर के, जारी रखता है ॥

११--ऐसी करनीवाला संत सतगुरु और राधास्वामी दयाल की मेहर और दया का सदा गुन गाता रहता है, और अपनी बड़ भागता पर हमेशा शुकर करता है, और आइंदः के वास्ते ज्यादः दया और तरक्की की आसा रखकर मगन रहता है॥

१२--यह शख्स सेवा में होशियार रहता है और नई २ उमंग प्रेम और सेवा की उठाता रहता है, और सच्चे परमार्थियों का हमेशा मददगार रहता है ॥

१३--इस शख्स को बड़ा ख्याल इस बात का रहता है, कि उसकी प्रीत और प्रतीत चरनों में दिन २ बढ़ती रहे, और किसी तरह से उस में घाटा न आवे, और जब कभी कोई माया या काल के चक्कर से, डिगमिग या रूखा फीका भी हो जावे, तो बानी और बचन याद करके या पढ़कर, और बेशुमार परचे जो दया के अंतर और बाहर मिले हैं उनकी सुध लाकर अपने मन को संत सतगुरु की मेहर और दया से जल्द

सम्हाल लेता है। और अपनी कसर को देखकर शरमाता और पछताता है, और आइंदह दया के वास्ते प्रार्थना करता है॥

१४–ऐसी करनी जल्द रास्ता तै कराती है, और एक दिन निज धाम में बासा दिलाती है, और संत सतगुरु और राधास्वामी दयाल की हर वक्त मेहर ऐसी करनी करने वाले परमार्थी पर बनी रहती है, और उसका कारज बनाती जाती है॥

बचन ११

मालिक घट२में मौजूद है, मगर सिवाय गुरू ज्ञानी के दूसरे को इस बात की परख नहीं हो सक्ती है॥

१–संत मत के मुवाफ़िक़ मालिक हर एक के घट में मौजूद है, और ऊंचे से ऊंचा उसका धाम है॥

२–और मतों के मुवाफ़िक़ भी यह बात सही होती है, यानी सब कहते हैं कि मालिक सब जगह मौजूद है। तो जब कि सब जगह मौजूद है, फ़िर हर एक के घट में भी ज़रूर मौजूद होना चाहिये। लेकिन पता और भेद अस्थान का साफ़ साफ़ किसी मत में नहीं बयान किया॥

३–अलबत्ता हिन्दुओं के मत में इस क़दर खोलकर बयान किया है, कि जहां चोटी का अस्थान है वही मालिक का निज धाम है और जीव की बैठक नेत्रों में बतलाई है ॥

४–जोगियों ने रास्ते का भेद छः चक्र तक प्रघट किया, और जोगीश्वरों ने तीन मुक़ाम यानी तीन कंवल छः चक्र के ऊपर कहे, और सिर्फ़ संतों ने उसके परे का भेद, यानी हाल तीन मुक़ाम का जिनको पदम कहते हैं, खोलकर वर्णन किया, और इस ज़माने में कुल मालिक राधास्वामी दयाल ने, संत सतगुरु रूप धारन करके, बाक़ी के तीन मुक़ामों को खोलकर, निज भेद कुल मालिक का प्रघट किया है ॥

५–यह निज भेद और हाल रास्ते और मंजिलों का, और जुगत चलने की निहायत आसान तरीक़े से, कुल मालिक राधास्वामी दयाल ने खोलकर बयान करी है, कि जिसको हर कोई औरत और मर्द लड़का जवान और बूढ़ा, ग्रहस्त होवे या विरक्त, आसानी से कर सक्ते हैं, और अपने उद्धार की सूरत सुरत शब्द मारग के अभ्यास से, थोड़ी बहुत जीते जी देख सक्ते हैं ॥

६–यह ऊंचे मुक़ामों का भेद और तरीक़ा अभ्यास का, और किसी मत में वर्णन नहीं किया है, और न

किसी दूसरे शख़्स को, सिवाय संत सतगुरु और कुल मालिक राधास्वामी दयाल के मालूम है। इस ज़माने में जीवों पर निहायत दरजे की दया फ़रमा कर कुल मालिक ने आप इस संसार में प्रघट होकर ज़ाहर किया। जो कोई बचन को माने उसका उद्धार सहज में होता है, और नहीं तो हमेशा चौरासी में भरमता रहेगा॥

७-सिवाय कुल मालिक राधास्वामी दयाल और संत सतगुरु के, वे लोग जो कि उनके चरनों में भाव और भक्ती के साथ आये, और जिन्होंने कोई दिन सतसंग करके, सुरत शब्द मारग का उपदेश लिया, इस गुप्त भेद से जो कि राधास्वामी मत का निज उपदेश है, वाक़िफ़ हैं, और वेही गुरु ज्ञानी कहलाते हैं, यानी सच्चे गुरू से ज्ञान पाया, और सच्चा गुरू जो शब्द है और घट २ में ऊंचे देश में बोल रहा है उसका ज्ञान पाया, यानी भेद लेकर अभ्यास शुरू किया॥

८-जीव का असली रूप कई परदों में और इसी देह में गुप्त है, और जो रूप कि बाहर नज़र आता है वह अस्थूल है, और उसके अन्दर सूक्षम रूप है, जिस्से जीव सुपना देखता है, और फिर उसके अंदर कारन शरीर है, जहां पहुंच कर जीव आराम के

साथ होता है या रहता है । इन तीन स्वरूपों के परे जीव का तुरिया रूप है, जहां से धार पिंड में आकर सब शरीरों को चैतन्य करती है ॥

९—जैसे जीव के तीन स्वरूप या अवस्था हैं, ऐसे ही ईश्वर या ब्रह्म के भी तीन स्वरूप हैं, जिनको माया सबल और साक्षी और शुद्ध या पारब्रह्म कहते हैं ॥

१०—संतों का देश जहां कुल मालिक राधास्वामी दयाल का निज धाम है, ब्रह्म और पारब्रह्म पद के परे और बहुत दूर है । फिर ख़्याल करो कि जो लोग मालिक को, बाहर मूर्तों और तीर्थों और पिछले महात्माओं के निशानों और ग्रन्थों और मकानों और दरियाओं और कुओं पर ढूंढते हैं, वे किस क़दर भूल और भरम में पड़े हैं, और उनका कभी पता बेड़ा नहीं लगेगा ॥

११—जब कि जीव का असली रूप साफ़ देह में गुप्त मालूम होता है, और ईश्वर और मालिक कुल को जो सब जगह मौजूद बताते हैं वह सरीह घट में गुप्त मालूम होता है, फिर उन लोगों की समझ और अक़्ल की निसबत जो कि आप बाहर भरम रहे हैं, और दूसरे जीवों को भी बाहर भरमाते हैं, सिवाय अफ़-सोस के क्या कहा जावे, कि ज़रा भी सोच और बिचार

नहीं करते, और न अपनी करतूत के नफ़े और नुक़-सान को मुलाहिज़ा करते हैं, सिर्फ़ टेकियों और अंधों और नादानों की तरह पिछली चाल को चला रहे हैं। और जो कोई उनके फ़ायदे की बात सुनावे, यानी मुवाफ़िक़ राधास्वामी मत के, अंतर के भेद और असली स्वरूप का ज़िकर करे, तो मुतलक़ तवज्जह नहीं करते, बल्कि दूर भागते हैं। यह उनकी अभागता का निशान है, कि नक़ल और भरम में ही पड़े रहना चाहते हैं॥

१२—यह टेकी और संसारी लोग हर चंद ज़ाहर में कृष्ण और राम और बिश्नु शिव और शक्ती की मूर्तों के पुजारी और भक्त नज़र आते हैं, लेकिन हक़ीक़त में उन देवताओं और औतारों के असली स्वरूप के (जो उनके घट में मौजूद है) दुशमन हैं। क्योंकि जो कोई उसका भेद और पता और महिमा उनको सुनावे, उसको मूर्तों का निंदक कहते हैं और उसके बचन को ज़रा भी तवज्जह करके नहीं सुनते, बल्कि उसके साथ दुश्मनी और फ़िसाद करने को तइ-यार होते हैं। अब ख्याल करो कि यह लोग ब्रह्म और उसके औतार स्वरूप और देवताओं के दुश्मन हैं कि भक्त, और इन का उद्धार किस तरह होगा॥

१३–भागवत के एकादश स्कंध में साफ़ लिखा है, कि सच्चे कृष्ण अपने भक्त ऊधो को बग़ैर जोग अभ्यास के परम धाम में नहीं पहुंचा सके, फिर मूर्त कृष्ण टेकी पुजारियों को क्या दे सक्ती है, ख़ास कर उस हालत में कि इन लोगों को उसके असली स्वरूप से विरोध है। इस वास्ते सब मूर्त पूजा वाले सिवाय उनके, कि जो भोले और अंतर में सच्चे हैं, और असल स्वरूप से मिलने का हिरदे में शौक़ रखते हैं, चौरासी में चले जाते हैं, और नीच ऊंच देह नीच ऊंच देश में धारन करके अपनी करनी का फल भोगते हैं॥

१४–जो भोले और सच्चे भक्त हैं, और अनजानता के सबब से मूर्त पूज रहे हैं, उनका संजोग कुल मालिक राधास्वामी दयाल अपनी मेहर से, साथ संत सतगुरु या साध गुरु या उनके सतसंगी के लगाकर, और सच्चे मारग और सच्चे अभ्यास का उपदेश कराकर, एक दिन अपने निज धाम में बासा देंगे॥

१५–इस वास्ते हर एक जीव को जो अपना सच्चा उद्धार चाहे, मुनासिब और लाज़िम है, कि सच्चे मालिक और उसके निज धाम का, और उस्से मिलने के तरीक़े का, खोज और तलाश राधास्वामी संगत में करे, तो उसको पूरा पता और भेद और चलने का

तरीक़ा मालूम हो जावेगा। और फिर संत सतगुरु की मेहर और दया लेकर और सुरत शब्द मारग का अभ्यास करके, एक दिन निज धाम में पहुंचकर हमेशा को सुखी हो जावेगा, और काल और करम के कष्ट और कलेश, और जनम मरन के चक्कर से क़तई छुटकारा हो जावेगा॥

बचन १२

मालिक को भक्ती प्यारी है, और भक्ती सतगुरु की और किसी की भक्ती मंज़ूर नहीं है, और जीव भी भक्ती के अधिकारी हैं॥

१—कुल मालिक राधास्वामी दयाल प्रेम का भंडार हैं, और जितने जीव हैं, वे सब उनकी अंस यानी किरन हैं; और वे भी प्रेम स्वरूप हैं॥

२—प्रेम का ज़हूरा दीनता और सेवा है, यानी जहां जिसको प्रेम है, वहां वह खुशी के साथ सेवा और ख़िदमत करता है, और दीनता यानी मुहब्बत और नियाज़मंदी के साथ वर्तता है॥

३—जो कि कुल मालिक प्रेम का भंडार है, और कुल जीव प्रेम स्वरूप हैं, इस वास्ते प्रेम यानी मुह-

ब्बत सब को प्यारी है, यहां तक कि जानवर भी चाहे ख़ूंख़ार और ज़हरदार होवें, मुहब्बत के गुलाम हो जाते हैं, यानी जो कोई उनसे प्रीत और उनकी सेवा करे, उसको वे भी प्यार करते हैं, और जैसे वह नाच नचावे नाचते हैं ॥

४–इसी तरह कुल जीवों को प्रीत प्यारी है, जो कोई उनके साथ मुहब्बत करे, और उनकी और उनके क़बायल की कुछ सेवा करे, तो वह उनको निहायत प्यारा लगता है, और वह भी उलट कर उससे प्रीत करते हैं, और अपना यार और भेदी बनालेते हैं ॥

५–कुल काम दुनिया के मुहब्बत यानी शौक़ से किये जाते हैं। जिसको जिस काम या चीज़ में मुहब्बत है, वह उसके वास्ते मिहनत और जतन करता है, और जिस में प्यार और शौक़ नहीं है, उस तरफ़ क़दम भी नहीं उठाता और न हाथ चलाता है ॥

६–अब ख्याल करो कि जब कि दुनिया में कोई किसी से वग़ैर मुहब्बत के नहीं मिलता, और न कोई किसी की बग़ैर मुहब्बत सेवा और ख़िदमत करता है, तो कुल मालिक सत्तपुर्ष राधास्वामी दयाल, और भी रास्ते के पद जैसे सोहंपुर्ष अक्षरपुर्ष ओअ़ंकारपुर्ष और निरंजन जोत (जिनको शिव शक्ति भी कहते हैं) बग़ैर

मुहब्बत और दीनता और सेवा के कैसे मिल सक्ते हैं, यानी बग़ैर प्रेम के उनसे हरगिज़ मेला नहीं हो सक्ता। क्योंकि जब कि कुल जीवों यानी अंसों को मुहब्बत प्यारी है, तो कुल मालिक और रास्ते के मुक़ामों के धनियों को भी मुहब्बत यानी प्रेम प्यारा है ॥

७–इस वास्ते जिस मत में कि मालिक की भक्ती नहीं है, और न मालिक का घट में पता और भेद बताया है, और न चलकर और चढ़कर मिलने का तरीक़ा समझाया है, वह मत ख़ाली है, उसमें कभी किसी को कुछ प्राप्ती नहीं होगी ॥

८–संत सतगुरु कुल मालिक राधास्वामी दयाल के निज पुत्र और निज प्यारे या निज मुसाहिब हैं, और मालिक के हुकम से जब २ मुनासिब होता है, दुनिया में आकर सतसंग और उपदेश सुरत शब्द मारग का जारी फ़रमाते हैं, और ख़ुद आप भक्ति भाव में वर्त कर, जीवों को भक्ती की रीत सिखाते हैं, और जो २ उनका बचन माने उनको निज घर में पहुंचाते हैं। उनका आना संसार में सिर्फ़ जीवों के उपकार और उद्धार के वास्ते होता है ॥

९–दुनिया में भक्ती औतारों और देवताओं और पिछले महात्माओं और भक्तों की जारी है; और अक्सर

लोग मूरत यानी स्वरूप की नक़ल बना कर, या कोई निशान, या ग्रन्थ श्रौर पोथी क़ायम करके पूजा करते हैं, लेकिन असल से बेख़बर, और न उसकी तलाश और न उस्से मिलने की चाह रखते हैं। बल्कि जो कोई असल का भेद उनके सामने बयान करे, तो उस्से लड़ने को तइयार होते हैं ॥

१०–जो कि यह लोग अनजान और हठीले और मूर्ख टेकी हैं, इस वास्ते वे संतों के उपदेश के लायक़ नहीं हैं, लेकिन जिस किसी के हिरदे में, सच्चा शौक़ सच्चे मालिक से मिलने, और उसके निज धाम में बासा पाने का पैदा हुआ है, उसको संतों का सतसंग प्यारा लगेगा, और वह शख़्स दीनता और सेवा और उपदेश लेकर अभ्यास करके, एक दिन संत सतगुरु की मेहर से, माया के घेर से पार होकर निज धाम में बासा पावेगा ॥

११–संतों के सतसंग में प्रेमी जन जमा होते रहते हैं, और वह प्रेमा भक्ती की रीत में खुलकर बर्तते हैं, और जगत के जीवों की लज्या और शरम और ख़ौफ़ नहीं करते। इस वास्ते जो कोई सच्चा परमार्थी संतों के सतसंग में जाता है, वह प्रेमी जन के संग रल मिलकर सहज में, और सुखालेपन के साथ भक्ती

में शामिल होकर अपना भाग बढ़ाता है, और दिन २ मेहर और दया का अधिकारी होता जाता है ॥

१२–इस भक्ती से मतलब यह है, कि प्रेमी के हिरदे में सच्चा प्रेम और खटक, कुल मालिक के दर्शनों की पैदा होवे, और वह दिन २ बढ़ती जावे, फिर यह खटक एक दिन धुर पद में पहुंचाकर छोड़ेगी ॥

१३–ऐसी भक्ती और प्रेम सच्चे मालिक के चरनों का, बिना संत सतगुरु के सतसंग और मेहर और दया के, किसी के हिरदे में पैदा नहीं हो सक्ता। इस वास्ते कुल परमार्थियों को जो सच्चे मालिक की भक्ती करना चाहें, चाहिये, कि संतों की अथवा राधास्वामी संगत की तलाश करके उसमें शामिल होवें, और संत सतगुरु का दर्शन और सेवा करके अपना भाग बढ़ावें ॥

१४–राधास्वामी मत में प्रेमा भक्ती का स्वरूप इस तौर से वर्णन किया है, कि प्रेमी तो भक्ती करनेवाला, और उसकी बैठक जाग्रत के वक्त नेत्रों में है, और भक्ती उस धार का नाम है, कि जिसकी धुन पकड़ के सुरत और मन तिल के मुक़ाम से अपने घट में, ऊंचे देश की तरफ़ चलते और चढ़ते हैं, और जब चढ़कर उस धाम में सुरत पहुंचे, जहां से वह आदि धारा शब्द और प्रेम और नूर की प्रघट हुई है, तब

अपने भगवंत यानी प्रीतम से मेला हो गया। इस तरह भक्त और भक्ती और भगवंत जो ज़ाहरा जुदे मालूम होते हैं, पर अभ्यास करके एक हो जाते हैं, यानी धुरपद में पहुंच कर भक्ती ख़तम हो जाती है, और भक्त अपने भगवंत से मिल जाता है, और उसको इख़्तियार रहता है, कि चाहे जब संनमुख रहकर अपने मालिक के दर्शन का आनंद बिलास लेवे॥

१५–अब ग़ौर करके बिचारो और समझो, कि इस क़िसम की भक्ती का कहीं किसी मत में ज़िकर तक भी नहीं है, और जो कोई जो कुछ कहता है वह बिद्या और बुद्धी और मामूली प्रीत के साथ बयान करता है। सो वह प्रीत लोग मूर्तों में या ग़ायब मालिक के चरनों में ख़र्च कर रहे हैं, यह प्रीत बहुत कम बढ़ती है, और बिना भेद और जुगत चलने के प्रीतम से मिला नहीं सक्ती॥

१६–मूरत पूजा वालों के दिल में कभी अपने इष्ट से मिलने का ख्याल नहीं गुज़रता क्योंकि वह मूरत को ही असल समझते हैं, और जो कोई असल का भेद सुनावे, तो उस्से बिरोध करते हैं। फिर यह भक्ती मौत के वक़्त और मरने के बाद क्या काम दे सक्ती है॥

१७–मूरत या ग्रन्थ या निशान में चेतन्य गुप्त है,

और वहां कभी प्रघट होकर बोल नहीं सक्ता, लेकिन संत सतगुरु में महा निर्मल चेतन्य, जैसे सत्तपुर्ष राधास्वामी दयाल, और भी माया से मिला हुआ चेतन्य, जैसे ब्रह्म और पारब्रह्म और आत्मा परमात्मा प्रघट हैं, और उनका दर्शन सत्तपुर्ष राधास्वामी के बराबर है, उनके सन्मुख जो कोई कुछ अर्ज़ करना चाहे, तो उसकी अरज़ी की ख़बर जैसा मौक़ा होवे, ब्रह्म पार ब्रह्म पद और सत्तपुर्ष राधास्वामी दयाल के चरनों में पहुंच सक्ती है ॥

१८—जो वंसावली गुरू या भेष या पंडित या विद्यावान हैं, यह कुल मालिक के भेद से बेख़बर हैं, और उनके मत में चलना और चढ़ना बिल्कुल नहीं है, क्योंकि जब यह ब्रह्म को सर्वत्र व्यापक मानते हैं, तो फिर उस से मिलने के वास्ते आना जाना या चलना चढ़ना नहीं मानते ॥

१९—लेकिन असल में कुल मालिक एक देशी भी है और सर्व देशी इस वास्ते जब तक कोई जतन चलने और चढ़ने का नहीं करेगा, तब तक सर्वदेशी मुक़ाम से हटकर, एक देशी मुक़ाम में, जहां कुल मालिक राधास्वामी दयाल, महा निर्मल चेतन्य स्वरूप विराजते हैं, नहीं पहुंचेगा। और इस वास्ते उसका

माया के घेर से छुटकारा भी नहीं हो सक्ता है, और न जनम मरन का चक्कर बंद होवेगा ॥

२०–इसवास्ते कुल मालिक राधास्वामी दयाल को भक्ती और प्रेम प्यारा है, और भक्ती और प्रेम जो संत सतगुरु के चरनों में किया जावे वह मंज़ूर है, और किसी की भक्ती मंज़ूर नहीं है, क्योंकि उसका सिल-सिला कुल मालिक के चरनों से लगा हुआ नहीं है, और इस सबब से वहां से उसका फल नहीं मिल सक्ता है और न भक्ती करनेवाले को कभी दर्शन असली स्वरूप का नक़ली स्वरूप में या अपने घट में मिल सक्ता है। अलबत्ता शुभ कर्म का फल कुछ सुख मिल जावेगा ॥

२१–संतों और भी और महात्माओं का क़ौल है, कि सच्चे मालिक के दर्बार में, सिर्फ़ प्रेमी जन यानी आशिक़ दख़ल पावेंगे, और वेही सन्मुख रहकर दर्शनों का आनन्द लेवेंगे। और जितने जीव तरह २ से पर्मार्थ कमाते हैं, उनको विशेष करके शुभ करम का फल यानी कोई दिन के वास्ते सुख मिलेगा, क्योंकि इनके मन में चाह दर्शनों की नहीं होती, और न संत सतगुरु से मिलना चाहते हैं, इस वास्ते महल में दख़ल नहीं पा सक्ते ॥

२२–जो सच्चे और पूरे आशिक़ और प्रेमीजन हैं वे कोई ख़ास दर्जा तै कर के, आप सच्चे मालिक के माशूक़ हो जाते हैं, यानी सच्चे मालिक को ऐसे प्यारे लगते हैं, कि वह अपने से उनको किसी वक़्त जुदा करना नहीं चाहता और जो वे कहें या चाहें, वही मालिक को भी मंज़ूर होता है, यानी उनकी और मालिक की मौज एक हो जाती है, यह लोग सच्चे मालिक के महा प्यारे यानी महबूब इलाही कहलाते हैं, और संत और परम संतगती भी उन्हीं को मिलती है। यह सब से बड़ा दर्जा भक्ती का है और किसी महा बड़भागी को, जिसके मन में सिवाय मालिक के दर्शनों के, और कोई चाह किसी क़िस्म की नहीं रही है, मिलता है॥

बचन १३

सतसंगियों की सेवा के मुआमले में आपस में क्रोध करना नहीं चाहिये, क्योंकि क्रोध काल का चक्कर है। इस वास्ते छिमा के साथ उसका हटाना मुनासिब है, और सतसंग में बचन चित्त दे करके सुनना और समझना और उनके मुआफ़िक़ कार्रवाई करना मुनासिब है, ताकि मन की हालत बदलती जावे, और मैलाई कटकर सफ़ाई हासिल होती जावे ॥

१—सतसंग में काल अपना दखल नहीं कर सक्ता, लेकिन सेवा में सेवकों के मन को फेरफार कर क्रोध और बिरोध और ईर्षा पैदा करता है ॥

२—जैसे एक शख़्स ने कोई ख़ास सेवा शुरू की जो कोई दूसरे ने बग़ैर उसकी इजाज़त के वह सेवा करदी, तो जिस शख़्स की वह सेवा है, उसके दिल पर यह बात निहायत सख़्त गुज़रती है, और वह

अपने तईं समझना है कि मैं आज ख़ाली रह गया क्योंकि उस सेवा में उसकी गहरी आशक्ती थी, इस सबब से वह नये सेवा करने वाले से नाराज़ होता हैं, कि बग़ैर इजाज़त के उसने कैसे वह सेवा करली॥

३—मालूम होवे कि सतसंग में चन्द क़िसम की सेवा होती हैं, और वह सतसंगी और सतसंगनें अपने उमंग के साथ करते हैं। जिसने जो सेवा इख़्तियार की, उसको उसी का आधार हो जाता है, और वह वक़्त मुअय्यनह[1] पर हाज़िर होकर अपनी सेवा को उमंग के साथ अनजाम देता है॥

४—जो कोई शख़्स पुराने या नये सतसंगियों में से किसी की सेवा में दख़ल देता है, वह बेजा दस्त अंदाज़ी समझी जाती है, और जिसकी सेवा में ख़लल पड़े, वह सच्चे मन से ख़लल डालनेवाले पर नाराज़ होता है, और आइंदह को उसको होशियार करता है, कि फिर किसी के साथ ऐसी हरकत बेजा न करे॥

५—सतसंग में सेवा ऐसे ही तक़सीम हो जाती हैं, जैसे कि कचहरी दरबार में जुदा २ काम अहिल्कारों के मुतअल्लिक़ होता है॥

६—संत सतगुरु सेवा आप तक़सीम नहीं करते। जो

१ मुक़र्रर

सतसंगी जिस काम को उमंग के साथ अन्जाम देना शुरू करे, वह उसी की सेवा समझी जाती है। और वह उसको रोज़मर्रह बिला नाग़ह वक़्त मुक़र्ररह पर अन्जाम देता है, बल्कि बीमारी की हालत में भी जहां तक मुमकिन होवे, अपनी सेवा अपने हीं हाथ से करना है॥

७-इस सूरत में सेवावाले का अपनी सेवा छिन जाने पर, चाहे एक ही बार के वास्ते होवे, नाराज़ होना और दिल में रंज मान्ना सही मालूम होता है। पर संत सतगुरु फ़रमाते हैं, कि सतसंगी को हर वक्त क्षिमा रखना चाहिये और जब क्रोध या बिरोध मन में आवे, तो उसको काल का चक्कर समझ कर, जहां तक मुमकिन होवे हटाना चाहिये, यानी जिस सतसंगी ने जान बूझकर, या अनजानता के साथ उसकी सेवा एकबार लेली है, तो उसको धीरज के साथ फ़हमायश करना मुनासिब है, जिसमें फिर बिला इजाज़त वह ऐसी हरकत न करे, लेकिन जब कोई दीनता के साथ कोई सेवा एक वक़्त के वास्ते मांगे, तो भी सतसंगी को दया करके, और मांगनेवाले का भाग बढ़ाने के वास्ते खुशी के साथ अपनी सेवा उसके हाथ से करा देना चाहिये। इसमें परसपर प्रीत बढ़ेगी, और क्रोध और बिरोध पैदा नहीं होगा॥

८—क्रोध और विरोध बेशक काल का चक्कर है, इस से सतसंग में झगड़ा और आपस में बिपरीत फैलती है। जो यह कैफ़ियत ज़ियादा बढ़े तो फ़िसाद की शकल पैदा करती है, और यह सतसंग के वास्ते निहायत शरम की बात है॥

९—इस वास्ते संत सतगुरु बारम्बार फ़रमाते हैं कि क्रोध विरोध और ईर्षा से बचकर, अपनी परमार्थी कार्रवाई करना चाहिये। और जब कभी कोई किसी मुआमले में हठ ज़बर करे या दीनता के साथ मांगे, तो उसकी हठ पूरी करनी चाहिये, और पीछे उसको समझा देना मुनासिब है, कि जिस में आइन्दा इस क़िस्म की हठ बे मौक़े न करे। और जो सेवा का शौक़ीन है, तो कोई सेवा जो ख़ास तौर पर कोई न करता होवे, या अब तक वह ख़ास सेवा जारी न हुई होवे, उसको अपने तौर से उमंग और प्रेम के साथ करे, ताकि दूसरे की सेवा छीनी न जावे, और क्रोध या विरोध पैदा न होवे॥

१०—सतसंग में सतसंगियों को इस बात का बड़ा लिहाज़ और ख्याल रखना चाहिये, कि आपस में क्रोध और विरोध या ईर्षा पैदा न होवे, नहीं तो सतगुरु को भी तकलीफ़ होगी, और क्रोधी विरोधी

आप भी तकलीफ़ पावेगा, और दूसरे को भी तक-लीफ़ देगा। यह हालत और चाल दुनियादारों की है, कि ज़रा सी बात पर बिगड़कर, लड़ाई और फ़िसाद को तइयार हो जाते हैं। जो सतसंगी का भी ऐसा ही हाल रहा, तो जान्ना चाहिये कि अभी तक सतसंग के बचनों का असर उसके दिल पर कुछ नहीं हुआ, और वह शख़्स क़ाबिल सतसंग के नहीं है, लेकिन संत सतगुरु दया करके ऐसे जीवों को बिल्कुल हटाते नहीं हैं, इस उम्मेद पर कि दो चार मर्तबे भिड़की और ताड़मार सहकर, उसका मन बदल कर दुरुस्त हो जावेगा ॥

११–कोई जीव कैसा ही मैला और नाक़िस तबीअत होवे, उसकी सफ़ाई और गढ़त सिर्फ़ सतसंग में मुम-किन है, और किसी जगह कोई गढ़ा नहीं जावेगा, बल्कि ज़्यादा मैला होगा इस वास्ते किसी जीव को जहां तक मुमकिन होवे, सतसंग से हटाना नहां चाहिये, बल्कि जिस किसी की दुरुस्ती मंज़ूर होवे, और वह चाहे कैसा ही बदचलन होवे, वह सच्चे सतसंग में शामिल होने से एक दिन गढ़ जावेगा, और उसकी समझ और रहनी बदल जावेगी ॥

१२–सतसंग किसको कहते हैं यह भी अच्छी तरह

समझ लेना चाहिये, ताकि धोखा न रहें। सतसंग संत सतगुरु के संग का नाम है, और उसमें सिर्फ़ सच्चे मालिक राधास्वामी दयाल और उनके धाम और नाम की महिमा गाई जाती है, और प्रेम के बढ़ाने की जुगत और रास्ता ते करने का तरीक़ा, और नाम और भेद मंज़िलों और रास्ते का वर्णन किया जाता है, और दुनिया और उसके सामान वग़ैरे की नाश मानता, और उसके धोखे का अस्थान होना, खोलकर समझाया जाता है ॥

१३–जो कोई ऐसा सतसंग होशियारी के साथ करेगा, और फिर बचनों को बिचारेगा तो ज़रूर उसके मन की हालत थोड़ी बहुत बदलेगी, और सच्चे मालिक का थोड़ा बहुत प्रेम हिरदे में आवेगा, और संत सतगुरु के चरनों में प्रीत और प्रतीत उसकी बढ़ती जावेगी ॥

१४–खुलासा यह कि सतसंगी का स्वभाव और रहनी, सतसंग और अभ्यास करके बदलेंगे, और जब दूसरे सतसंगियों की चालढाल और रहनी गहनी देखेगा, तब सच्चा पछतावा मन में लाकर नाक़िस स्वभाव और आदत को, आपही आहिस्ते २ छोड़ता जावेगा। और संत सतगुरु और शब्द और सतसंग

और प्रेमी जन प्यारे लगेंगे, और उनमें दिन २ प्यार और भाव बढ़ता जावेगा ॥

१५-दुनिया में बड़ी कसर सच्चे सतसंग की हो रही है, और इसी सबब से जीवों की हालत नहीं बदलती। जो सतसंग कि और मतों में जारी है, उसमें बिशेष करके तवारीख़ी हालात, और क़िस्से और क़ज़िये और लड़ाई झगड़े बग़ैरह, और कभी २ कुछ मन के ताड़मार वग़ैरह का बयान होता है। इन बातों से मालिक के चरनों में प्रीत और प्रतीत नहीं बढ़ती ॥

१६-सच्चा और पूरा सतसंग उसी का नाम है जहां संत सतगुरु या साध गुरू बिराजते हैं, और जो अपने मन और इन्द्रियों को क़ाबू में लाकर सर्व अंग करके अपने मालिक के चरनों के प्रेम में मस्त और मगन रहते हैं। और जो कोई सच्चा परमार्थी उनके चरनों में आवे, उसको भी दया करके प्रेमी बना देते हैं। फिर जो कोई उनके सतसंग में जावेगा, अगर सच्चा परमार्थी है, तो ज़रूर संत सतगुरु और प्रेमी जन का दर्शन करके, और उनकी रहनी और हालत देखकर, आप भी प्रेमी होता जावेगा, और जिस क़दर चरनों का प्रेम हिरदे में बस्ता जावेगा, उसी क़दर खोटे स्वभाव

और विकारी अंग दूर होते जावेंगे, और एक दिन पूरी सफ़ाई होकर सत्तलोक में वासा पावेगा ॥

बचन १४

परमार्थ की चाह मुवाफ़िक़ दुनिया की चाह के ज़बर होना चाहिये, तब कुछ फ़ायदा हासिल होगा, और जो दुनिया और उसके भोग विशेष प्यारे लगे, तो फिर जीव का गुज़ारह कैसे होवे। अव्वल तो जीव संतों के सतसंग का अधिकार नहीं रखता, कुछ अर्से तक हाज़िर होवे तब बचन समझे और फिर कुछ अर्सा चाहिये, कि उसका बर्ताव बचन के मुवाफ़िक़ दुरुस्त होवे ॥

१—इस दुनियां में स्वार्थ यानी दुनिया की कारवाई मुक़द्दम और ज़्यादातर अज़ीज़ समझी जाती है, और परमार्थ जिसकी असल में ख़ास ज़रूरत है, बहुत ज़रूरी नहीं समझा जाता, यानी उसकी कारवाई का फ़िकर जीवों को बहुत कम है ॥

२–बहुत से जीव इस ज़माने में परमार्थ की कुछ ज़रूरत नहीं समझते, और इस वास्ते कोई कार्रवाई किसी क़िसम की, परमार्थी ज़ैल में, इरादतन् नहीं करते ॥

३–बाज़े करम और तीर्थ बरत मूर्त पूजा वग़ैरा या पोथी का पाठ और माला फेरना, जैसा कि आम लोगों को करते देखते हैं, बिला तहक़ीक़ करने उसके मतलब और फ़ायदे और तरीक़े कार्रवाई के, जैसा कुछ उनसे बन आवे करने लगते हैं और अपने मन में अहंकार इस बात का रखते हैं कि हम ऐसे और वैसे पूजा धारी हैं ॥

४–बाज़ों ने जो थोड़ी बिद्या पढ़ी और बेदान्त के खुलासा ग्रन्थ देखकर अपने तईं ब्रह्म मान लिया, और भक्ती और पूजा असल ब्रह्मपद और औतारों की उड़ादी, और कोई अभ्यास किसी क़िस्म का, वास्ते सफ़ाई अंदरूनी और चढ़ाई मन और सुरत के किया नहीं, सो इन जीवों का घाट नहीं बदला, यानी मन और इन्द्रियों ही के मुक़ाम पर, जैसे संसार में बर्त रहे थे, थोड़ा बहुत वैसाही बर्तावा जारी रहा ॥

५–थोड़े जीव जो सच्चे दर्दी और खोजी सच्चे परमार्थ के थे, वह तलाश और तहक़ीक़ात करते हुये, कुल मालिक राधास्वामी दयाल की दया से, संतों के

सतसंग यानी राधास्वामी संगत में पहुंचे, और वहां पता और भेद सच्चे मालिक और उसके धाम का, और हाल रास्ते और मंज़िलों का और तरीक़ा चलने और चढ़ने का घट में मालूम करके बहुत खुश हुये, और उपदेश लेकर अभ्यास में लग गये ॥

६–इन जीवों को संत सतगुरु के बचन सुनकर दरियाफ़्त हुआ, कि जब तक परमार्थ यानी सच्चे मालिक से मिलने की चाह, कुल संसारी कामों से किसी क़दर ज़बर न होगी, तब तक परमार्थी फ़ायदा और आनंद, जैसा चाहिये वैसा घट में नहीं मिलेगा, और न जल्दी तरक़्क़ी होगी ॥

७–इस में कुछ शक नहीं कि जो कोई जिस क़दर लगन लेकर परमार्थ में लगेगा, उसको उसी क़दर फायदा हासिल होवेगा, और उसी मुवाफ़िक़ तरक़्क़ी भी होती जावेगी, लेकिन जो कोई अपना काम जल्द और पूरा बनाना चाहता है, उसको अलबत्ता सब से बढ़के अनुराग और बैराग और सतसंग और सेवा और मिहनत अभ्यास वग़ैरह की करनी पड़ेगी ॥

८–राधास्वामी मत में घरबार या रोज़गार नहीं छुड़ाया जाता है, लेकिन वास्ते प्राप्ती गुरुमुखता के सब को बराबर हिदायत की जाती है, और गुरु-

मुखता से मतलब यही है, कि धुरधाम में पहुँच कर, मालिक से मिलने की चाह और सब चाहों से ज़बर होवे, और यह बात अगर शौक़ तेज़ है, तो ग्रहस्त में बैठे संत सतगुरु और कुल मालिक की दया से हासिल हो सक्ती है ॥

९–मालूम होवे कि सिवाय अधिकारी के यानी सच्चे खोजी और दर्दी परमार्थी के, और कोई जीव संतों के सतसंग के लायक़ नहीं है, क्योंकि जब तक दुनिया और उसके भोग बिलास बिशेष प्यारे लगते हैं, तब तक संतों के बचन संसार की तरफ़ से बैराग और चरनों में अनुराग के अच्छे नहीं मालूम पड़ेंगे, और न मन उनके बार २ सुनने का, यानी सतसंग में हाज़िर होने का इरादा करेगा, और न ऐसे जीवों से अभ्यास सुरत शब्द मारग का बन पड़ेगा ॥

१०–जो कोई जीव मौज से सतसंग में आजावे, और ठहरा रहे, तो अलबत्ता बार २ सतसंग के बचन सुनकर, उसके मन की हालत किसी क़दर बदलनी मुमकिन है, यानी उस में मालिक के चरनों का अनुराग, और दुनियां की तरफ़ से बैराग थोड़ा २ पैदा होता जावेगा, और प्रेमीजन के बिरह और प्रेम की हालत देखकर मदद मिलती जावेगी। यानी कोई दिन

में यह जीव भी सच्चे प्रेमियों के ज़ैल में दाख़िल हो जावेगा, और एक दो जनम की देर अबेर से अपना काम पूरा बनवा लेगा ॥

११-संतों के सतसंग की महिमा बहुत भारी है, जिन बातों का वहां निरनय होता है, और जो भेद कि वहां परघट किया जाता है, उसका ज़िकर या बयान किसी मत में, जो दुनियां में आज कल जारी हैं, पाया नहीं जाता, और इसी सबब से वहां जीव का पूरा और सच्चा उद्धार भी मुमकिन नहीं है ॥

१२-लेकिन जगत के जीवों ने और उनके साथ पंडित और भेष ने, जो परमार्थ में गुरू और पेशवा बन रहे हैं, संतों के सतसंग की क़दर न जानी, और बजाय उमंग और दीनता के साथ शामिल होने के, अपनी नादानी से उलटी उसकी निन्द्या करते हैं, और जीवों को वहां जाने से अनेक तरह के डर दिखाकर रोकते हैं ॥

१३-सबब इसका यही है कि इन सब के मनों में संसार और धन और मान बड़ाई की क़दर सब से ज़बर धरी हुई है, और परमार्थ को एक वसीला अपने रोज़गार और मान बड़ाई का समझकर, ऊपरी तौर पर उसकी कार्रवाई ऐसी तरकीब से, कि जिस में दुनियादार राज़ी रहें, करते हैं। और मालिक की रज़ा-

मन्दी या नाराज़गी का ज़रा भी ख़ौफ़ या ख़्याल उनके दिल में नहीं आता, बल्कि मालिक की मौजूदगी में भी उन के मन में शक और शुभा बना रहता है ॥

१४–फिर ख़्याल करो कि ऐसे जीवों से या उनके ग़ोल और फ़िरक़ों से, क्या कार्रवाई सच्चे परमार्थ की बननी मुमकिन है, और संतों के सतसंग की उन में लियाक़त कहां है, बल्कि संतो के सतसंग का हाल सुनने का भी अधिकार नहीं रखते ॥

१५–अब सब को मालूम होवे, कि ब्रह्मा बिश्नु महादेव और शक्ती और ईश्वर और परमेश्वर की यह ताक़त नहीं है, कि जीव को चौरासी से बचा लेवें, यह शक्ती सिर्फ़ संतों को हासिल है। इस वास्ते सब जीवों को मुनासिब और लाज़िम है, कि तलाश और खोज करके संत सतगुरु के सतसंग में (जो कुल मालिक राधास्वामी दयाल के निज पुत्र और प्यारे मुसाहब हैं) हाज़िर होकर, और कोई दिन उनका सतसंग और सेवा करके, अपना भाग बढ़ावें, और उपदेश लेकर सुरत शब्द मारग का अभ्यास शुरू करें, ताकि एक दिन कुल मालिक राधास्वामी दयाल और संत सतगुरु की दया से निज धाम में बासा पावें, और जनम मरन के चक्कर से कितई बचाव हो जावे ॥

बचन १५

सच्चा परमार्थी गुरू के बचन के मुवाफ़िक़ बर्ताव करेगा, और मन को रोक और टोक लगावेगा, लेकिन और लोग मन के कहने में चलेंगे और धोखा खावेंगे ॥

गुरुमुख अंग का वर्णन

१--जिसके सच्चा खोज और सच्चा दर्द परमार्थ का है, वह संत सतगुरु और उनकी संगत का पता लगा कर उसमें शामिल होगा। क्योंकि बग़ैर संत अथवा राधास्वामी मत के, उसको कहीं और किसी तरह से शान्ती नहीं आवेगी ॥

२--जब कोई दिन होशियारी के साथ सतसंग करेगा, और बचन सुनकर बिचारेगा, और उनके मुवाफ़िक़ अपनी रहनी और बर्ताव दुरुस्त करना चाहेगा, तब उसको महिमा सतगुरु और सतसंग की कुछ मालूम पड़ेगी, और इतने ही में बहुत हालत और समझबूझ अपनी बदलती हुई नज़र आवेगी ॥

३--जिस वक़्त सतगुरु मेहर और दया से उपदेश सुरत शब्द मारग का फ़रमावें, तब शौक़ के साथ अंतर

अभ्यास में लगकर कुछ रस और आनंद मिलेगा। और कुल मालिक राधास्वामी दयाल और संत सतगुरु की दया, अंतर और बाहर परखने में आवेगी, तब प्रतीत और प्रीत चरनों में बढ़ेगी, और सेवा उमंग के साथ संत सतगुरु और प्रेमी जन की करना शुरू करेगा॥

४-फिर सब तरह से अंतर और बाहर परचे पाकर सतगुरु की गहरी प्रीत और प्रतीत मन में आवेगी, और हर बात में उनकी मौज को मुक़द्दम रक्खेगा, और जहां तक मुमकिन होगा अपनी कार्रवाई परमार्थी और संसारी, सतगुरु के बचन और आज्ञा के मुवाफ़िक़ दुरुस्त करेगा, ताकि तरक़्क़ी में किसी तरह का हर्ज न पड़े॥

५-सिवाय इसके सच्चा परमार्थी अपने मन और इन्द्रियों की चाल को निरखता और परखता चलेगा, और जहां तक मुमकिन होगा सतसंग और दया का बल लेकर, उनको नीचा रक्खेगा, और ज़ोर पकड़ने नहीं देगा॥

६-ग्रहस्त में रह कर यह ज़रूर नहीं है कि मन और इन्द्रियों के साथ क़ितई लड़ाई पैदा करनी और उनको किसी क़िसम का भोग बिल्कुल न देना, इस में काम दुरुस्ती से जल्द नहीं बनेगा, और ऐसा शख़्स हमेशा मन के हाथ से झटके और धोखे सहता रहेगा॥

७--बिचारवान और समझवार परमार्थी को इस क़दर अहतियात मुनासिब है, कि किसी भोग की आप इच्छा न उठावे, और जो भोग कि अनिच्छित या परिच्छित प्राप्त होवें, उनमें अहतियात के साथ बर्ताव करे ॥

८--अनिच्छित भोग वह हैं, कि जो बग़ैर इसकी चाह उठाने के प्राप्त होवें। और परिच्छित भोग वह हैं, कि जो दूसरा शख़्स अपनी ख़ुशी से लेकर या ख़रीद करके पेश करे, और इस बात की दरख़्वास्त करे, कि उसकी ख़ातिर थोड़ा बहुत वह भोग काम में लाया जावे ॥

९--मन जन्मान जनम का भूला हुआ और संसार में भरमा हुआ है, और अनेक तरह के भोगों में ग्रसा हुआ है। यकायक यह भोगों को नहीं छोड़ सक्ता, और न उनकी चाह उठाने से बाज़ रह सक्ता है, लेकिन सच्चा परमार्थी सतसंग और भक्ती, और संग सतगुरु की मेहर और दया का बल लेकर, इस मन को किसी क़दर ढीला डाल सक्ता है, और दुनिया का हाल इसको अच्छी तरह से दिखलाकर, और उसका नतीजा समझाकर, उसकी तरफ़ से किसी क़दर बैराग और उदासीनता चित्त में पैदा कर सक्ता है, और

उधर चरनों में संत सतगुरु और राधास्वामी दयाल के विशेष अनुराग जगा सक्ता है। और इस तरह रफ़्ते २ एक दिन मन को क़ाबू में ला सक्ता है, क्योंकि जब मन में थोड़ा बहुत प्रेम आया और ऊंचे देश का अभ्यास में रस मिला, तो वह आपही संसार की तरफ़ से हटकर, सच्चे परमार्थ में ज़ौक़ और शौक़ के साथ लगेगा, और दिन २ तरक़्क़ी हासिल करेगा, और संसार और उसके सामान और भी कुटम्ब परवार, और धन और माल वग़ैरे की क़द्र और महिमा उसके चित्त में घटती जावेगी॥

१०--मालूम होवे कि संसारी भोग और बिलास और माया के रचे हुये पदार्थ ऊंचे और नीचे देश के, सुरत और मन के साथ वक़्त चढ़ाई के ऊंचे देश में चल नहीं सक्ते, और न उस देश में उन पदार्थों की कुछ ज़रूरत सुरत को पड़ती है। फिर इन पदार्थों में सिवाय ज़रूरत के मुवाफ़िक़ बंधनों का होना ना मुनासिब और सुरत और मन की चढ़ाई में बिघन कारक है॥

११--जहां कुल मालिक का धाम है, वहां कोई पदार्थ या वस्तु जो कि रचे गये हैं, पहुंच नहीं सक्ते, और न वहां ठहर सक्ते हैं। इस वास्ते सच्चे परमार्थी को जिस

क़दर अपनी प्रीत राधास्वामी दयाल के चरनों में बढ़ाता जावे, रचना और उसके सामान से, चाहे किसी मंडल और देश में होवे, अंतर में हटना और न्यारे होना ज़रूर और मुनासिब है, नहीं तो उसकी चाल नादानों के मुवाफ़िक़ बहुत सुस्त चलेगी और रास्ते में झकोले खाता जावेगा ॥

मनमुख अंग का बर्णन

१२--जो लोग कि संतों के सतसंग में इत्तफ़ाक़ से शामिल हो गये हैं, लेकिन अभी उनको दुनिया के भोग बिलास प्यारे लगते हैं, और उन्हीं की तरक़्क़ी की चाह उठाते रहते हैं, और उस चाह के पूरा करने के निमित्त अनेक तरह के जतन करते रहते हैं, उनकी नज़र और तवज्जह हमेशह मन और माया की तरफ़ ज़बर रहेगी, और परमार्थ की तरफ़ निबल, इस वास्ते उनकी कार्रवाई को मनमुखता के नाम से वर्णन किया जाता है ॥

१३-यह लोग दुनिया के बहुत ज़बर भोग मिलने के वक़्त, परमार्थ को आसानी से ढीला डाल देंगे; या छोड़ देंगे ॥

१४--परमार्थ के रस और आनंद की प्राप्ती के लिये, उनसे मिहनत बहुत कम बल्कि नहीं हो सकेगी। वचन

सतगुरु और सतसंग के वास्ते दुरुस्ती और गढ़त मन और इन्द्रियों के, और प्राप्ती तरक्क़ी परमार्थ के, उन लोगों से बहुत कम यानी ज्यों के त्यों नहीं माने जावेंगे, और जो ज़्यादा ज़ोर दिया जावेगा, तो सतसंग छोड़ कर चले जावेंगे, और अजब नहीं कि सतसंग की निंद्या करें ॥

१५--जो भक्ती के अंग और प्रेम की रीत संसारियों को अच्छी नहीं लगती है, उसमें यह लोग कम बर्तेंगे, और संसारियों में उस चाल को निंद्या के तौर पर कहेंगे॥

१६--खुलासा यह है कि इन लोगों के मन में संसार और उसके सामान और उसके रसम और क़ायदे की महिमा ज़बर रहेगी, और उसको छोड़ने में जानसी निकलती मालूम होवेगी। लेकिन जो कुछ अर्से तक यह लोग सतसंग में पड़े रहे, तो आहिस्ते २ संत सत-गुरु अपनी मेहर और दया से इनके मन की भी गढ़त कर लेंगे, और चरनों का थोड़ा बहुत प्रेम बख़्श कर प्रेमियों के सतसंग में लगादेंगे ॥

१७--जो संसारी या मनमुख जीव संतों के सतसंग में नहीं आवेंगे, और न कभी संतों के प्रेमी सतसंगी से उनका मेल होगा, तो वे चौरासी के चक्कर में भरमते रहेंगे, और बारम्बार देह धरकर दुख सुख का भोग

करते रहेंगे, और जनम मरन के चक्कर का कष्ट और कलेश सहते रहेंगे ॥

१८--दुनिया में जो कुछ बाहरमुख कार्रवाई अनेक मतों की जारी है, वह शुभ करम में दाख़िल है, और मन और इन्द्रियों की गढ़त उसमें नहीं है, बल्कि इनको और ताक़त मिलती है, और बाहरमुख बिलास का शौक़ बढ़ता जाता है। फिर संसारी जीव ऐसी हालत में, कैसे लायक़ कमाने सच्चे परमार्थ के जो कि सिर्फ़ संतों के सतसंग में जारी है, हो सक्ते हैं ॥

१९--बाज़े जीव जो अंतरमुख कार्रवाई करते हैं, उनका अभ्यास नाभी या हिरदे में होता है या त्रिकुटी में, मगर मंज़िल और रास्ते के हाल से बिल्कुल बेख़बर हैं, और जो अभ्यास करते हैं, उसमें भी चढ़ाई का फ़ायदा बिल्कुल नहीं है। और बहुतेरे तो आंख बंद करके या खुली रखकर, ध्यान बिल्कुल बेठिकाने करते हैं, सो उसमें सिमटाव का भी फ़ायदा बहुत कम है। और अहंकार इन लोगों को अपनी करनी का बहुत ज़्यादा होता है, और समझते हैं कि जो कुछ जान्ना था वह हमने जान लिया, और जो कुछ करना था, वह सब कर चुके ॥

२०--जो कोई इन लोगों को संतमत या ऊंचे मुक़ाम

का ज़िकर सुनावे, तो बिल्कुल तवज्जै नहीं करते, और संतों के बचन में भाव और प्रतीत नहीं लाते ॥

२१--यही हाल इनके गुरुओं का है, जो कि निपट संसारी हैं, और संसार ही की तरक़्क़ी चाहते हैं। यह लोग संतों से बजाय प्रीत के दुश्मनी करते हैं, और झूंठी बुराइयां करके किसी जीव को संतों के सतसंग में जाने नहीं देते, क्योंकि वे समझते हैं, कि जो जीव संतों के सतसंग में कसरत से जावेंगे, तो उनकी मान बड़ाई और आमदनी में ख़लल पड़ेगा, और उनका पाखंड और कपट खुल जावेगा ॥

२२-यह लोग निपट दुनियादारों के वास्ते बनाये गये हैं, और इस वास्ते इनका रखना संसार में ज़रूर और मुनासिब है, ताकि दुनियादारों से कुछ तन मन धन की सेवा करावें, और मन मुखों को संतों के सत-संग में न जाने देवें, कि जिस्से वहां का निर्मल परमार्थ गदला न होवे ॥

बचन १६

जो कोई सचौटी के साथ सतसंग करेगा, उसकी हालत ज़रूर बदलेगी, और सब बासना उसकी रफ़्ते २ पूरी या दूर हो जावेंगी। और जो कि बचन चित्त देकर नहीं सुनते या उनके मानने का इरादा नहीं करते, वे कोरे रहेंगे, चाहे उमर भर सतसंग करें, क्योंकि सुन्ना और समझना आसान हैं, मगर उसके मुवाफ़िक़ बर्ताव किये बग़ैर कुछ फ़ायदा हासिल नहीं हो सकता॥

१–जिस किसी को सच्चा दर्द परमार्थ का है, और सच्चा फ़िकर अपने जीव के कल्यान का पैदा हुआ है, वह तलाश करके संतों के सतसंग में जावेगा, और उनका दर्शन और बचन चित्त देकर करेगा और सुनेगा, और जो बचन कि मान्ने चाहिये, उनको उमंग के साथ मानने का इरादा करेगा॥

२-इस तरह रोज़ाना सतसंग करके, सच्चे परमार्थी की प्रीत फ़ज़ूल चीज़ों और आदमियों और भी जगत में घटती जावेगी, और संत सतगुरु और प्रेमी जन और भी कुल मालिक राधास्वामी दयाल के चरनों में बढ़ती जावेगी ॥

३-जब उपदेश सुरत शब्द मारग का लेकर अंतर अभ्यास शुरू किया जावेगा, तब कुछ रस और आनंद अंतरी मिलेगा, और कुछ मालिक की दया और कुद-रत नज़र पड़ेगी, और प्रीत और प्रतीत ज़्यादा बढ़ेगी, और उसी क़दर संसार और उसके भोग बिलास की तरफ़ से चित्त उदासीन होता जावेगा ॥

४-यह निशान हालत बदलने का है, और यही सतसंग के असर होने का सबूत है, और सच्चे मत की भी यही पहिचान है कि संसार और उसके भोग बिलास में, जो सब जीव फँसे हुये हैं, उनसे आहिस्ते २ न्यारा होता जावे, और संत सतगुर और राधास्वामी दयाल के चरनों में, अंतर और बाहर प्रीत और प्रतीत बढ़ती जावे ॥

५-सच्चा परमार्थी संसारी चाहें सिवाय उनके कि जो ज़रूरी हैं, आहिस्ते २ अपने अंतर में काटता जावेगा, और जो सतगुरु अपनी मौज से कोई चाह

पूरी करें, तो उसमें मुनासिब तौर पर बर्ताव करेगा, और अटकेगा नहीं, क्योंकि जिस क़दर जिसकी सुरत और मन ऊंचे देश में चढ़ेंगे, उसी क़दर नीचे देश के भोग उसको रूखे फीके मालूम पड़ेंगे ॥

६—जिनके मन में सच्ची लाग परमार्थ की नहीं है, पर कुछ महिमा सुनकर या किसी रिश्तेदार या दोस्त सतसंगी का संग करके, सतसंग में शामिल हो गये हैं, तो वह भक्ती के ज़ाहरी अंगों में सब के साथ शामिल होकर दुरुस्त बर्तेंगे, लेकिन बचनों को जैसा चाहिये होशियारी के साथ नहीं सुनेंगे, और न उनके मानने का यानी उनके मुवाफ़िक़ अपना बर्ताव दुरुस्त करने का इरादा करेंगे ॥

७—सच्चा परमार्थी जिसने मत को अच्छी तरह समझ लिया है, संसारियों से नहीं डरेगा, और न उनकी शरम करेगा, लेकिन इस क़िसम के जीव जिनका ज़िकर ऊपर हुआ, निंदकों और जगत के जीवों से बहुत डरेंगे और जो वह ज़्यादा ज़ोर डालेंगे तो शायद सतसंग भी छोड़ देंगे ॥

८—इन जीवों का अगर भाग से सतसंग में कोइ दिन ठहरना हो जावे, तो रफ़्ते २ सच्चे परमार्थियों के वसीले से, सच्चा परमार्थ उनके अंतर में भी थोड़ा

बहुत घसाया जावेगा, और फिर उनकी भी हालत बचन सुनकर और अंतर अभ्यास करके कुछ २ बदलने लगेगी, और फिर उनक़ो थोड़ी बहुत महिमां सत-संग और संत सतगुरु की मालूम पड़ेगी, और उसी क़दर भाव बढ़ता जावेगा ॥

९–सतसंग की महिमां बहुत भारी है, जो सच्चा होकर इसमें लगा वह कंचन हो गया, जैसे लोहा पारस से मिलकर कंचन हो जाता है, यानी उसके सब संसारी स्वभाव बदल कर परमार्थी हो जाते हैं ॥

१०–जो बेपरवाही के साथ सतसंग करता रहा, तो वह जैसा संसारी अंग और स्वभाव लेकर आया है, वैसाही बना रहेगा, चाहे बरसों सतसंग में पड़ा रहे, क्योंकि उसके मन में इरादा बचन के मानने का नहीं है, और न अपनी हालत बदलवाना चाहता है । ऐसे जीव सतसंग की बजाय नेक नामी के बदनामी कराते हैं ॥

११–मनुष्य के संग की ऐसी महिमां है, कि बहुत से जानवरों को वह सिखाकर, उनसे तरह २ के काम कराता है और नचाता है, फिर संतों के सतसंग की क्या महिमां कही जावे, कि कैसाहो जीव नापाक और मैला होवे, उसको मेहर दृष्ट से बचन सुनाकर, और

अपने संग लगाकर साफ़ और पाक करलेते हैं। और यह बात कुछ अचरजी नहीं है, क्योंकि जहां खूंख़्वार और ज़हरीले और तरह २ के जानवर सिखाये जासक्ते हैं, तो फिर मनुष्यों की गढ़त और सफ़ाई कुछ मुशकिल बात नहीं है ॥

१२–इस वास्ते हर एक जीव को जो अपना फ़ायदा संसारी और परमार्थी चाहे, लाज़िम और मुनासिब है, कि जिस तरह बन सके संतों के सतसंग में शामिल होवे, और जब २ मौक़ा मिले सतसंग में हाज़िर होकर, और तवज्जह के साथ वचन सुनकर, अपनी गढ़त और दुरुस्ती करावे ॥

बचन १७

यह मन मस्त और ग़ाफ़िल है और दुनिया के भोगबिलास में बंधा हुआ है, बिना सतसंग और मेहर पूरे गुरू के इसकी हालत बदल नहीं सक्ती। इस वास्ते अपने वक़्त के पूरे गुरू का सतसंग प्रीत के साथ करना चाहिये, और जहां तक मुमकिन होवे उनका बचन मानना चाहिये, तब कारज बनेगा ॥

१-यह मन मस्त और ग़ाफ़िल और जगत में भरमा हुआ है, और माया के पदार्थों में इसकी रुचि बहुत ज़ियादा है, सो दसों इंद्रियों के संग हमेशा भोगों में फंसा और अटका रहता है, या उन्हीं का चिंतवन करता है ॥

२-परमार्थ में ऐसा मन कुछ काम नहीं दे सक्ता है, लेकिन जो संत सतगुरु के सतसंग में मौज से इसका गुज़र हो जावे, और वे इस पर मेहर की नज़र फ़रमावें, तो अलबत्ता बदलकर संसारी से परमार्थी बन सक्ता है ॥

३-कुल्ल जीवों का मन संसारी है, क्योंकि शुरू से उनको संग संसारी लोगों का होता रहा है, और संसार ही की महिमा उनके चित्त में बसी रहती है ॥

४-जो जीव मेहर से संत सतगुरु के सतसंग में जावे, और बचन चित्त देकर सुने और समझे, तो उसके मन में खोज कुल मालिक राधास्वामी दयाल का पैदा होगा, और दया से दिन २ हर एक बात का निरनै सुनकर और समझ कर उसकी समझबूझ बढ़ती जावेगी। और दुनिया और उसके सामान में पकड़ हलकी होती जावेगी, और परमार्थ और कुल मालिक राधास्वामी दयाल और प्रेमी जन के संग की कद्र और दुर्लभता चित्त में समाती जावेगी ॥

५-यह मन जन्मान जनम से अपने निज घर को भूला हुआ, और संसार में फँसा हुआ, चला आता है, सो इसकी प्रीत कुटम्ब परवार धन माल और भोग बिलास में निहायत गहरी और मज़बूत हो रही है। यह प्रीत यकायक तोड़ी या छोड़ी नहीं जा सक्ती लेकिन सतसंग में बैठ कर आहिस्ते २ इस प्रीत की जड़ कटना मुमकिन है ॥

६-जब जीव को संतों के बचन सुनकर या पढ़ कर, शौक़ उनके ज़्यादा सुन्ने और समझने, और

उनके मुवाफ़िक़ कार्रवाई करने का पैदा हुआ, तब से राधास्वामी दयाल आप उसको सतसंग में शामिल करके बचन सुनवावेंगे, और उसकी समझबूझ मुवाफ़िक़ उन बचनों के बदलेंगे। और उसके हिरदे में दिन २ थोड़ा बहुत रस और आनंद बचन और अभ्यास का बख़्श कर तरक़्क़ी देते जावेंगे और अंतर और बाहर दया और रक्षा के परचे देकर, उसकी प्रीत और प्रतीत चरनों में बढ़ाते जावेंगे ॥

७—यह हाल उत्तम अधिकारी जीव का है, और मध्यम और निकृष्ट अधिकारी खोज करते हुये, या महिमा सुनकर संतों के सतसंग में हाज़िर होते हैं, और कोई दिन सतसंग करके उनको महिमा संत सतगुरु और उनके बचनों की समझ में आती है, और फिर चरनों में और संगत में भाव बढ़ता जाता है, और उपदेश लेकर और अभ्यास शौक़ के साथ करके कुछ रस अंतर में मिलता है, और उनके प्रेम और प्रतीत को बढ़ाता है ॥

८—इस तरह हर एक क़िस्म के जीव सतसंग में शामिल होकर कैफ़ियत अंतर में देख सक्ते हैं, और अपना परमार्थी भाग दरजे ब दरजे बढ़वा सक्ते हैं, क्योंकि सतसंग में कैसा ही जीव आवे, उस पर एक दिन

ज़रूर दया होगी; यानी रास्ता उसके उद्धार का जारी हो जावेगा ॥

९-सत संग मुवाफ़िक़ गहरे दरिया के है, चाहे कैसा ही मैला और नापाक जीव उसमें आकर बैठे, वह ज़रूर धुलकर एक दिन साफ़ हो जावेगा ॥

१०-सत संग के बाहर कोई कहीं जावे वह वहां दिन २ ज्यादा मैला होता जावेगा, क्योंकि सब जगह काल और करम और मन और माया और पांच दूत और दसों इंद्रियों का भारी ज़ोर है, कि जिसको कोई नहीं रोक सक्ता, और जिसके मारे तमाम जीव मन और माया के हुकम में चल रहे हैं, और दुनिया की आबादी और रौनक़ और मज़बूती बढ़ा रहे हैं ॥

११-इस वास्ते संत बारम्बार फ़रमाते हैं, कि बाहर से सतगुरु का सतसंग और अंतर में सुरत शब्द जोग का अभ्यास, जिस क़दर बन सके बराबर करे जाओ, तो दो तीन या चार जनम में पूरा काम बन जावेगा, यानी धुरधाम में बासा मिल जावेगा, और जनम मरन और कष्ट और कलेश से कितई छुटकारा हो जावेगा ॥

बचन १८

सतगुरु को दीनता पसंद है, सो जो कोई सच्चा दीन होकर उनकी सरन लेवे, उसी को पार पहुंचाते हैं॥

१-कुल मालिक सत्तपुर्ष राधास्वामी दयाल और संत सतगुरु को दीनता पसंद है, जिसके हिरदे में सच्ची दीनता यानी गरज़मंदी वास्ते अपने जीव के कल्यान और उद्धार के है, वही सच्चे मन से राधास्वामी दयाल और संत सतगुरु को सर्ब समर्थ समझकर उनकी सरन लेगा, और फिर उसी के जीव का कारज संत सतगुरु अपनी मेहर और दया से आप बनावेंगे ॥

२-जीव अपना नफ़ा नुक़सान अच्छी तरह नहीं पहिचान सक्ता, और न भक्तों की करतूत देखकर, इस को ठीक २ बिचार आ सक्ता है ॥

३-इस वास्ते कुल कार्रवाई जीव के नफ़े की ऊपर मेहर और दया संत सतगुरु के मौक़ूफ़ है, जिस तरह वे मुनासिब जाने जीव को मन और माया के पंजे से छुड़ाकर निज घर में पहुंचाते हैं ॥

४-जीवों पर इस क़दर फ़र्ज़ है, कि संत सतगुरु के सतसंग में शामिल होकर बचन चेत कर सुनें और

जो कि मान्ने के वास्ते सुनाये गये हैं, उनको जिस क़दर बन सके आहिस्ते २ मान्ना शुरू करें, और चरनों में प्रीत और प्रतीत बढ़ाते जावें, तब वे जीव सतगुरु के मंजर नज़र और प्यारे होते जावेंगे, और उसी क़दर उन पर दया होती जावेगी ॥

५–दया का ज़हूरा और निशान यह है, कि मन में सच्चे परमार्थी के प्रेम नया जागता जावे, और संत सतगुरु और प्रेमी जन की सेवा की नई नई उमंगें उठें। कोई दिन ऐसी हालत रहेगी और जब किसी क़दर वासना या इरादह इस का पूरा हो जावेगा, फिर कोई पकड़ मज़बूत बाहरमुख कार्रवाई में नहीं रहेगी, और न किसी दूसरे को देखकर या उनके कहने से किसी क़िसम की आम बाहरी कार्रवाई में, गहरी तवज्जै के साथ बर्ताव करेगा। सिर्फ़ संत सतगुरु के चरन मज़-बूती से पकड़ के अपनी भक्ती और प्रेम बढ़ावेगा, और अंतर मुख कार्रवाई में तरक्क़ी करेगा, और सतगुरु की भक्ती ख़ास तौर से, और भी प्रेमी जन की सेवा निहायत मुहब्बत के साथ, जारी रक्खेगा ॥

६–दुनिया में भी हर एक को चाहे मनुष्य होवे या हैवान दीनता और सेवा प्यारी है। बड़े ख़ूख़्वार और ज़हरीले जानवरों को सीधा करके, मनुष्य उनसे तरह २ के काम और सेवा लेते हैं, और खेल खिलाते हैं ॥

७—जब कि कुल जानदारों को दीनता और सेवा पसंद है, तो फिर मालिक को और भी संत सतगुरु और प्रेमी जन को भी यही दीनता और सेवा पसंद है, इस वास्ते जो कोई अपने जीव का कल्यान, और निज धाम में पहुंचना चाहें, उनको चाहिये कि तलाश करके संत सतगुरु के सतसंग में शामिल होकर उपदेश लेवें। और कुल मालिक राधास्वामी दयाल और संत सतगुरु के चरनों में आरती और प्रार्थना करते रहें, और प्रेम और दीनता के साथ अंतर और बाहर सेवा करके अपना भाग जगाते रहें, तब सहज में जीव का कारज उम्दा तौर से बन जावेगा॥

८—बाज़े मानी और अहंकारी और रोज़गारी लोग हाकिमों और धन वालों की, बहुत खुशी और दीनता के साथ सेवा करते हैं, लेकिन संत सतगुरु से अहंकार रखते हैं, और उनका दर्शन तक नहीं करते, बल्कि झूठी सच्ची बुराई और निंदा उनकी और उनके प्रेमी जन की करके, जीवों को उनके सनमुख जाने और सतसंग में शामिल होने से रोकते हैं। यह जीव ज़ाहर में बड़े और आम जीवों के पूज्य नज़र आते हैं, मगर अंदरूना उनका बिल्कुल स्याह है, और आख़िर में उसी कार्रवाई के मुवाफ़िक़ चौरासी में भरमेंगे, और

जब तक कि संग सतगुरु से मिलकर अंतर अभ्यास और उनके चरनों में भक्ती नहीं करेंगे, तब तक किसी सूरत में उद्धार इन के जीवका नहीं होगा। यानी अपने निजघर में जो राधास्वामी धाम है, कोई जतन करके बासा नहीं पावेंगे, और जो जीव इन लोगों का संग करेंगे वह भी चौरासी में भरमेंगे और अपने जीव के उद्धार से महरूम रहेंगे॥

बचन १९

गुरु स्वरूप मालिक की महिमां हर स्वरूप से ज़्यादा है, क्योंकि यह स्वरूप उद्धार करता है, और दूसरा यानी हर स्वरूप संसार में फंसाने वाला है॥

१–जब कि कुल मालिक राधास्वामी दयाल अति दया करके, वास्ते उद्धार और उपकार जीवों के, इस लोक में संत सतगुरु रूप धारन करते हैं, तो उस स्वरूप और उस समय की महिमां, और उन जीवों की बड़भागता जो उनके चरनों में लगे हैं, किसकी ताक़त है कि वर्णन कर सके या लिख सके॥

२—कुल मालिक राधास्वामी दयाल का निज स्वरूप, पिंड और ब्रह्मान्ड और माया की हद्द के परे और पहिले दरजे की चोटी पर है। जैसा कि वह स्वरूप है कहने में नहीं आ सक्ता, और जैसा कि वह देश है वह भी वर्णन किया नहीं जा सक्ता। किसी को इस देश और इस स्वरूप की ख़बर तक भी नहीं और किसकी ऐसी ताक़त कि इतनी दूर चलकर और चढ़-कर उसको लख सके॥

३—फिर अब उस निहायत दरजे की दया का जिसके सबब से इस आदि और अनादि और अकह और अपार स्वरूप ने उतर कर नरदेह में क़याम किया, और सतगुरु रूप धारन करके जीवों का उद्धार जारी फ़रमाया, किसकी ताक़त है कि ज़रासा भी हाल बर्णन कर सके, और शुकराना उस मेहर और दया का अदा कर सके, आश्चर्य ही आश्चर्य है, इस दया का कुछ वारपार नहीं है॥

४—जिस स्वरूप का दर्शन महा दुर्लभ और महा कठिन बल्कि ना मुमकिन था, उस स्वरूप को नर स्वरूप में मौजूद हर कोई देख सक्ता है, और थोड़ी दीनता और सेवा करके, उस स्वरूप की दया बहुत आसानी के साथ ले सक्ता है॥

५—हज़ारों बल्कि बेशुमार लोग मिहनतें कर कर और पच २ और थक २ हार कर मर गये पर राधास्वामी दयाल के धाम की ख़बर तक न मिली, लेकिन किस क़दर बड़ा भाग उन जीवों का है, कि जिनको इस समय में राधास्वामी दयाल के दर्शन, बिना चाह और इरादे के सहज में और मुफ़्त हासिल हुये ॥

६—और किस क़दर कम नसीबी उन जीवों की है, कि जो बावजूद हर तरह से मौक़ा मिलने के फिर भी राधास्वामी दयाल के दर्शनों और सत संग से महरूम रहे । और बजाय महिमां और गुणानुवाद गाने के, झूंठी सच्ची बातें खड़ी करके उनकी निंद्या करते रहे ॥

७—जिस किसी ने कि इस स्वरूप की कुछ भी महिमां जानी, उसका काम बन्ना शुरू हो गया, और जिसने ग़ायब स्वरूप मालिक की पूजा, या सेवा या याद करके अपने तईं तृप्त माना, उसने निपट धोखा खाया, और हर तरह से ख़ाली रहा । क्योंकि खुद कुल मालिक का वचन और हुकम है, कि जो कोई पूरे गुरू की मार्फ़त मुझ से मिलेगा, उसको मैं दर्शन दूंगा और सब तरह से उसकी ख़बर लूंगा, लेकिन जिनके मन में ग़ायब स्वरूप की टेक है, और गुर

स्वरूप की महिमा नहीं समाती है, वह हरगिज़ मेरे महल में दख़ल नहीं पावेंगे। क्योंकि हर तरह से गढ़त और सफ़ाई मन और सुरत की पेश्तर चढ़ाई से ज़रूरी है, और वह सिवाय सतगुरु के और कोई नहीं कर सक्ता, इस सबब से कोई जीव बिना सतगुरु की दया के, तीन लोक के पार, नहीं जा सक्ते ॥

८—जिन लोगों को सतगुरु का संग प्राप्त हुआ, और वे चेतकर बचन सुनते हैं, और प्रेम सहित दर्शन करते हैं, उनके मन और सुरत की हालत बहुत जल्द बदलनी शुरू होवेगी, यानी संसारी अंग निकसते और परमार्थी स्वभाव बसते हुये नज़र आवेंगे, और दुनिया और उसके सामान की पकड़ ढीली, और संत सतगुरु और राधास्वामी दयाल की प्रीत और प्रतीत और सरन मज़बूत होती चली जावेगी ॥

९—जिस किसी ने संत सतगुरु की थोड़ी बहुत महिमा जानी और कुछ पहिचान की है, तो वह बिकारी कामों में बर्तने से आहिस्ते २ हट जावेगा, और सकारी कामों में प्रवेश करता जावेगा, तब कोई अर्से में जब सफ़ाई कामिल हो जावेगी, वह शख़्स संत सतगुरु का प्यारा हो जावेगा, तो फिर उनकी मेहर और दया से सहज में जगत से न्यारा हो जावेगा ॥

१०—और जो ग़ायब स्वरूप का ध्यान करता है वह स्वरूप उसको कभी नज़र नहीं आवेगा, और न ध्यान का असर काफ़ी उसके दिल के ऊपर पैदा होगा, कि जिस्से भय और भाव कुल मालिक और सतगुरु का उसके दिल में समावे, और जब कि सच्चा भय और भाव नहीं, तब गढ़त मन और सुरत की किस तरह होवे ॥

११—और वजह नज़र न आने निज स्वरूप और न पैदा होने असर ध्यान की यह है, कि यह लोग निगुरे होते हैं, यानी किताबें पढ़कर विद्या और बुद्धी की मदद से, हर एक बात का अनुमान करते हैं ॥

१२—इन जीवों से सच्चे और पूरे गुरू के सामने दीनता नहीं करी जा सक्ती, और न अहंकार करके जुगत ध्यान की दरियाफ़्त करते हैं, इस वास्ते अनुमानी स्वरूप और अनुमानी ध्यान में अटके रहते हैं और अख़ीर में ख़ाली हाथ जाते हैं ॥

१३—अब संत सतगुरु फ़रमाते हैं, कि कुल जीवों को लाज़िम और मुनासिब है, कि जहां कहीं सच्चे और पूरे गुरू की संगत मौजूद होवे, उसमें जाकर ज़रूर शामिल होवें, और जो भाग से पूरे गुरू का दर्शन मिलजावे, तो उनकी सेवा तन मन धन से जिस

क़दर बन सके प्रेम सहित करें, और अपने तईं महा बड़भागी समझें, कि यह दुर्लभ और अनमोल दर्शन और संग उनको मुफ़्त में और सहज में प्राप्त हुआ। इस दर्शन की क़दर जान्ना यही है, कि जिस क़दर बन सके उनका सतसंग और भक्ती करें, और अपना निज परमार्थी भाग जगावें ॥

१४--जिस किसी ने गुरु स्वरूप की महिमां नहीं जानी, वह जीव महा अभागी रहे, और बारम्बार चौरासी में भरमेंगे। बाज़े नादान ख्याल करते हैं कि गुरु स्वरूप तो नाशमान है, और हाड़ मास चाम का बना हुआ, तो जब यह ठहराऊ नहीं है, तो इसके ध्यान से क्या फ़ायदा होगा। जवाब इसका यह है कि हरचंद देह स्वरूप नाशमान है पर उसका अपकार स्वरूप चेतन्य मंडल में हमेशा क़ायम रह सक्ता है, और जिस क़दर ऊंचे चढ़ाया जावे, उसी क़दर सूक्षम होता चला जाता है। इसवास्ते जो लोग कि अंतर में ध्यान करते हैं, वह इस अपकार स्वरूप का तसव्वुर करते हैं, और उसको बराबर संग रखते हैं, वह स्वरूप कभी नहीं नाश होता या बदलता है, और एक दिन निज स्वरूप से मिला कर छोड़ेगा। यह भेद लोगों को मालूम नहीं है, इस सबब से मन मत ध्यान करते हैं ॥

१५–कुल मालिक का निज स्वरूप निराकार और रूप रंग रेखा से ख़ाली और न्यारा है, पर यह स्वरूप सब स्वरूपों के, जहां तक कि रूप रंग और रेखा है, परे है। इसवास्ते जब तक कि रास्ते में कुल स्वरूपों से, जो कि उस स्वरूप ने वक्त उतार आदि धार के दरजे ब दरजे धारन किये हैं, न मिलेगा, तब तक निज स्वरूप का दर्शन किसी सूरत में हासिल नहीं हो सक्ता॥

१६–इस वास्ते जो जीव कि मुताबिक़ राधास्वामी मत के उपदेश लेकर अंतर और बाहर भक्ति भाव में बरतेंगे, वही एक दिन सतलोक में पहुंच कर सत्त पुरुष का दर्शन पावेंगे। और फिर राधास्वामी दयाल के निज स्वरूप का जो कि रूप रंग और रेखा से न्यारा है, दर्शन पाकर परम आनन्द को प्राप्त होंगे॥

१७–अब ख्याल करो कि जब तक कि बाहर से सतगुरु से मिलकर, भेद भाव रास्ते का और तरीक़ा चलने का मालूम नहीं होगा, और सतगुरु आप दया करके मेहर और मदद नहीं फ़रमावेंगे, तब तक अंतर के स्वरूप और फिर निज स्वरूप से हरगिज़ मेला नहीं होगा, और न रास्ता तै हो सकेगा॥

१८–इसवास्ते जीव के सच्चे उद्धार के मुआमले में

महिमां और मौजूदगी गुरु स्वरूप मालिक की निहा-यत ज़रूरी है, बग़ैर उनकी दया और मदद के कुछ काम नहीं बन सक्ता यानी न तो भेद भाव और तरीक़ा अभ्यास का मालूम हो सक्ता है, और न सच्चे मालिक और संत सतगुरु की प्रीत और प्रतीत हिरदे में पैदा हो सक्ती है और न बढ़ सक्ती है। और न मेहर और दया के परचे अन्तर और बाहर मिल सक्ते हैं, कि जिन से बिस्वास चरनों में बढ़े, और नई २ उमंग जागे। फिर सुरत और मन का सिम-टाव और चढ़ाई किस तरह होवे ॥

१९-जितने मत की दुनियां में जारी हैं उन सब में थोड़ी बहुत कार्रवाई बाहर मुखी है, और अंतर मुख कार्रवाई का ज़िकर बहुत कम है, और जो कहीं कहीं इस क़िसम की कार्रवाई जारी भी है, तो नीचे के मुक़ामात में, और चढ़ाई बहुत कम है। इस सबब से बहुत कम जीव ब्रह्मान्ड में पहुंचते हैं, और माया के घेर के पार कोई भी नहीं जा सक्ता ॥

२०-इस वास्ते गुरु स्वरूप की महिमां हर तरह से और हर हालत और हर समय में ज़बर है, और हर स्वरूप नाम ब्रह्म का है उसकी महिमां गुरु स्वरूप के मुक़ाबले में कम है। क्योंकि उसने जीव को

हवाले ब्रह्मा बिश्नु महादेव और शक्ती के करके संसार में पैदा किया, और माया के भोग और पदार्थों में बांधा सो अनेक तरह के दुख और कलेश दुनियां में जीव सहते हैं और जनम मरन के चक्कर में पड़े हैं, और अपने २ करमों का फल भोगते हैं, कोई उनका सच्चा हितकारी और छुड़ानेवाला नहीं मिलता, इस सबब से हमेशा दुख सुख भोगते हैं, और माया के घेर में से निकल नहीं सक्ते ॥

२१–गुरु स्वरूप की महिमां यह हैं, कि ऐसे फंसे हुये जीवों को दया करके निकालते हैं। यानी बचन सुनाकर और उपदेश देकर और अभ्यास कराकर जीव का अस्थान बदलते चले जाते हैं, यानी पिंड देश से ब्रहमान्ड में और ब्रहमान्ड से चढ़ा कर राधास्वामी देश में पहुंचाते हैं, कि जहां काल और करम और कष्ट और कलेश और जनम मरन बिल्कुल नहीं है। और वहां पहुंच करके जीव अपने सच्चे माता पिता राधास्वामी दयाल का दर्शन पाकर अमर आनंद को प्राप्त होता है ॥

बचन २०

जब तक कि जड़ चेतन्य की गांठ न खुलेगी तब तक मन बिकारी अंगों में थोड़ा बहुत बर्तता रहेगा, और जब कि अंतर अभ्यास करके गांठ खुल गई तब कोई बिकार निकट नहीं आवेगा ॥

१–जिस मुक़ाम पर कि सुरत यानी निर्मल चेतन्य मन और माया के साथ मिलकर नीचे को उतरा वहीं जड़ और चेतन्य की आपस में गांठ बंध गई और यह मुक़ाम त्रिकुटी का है ॥

२–नीचे उतर कर हर मुक़ाम पर नई मिलौनी होती गई और नई गांठ भी लगती गई ॥

३–अब नेत्र के अस्थान पर जहां कि जाग्रत अवस्था में सुरत की बैठक है, इस क़दर गहरी मिलौनी सुरत चेतन्य की साथ मन और माया और पांच दूत और दस इंद्रियों के हो गई है, कि इन सब का इस अस्थान पर भारी ज़ोर और शोर है, और जीव की ताक़त नहीं कि वह इनको अपने बल से हटा सके ॥

४-इसवास्ते सब जीव लाचार होकर मन और माया की धारों और तरंगों में बह रहे हैं, और दिन दिन बहते चले जाते हैं ॥

५-जब कभी इत्तफ़ाक़ सुन्ने परमार्थी बचन का होता है, सो उस वक़्त जीव को भूल और ग़फ़लत जो कसरत से संसार में फैल रही है और निबलता मन और इंद्रियों की वास्ते रोकने या टालने धारों के नज़र आती हैं ॥

६-बाज़े जीव जो अक्सर दुनियां के हाल को मुलाहिज़ा करते रहते हैं, और अपने मन और इंद्रियों पर भी, वास्ते दुरस्ती से चलने के किसी क़दर ज़ोर भी देते हैं, वे संतों के सतसंग में आकर निहायत खुश होते हैं, और वहां सब सामान सच्चे मालिक की परख पहिचान, और जीव के सच्चे उद्धार का तइयार देख कर निहायत उमंग और दीनता के साथ, संत सतगुरु के चरनों में प्रीत और प्रतीत करते है, और दिन २ सतसंग और सेवा और अभ्यास करके अपने भाग को बढ़ाते हैं ॥

७-संत सतगुरु की महिमां कौन वर्णन कर सके है, कि जो दया दृष्टी करें तो अनेक जीवों को चाहे जैसे होवें खींच कर चरनों में लगा लेवें, और बिरह

और प्रेम अंग की थोड़ी बहुत बख़्शायश करके, उन जीवों का कारज बनाते चले जावें ॥

८—जो जड़ चेतन्य की गांठ वक़्त उतार सुरत के अंतर में लग गई है वह बग़ैर कृपा संत सतगुरु के नहीं खुल सक्ती। क्योंकि जब वे अपनी मेहर और दया से मन और सुरत को समेट कर अंतर में चढ़ावेंगे, उस वक़्त मन और माया की धारें ख़ुद ब ख़ुद सुरत चेतन्य की धार से, आहिस्ते २ न्यारी होती जावेंगी; और बजाय सुरत चेतन्य को दबा लेने के, अब उसकी धार के आसरे अंतर में चलेंगी, और जहां तक उनकी हद्द है अंतर में उलटेंगी ॥

९—जितने बिकारी अंग कि इन धारों के एक जगह जमा होने से, या कुछ इनके सिमटाव होने से पैदा हुए थे, अब इन धारों के मुतफ़र्रिक होने से कमज़ोर बल्कि दूर हो जावेंगे। और जो कि सकारी अंग सतसंग और अभ्यास करके पैदा हुए हैं, वे जीव को उसकी सफ़ाई और प्रीत और प्रतीत के बढ़ाने में मदद देते हैं, और दिन २ बढ़ते जाते हैं ॥

१०—इस बात की जांच हर कोई जो सच्चे परमार्थ का गाहक है, चंद रोज़ संत सतगुरु का सतसंग करके अपने अंतर और बाहर कर सक्ता है, कि किस क़दर

सहूलियत और आसानी और जल्दी के साथ सच्चे परमार्थी के मन और सुरत और इंद्रियों की गढ़त और दुरस्ती और सफ़ाई होती है, और किस क़दर दया के साथ प्रेम की बख़्शायश करके, परमार्थी के सुरत का सूत चरनों में कुल मालिक राधास्वामी दयाल के लगाया जाता है ॥

११–यह सब महिमा संत सतगुरु की है, जो कोई सच्चा उद्धार चाहे, उसको मुनासिब है कि उनका या उनकी संगत का खोज करके, जिस क़दर जल्द मुमकिन होवे उसमें शामिल होकर, अपना परमार्थी भाग जगावे और भेद भाव समझ कर और जुगत अभ्यास की लेकर कमाई शुरू करे, और चरनों में कुल मालिक राधास्वामी दयाल के, और भी संत सतगुरु के जो उनका दर्शन भाग से मिल जावे प्रीत और प्रतीत करे, और दिन २ बढ़ाता जावे, और फिर दया को अंतर और बाहर निरखता जावे, कि किस क़दर उस की सम्हाल होती है ॥

१२–खुलासा यह है कि कुल मालिक राधास्वामी दयाल और संत सतगुरु जो जीव कि सच्चे मन से उनकी सरन में आया और जो कार्रवाई कि उन्हों ने बताई है, वह सचौटी के साथ जिस क़दर बन

सके करने लगा, तब वे ज़रूर उसके जीव का कारज जिस तरह मुनासिब होगा, सब तरह से दुरुस्त बना-वेंगे। और एक दिन निज घर में पहुंचा कर बासा देवेंगे, कि जहां काल का कष्ट और कलेश और मन और माया का भरम और धोखे की रचना नहीं है॥

राधास्वामी दयाल की दया
राधास्वामी सहाय

शब्द तुलसी साहब के।

रेख़ा १

गगन के गुमठ पर गैब का चांदना।
संत बिन भेद नहिं हाथ आवे ॥ १ ॥
हद्द बे हद्द के पार परचा मिले।
होय निज हंस सोइ महल पावे ॥ २ ॥
अमरपुर बास जहँ नाहिं जम त्रास है।
काल का अमल बल नाहिं जावे ॥ ३ ॥
दास तुलसी हज़ूर दरबार है।
अलख और ख़लक़ दोउ नाहिं आवे ॥ ४ ॥

रेख़ा २

अगम गढ़ राह को क़िला चढ़ तोड़िया।
नृपति मन राय दल मोह मारा ॥ १ ॥
ज्ञान क़ासीद बीबेक नाकी बने।
ज़बर सत संग दी ख़बर सारा ॥ २ ॥

क्षिमा संतोष बैराग दल दया का ।
घुरे नीशान चढ़ किला घेरा ॥ ३ ॥
सुरत चढ़ बुरंज की सुरंग में धसि गई ।
गरज गिर नाल बल बुरज ढारा ॥ ४ ॥
पाँच पच्चीस मन मोरचा मिट गये ।
मोह मन जकड़ ज़ंजीर डारा ॥ ५ ॥
सत्त का अमल दल सुरत की हाकिमी ।
हुक्म जहँ होत है शब्द न्यारा ॥ ६ ॥
दास तुलसी गई फ़तह कर अगम को ।
सुरत सज मिली जहँ प्रीतम प्यारा ॥ ७ ॥

रेख़्ता ३

बेद पुरान कुरान में देखले ।
नेतही नेत कर कहत भागी ॥ १ ॥
जाहि की साख पंडित पढ़ सब कहैं ।
बूझ बिन सूझ पढ़ तिमिर लागी ॥ २ ॥
अगम रस राह गुर संत बिन अंत ना ।
जक्त मति मंद का संग त्यागी ॥ ३ ॥
खोल के चशम लख ख़सम को खोज ले ।
जान भ्रम खान भौ भीख माँगी ॥ ४ ॥
दास तुलसी घर घट में खोज ले ।
पट के खुले से सुरत लागी ॥ ५ ॥

रेख़्ता ४

देख ले जक्त में लख कोई अमर है ।
मरन और जन्म विच जीव सारे ॥ १ ॥
अंड और पिंड चर अचर को निरख ले ।
काल ने घेर कर पकड़ मारे ॥ २ ॥
देख दिन चार संसार की कार है ।
पार बिन सार का भेद हारे ॥ ३ ॥
दास तुलसी कहैं बैठ सत संग में ।
माया और मोह कर दूर सारे ॥ ४ ॥

रेख़्ता ५

संत की राह घर अगम के पार है ।
सार सोई न्यार नहिं जक्त जाना ॥ १ ॥
मनी के मान से धनी को ना लखा ।
संत और साध सोइ नाहिं माना ॥ २ ॥
पकड़ जम जकड़ के बँधे जंजीर में ।
अरे बे पीर पड़े नर्क खाना ॥ ३ ॥
दास तुलसी कहै संत की टहल में ।
जीव की काल नहिं करत हाना ॥ ४ ॥

रेख़्ता ६

जगत मध मान में माता ।
खुदा का खौफ़ नहिं लाता ॥

क़ज़ा सिर पर खड़ी द्वारे ।
फ़रिश्ते तीर तक मारैं ॥ १ ॥
कमानी काल के हाथा ।
करे जम जीव की घाता ॥
पड़ा मग़रूर क्या सोवे ।
बहुर फिर सीस धुन रोवै ॥ २ ॥
अगर यों सोच अपने में ।
गये दिन बीत सपने में ॥
बदन महा पवन पानी ।
मलामत हाड़ मल सानी ॥ ३ ॥
गंदगी बीच अंदर में ।
बदन बद बोय मन्दर में ॥
अरे नित क्या अन्हाता है ।
मैल मन का न जाता है ॥ ४ ॥
करेले नीम की भाई ।
कभी जावे न कड़वाई ॥
अरे दुर्गंधि का भांडा ।
निरखि कोइ संत ने छांड़ा ॥ ५ ॥
ख़लक़ दो दिन तमाशा यों ।
परख पानी बताशा ज्यों ॥
अगर यों जान ज़िंदगानी ।
अबर ओला घुले पानी ॥ ६ ॥

अवस तन यों बिनसता है।
इधर घर का न रस्ता है॥
मिरग की नाभ कस्तूरी।
भटक ढूंढे जो बन मूरी॥ ७॥
तेरा महबूब तेरे में।
वस्तु गई ढूंढ डेरे में॥
सगुनियां संत से पावे।
आप में आप दरसावे॥ ८॥
करै सतसंग मन टूटै।
मलामत बुद्धि की छूटै॥
गुरू मिलै मैल को काढ़ै।
ज्ञान की उर्गता बाढ़ै॥ ९॥
सुरत जब सीलता पावे।
गगन की राह चढ़ जावे॥
होय पति प्रीत निरधारा।
मिलै तुलसी पदम प्यारा॥ १०॥

रेख़्ता ७

अली इक बात सुन सुलटी।
बिना समझे लगै उलटी॥
कही सब संत ने बोली।
गूढ़ मत गुप्त नहिं खोली॥ १॥

सुरत मन बुद्धि नहिं जावै ।
लखन में कौन विधि आवै ॥
अभी नहिं वेद ने जाना ।
कहत कर नेत गुहराना ॥ २ ॥
जुगत जोगी नहीं जानी ।
ज्ञान नहिं ध्यान विज्ञानी ॥
जगत और भेष नहिं जानैं ।
पढ़े पंडित भरम मानैं ॥ ३ ॥
सकल त्रैलोक लौ गावै ।
निरंजन जोत ठहरावै ॥
अगम रस राह नहिं सूझै ।
संत मत कौन विधि बूझै ॥ ४ ॥
अस्त रवि होत अँधियारा ।
हिये तम रूप में सारा ॥
मिलैं गुरु गैल बतलावैं ।
तिमर तन बीच से जावै ॥ ५ ॥
लखै तब संत के बैना ।
सुरत सुरमां खुले नैना ॥
तरक ताली खुले ताला ।
निरख तहँ होत उजियाला ॥ ६ ॥
अधर घर सुरत चढ़ धावै ।
अगम गति गूढ़ तब पावै ॥

सुरत जब उलट कर बूझा ।
उलट सब सुलट कर सूझा ॥ ७ ॥
तुलसी तन् बीच में हेरा ।
सुरत मन बुद्धि को फेरा ॥
कहन कुछ और विधि गावै ।
उलट की सुलट कर भावै ॥ ८ ॥

रेख़्ता ८

वेद मत मूढ़ ठहरावै ।
संत गति गूढ़ नहिं पावै ॥
पड़े भ्रम जाल में भूला ।
वेद बस कर्म के सूला ॥ १ ॥
करै ख़ाली इष्ट मन रचके ।
मुये भ्रम भाव सब पचके ॥
जीवत कोई दरश नहिं पावै ।
मुये पर मुक्ति गोहरावै ॥ २ ॥
अली यह जगत सब अंधा ।
पड़े बस काल के फंदा ॥
कहन नहिं संत की भावै ।
बाट कहो कौन विधि पावै ॥ ३ ॥
भूल जुग चार से आई ।
खानि बस मैल मन माहीं ॥

भटक नरदेह अब आया ।
ज्ञान चित चीन्ह घर पाया ॥ ४ ॥
गहे सतसंगत के चरना ।
निकर भौ सिंध से तरना ॥
समझ लख जीव को काजा ।
मरै सब जक्त की लाजा ॥ ५ ॥
तुलसी तन छूट जब जावे ।
बहुर नरदेह नहिं पावे ॥
पाहन और इष्ट पानी का ।
झूंठ भ्रम खान जाने का ॥ ६ ॥
निकर निरवार नहिं पावै ।
समझ सतसंग से आवै ॥
जगत दिन चार का सँग है ।
भीख भौ खान में मगिहै ॥ ७ ॥

ग़ज़ल ९

बिंदाबन बिंद कीन सोई सांचा ।
गो सोई गोपिन के साथ बन २ मांचा ॥ १ ॥
गो में मन विँधा सोई गोविँद भाई ।
मनुवां गोपाल मूढ़ इंद्रिन माहीं ॥ २ ॥

ग़ज़ल १०

इन्द्री बसुदेव भेव सेवे मन को ।
नाद सोई नंद फंद जाने तन को ॥ १ ॥

जिसने तन सोध लिया सोई जसोधा।
पंडौ तत पांच और झूंठा सौदा ॥ २ ॥

ग़ज़ल ११

करते ईमाम हसन हुस्न ताज़िया।
बांस पिंज छील कागज़ों से मढ़ लिया ॥१॥
मुहर्रम दस रोज़ बाज गाज मतलबी।
नौमी तारीख़ चांद रात क़त्ल की ॥ २ ॥
झ्याने उठ फेर शहर पानी डारैं।
रोवें सिर कूट कूट छाती मारैं ॥ ३ ॥
बांसों का बना वृत्त कागज़ केरा।
करते चालीस रोज़ सोग घनेरा ॥ ४ ॥
ऐसे बेहोश बात बूझैं नाही।
कागज़ सँग पिंज रंग रोवैं भाई ॥ ५ ॥
तुलसी यह तर्क तुर्क जानें नाही।
क़ाज़ी और मुल्ला दोउ अंधे भाई ॥ ६ ॥

ग़ज़ल १२

ब्राह्मण दसरथ का पूत राम को गावें।
कहि २ भगवान ताहि जक्त सुनावें ॥ १ ॥
माता सुत पूत कौसिला का कहाई।
भरत चत्र लछमन का कहिये भाई ॥ २ ॥

यह तौ जग जीव बीच कर्म विचारा ।
ब्राह्मण जेहि भाष कहैं ब्रह्म अपारा ॥ ३ ॥
पढ़ि २ कर तत्त तीर सूझै नाहीं ।
अंधे से अंध राह क्यों कर पाई ॥ ४ ॥
तुलसी सब जक्त भ्रष्ट ब्राह्मण कीना ।
मालिक मग छांड लोभ मारग लीना ॥ ५ ॥

ग़ज़ल १३

रमता है राम तेरे घट के माहीं ।
घट २ में खोज कहूं अंते नाहीं ॥ १ ॥
जो २ ब्रहमंड तेरे पिंड पसारा ।
अंदर में देख कहूं है नहीं न्यारा ॥ २ ॥
कीन्हा बैराट रूप माया घेरा ।
भौमें भगवान राम जम का चेरा ॥ ३ ॥
चांद और सूर नैन ताही केरा ।
राहु और केत दैत पीर घनेरा ॥ ४ ॥
अपनी जो आप पीर भोगे भाई ।
तासे तौ मुक्ति कहौ कैसे पाई ॥ ५ ॥
भूला बैराट मुक्ति उसकी नाहीं ।
आये औतारी की कौन चलाई ॥ ६ ॥
पत्थर की मूरत का राम बनाया ।
सांचे जो राम काल धर २ खाया ॥ ७ ॥

सीता और राम कहो बन के जोगा ।
कर्मन के बंद बीच करते भोगा ॥ ८ ॥
जड़ सँग जो चेतन की गाँठ बँधानी ।
ताते बेहाल राम चारों खानी ॥ ९ ॥
कहते तुम सब में सब माहिं बिराजा ।
रहता जग बीच खान सब में साजा ॥ १० ॥
जहँ लग यह अंड खंड कीन पसारा ।
पिंडा चौरासी लाख तुलसी सारा ॥ ११ ॥

अड़ियल १४

ढिंग है पूरन वस्तु क़सद कोइ ना करै ।
गुरू संत बिन भेद पार कैसे परै ॥
पढ़ि पढ़ि वेद पुरान ज्ञान कर २ मुये ।
अरे हांरे तुलसी कथा सुनै सोइ जौन पौन भूते भये ॥

अड़ियल १५

टोय लिया सतसंग रंग गुरु ने दिया ।
जुगन २ तज भूल आदि घर को लिया ॥
शिव ब्रह्मा और वेद बिश्नु नाहिं आ सके ।
अरे हांरे तुलसी निरंकाल सोइ काल जीत नाहिं जा सके ॥

अड़ियल १६

डगर संत का पंथ अंत कहो को लखै ।
जग पंडित और भेष भूल भौ में पके ॥

तीरथ नेम अचार भार सिर पर लिया ।
अरे हांरे तुलसी करम धरम अभिमान जानकर यह किया

अड़ियल १७

हक्क हजूरी संत पंथ कोइ रहै न भाई ॥
सत साहब सिरदार और कोइ दूजा नाईं ॥
कागज़ स्याहीं क़लम रहै नहिं लिखने हारा ।
अरे हांरे तुलसी आदि अंत नहिं हता नही सत असत पसारा

अड़ियल १८

नींच ऊंच नहिं देख पेख सब एक पसारा ।
नहिं ब्राह्मण नहिं शूद्र नहीं क्षत्री कोउ न्यारा ॥
नहीं वैस की ज़ात सकल घट एक पसारा ।
अरे हांरे तुलसी जो कर जाने दोय खोय तिन जनम बिगारा॥

अड़ियल १९

शब्द शब्द सब कहैं शब्द का सुनो ठिकाना ।
सार शब्द है न्यार पार निर शब्द कहाना ॥
सुन्न शहर से शब्द आदि नित उठे अवाज़ा ।
अरे हांरे तुलसी निरशब्दी धुन सुन्न सुन्न से न्यारा गाजा॥

अड़ियल २०

निरशब्दी बिन शब्द लिखन पढ़ने में नाहीं ।
लिखन पढ़न में भया शब्द में आया भाई ॥

अक्षर जहँ लग शब्द बोल में सबहि कहाया ।
अरे हांरे तुलसी निःअक्षर है न्यार संत ने सैन बुझाया ॥

अड़ियल २१

परम हंस कहैं ब्रह्म, झूंठ सब कर्म फँसाना ।
जड़ चेतन की गांठ ब्रह्म कहु कैसे जाना ॥
चेतन चढ़ै अकाश फोड़ ब्रहमंड निहारा ।
अरे हांरे तुलसी बिना पिंड ब्रहमंड कहन नहिं ताकी सारा ॥

अड़ियल २२

जग पंडित और भेष भेद जोगी नहिं जानै ।
जग इन्द्री रस भोग जोग इन्द्री नहिं मानै ॥
संग्रह त्यागन झूंठ सकल यह मन को खेला ।
अरे हांरे तुलसी संग्रह त्यागन करम भरम दोउ फिर २ पेला ॥

अड़ियल २३

पड़े जगत के माहिं भक्ति सुपने नहिं भावै ।
ब्राह्मण पंडित भेष सभी पुनि दान करावै ॥
जिन कीन्हा तन साज ताहि से नेह न लावै ।
अरे हांरे तुलसी जब जम पकड़े बांह, पूत को कौन छुड़ावै ॥

अड़ियल २४

चले जात नर भूल सूल तासे सहै ।
सतसँग मिले न अंत संत बिन को कहै ॥

सतगुरु मिलें दयाल भेद कहैं सूर को ।
अरे हांरे तुलसी करम काल को मेटि करैं जम दूर को ॥

अड़ियल २५

बड़ा जगत जंजाल जाल जम फांसी डारी ।
ज्यौं धीमर जल माहिं पकड़ कर मछली मारी ॥
निकर जाय जब प्रान काल चोटी धर खीसा ।
अरे हांरे तुलसी पड़ि हो जम मुख माहिं डाढ़ चक्की ज्यों पीसा

अड़ियल २६

मुशकिल हो आसान जान कोई ना करै ।
करै तत्त का खोज काज घट में सरै ॥
बाहर है सब झूंठ लूट जम लेयँगे ।
अरे हांरे तुलसी तन छूटे बेहाल बहुत दुख देयँगे ॥

अड़ियल २७

भौजल अगम अथाह थाह नहिं मिले ठिकाना ।
सतगुरु केवट मिलैं पार घर अपना जाना ॥
जग रचना जंजाल जीव माया ने घेरा ।
अरे हांरे तुलसी लोभ मोह बस पड़े करैं चौरासी फेरा ॥

अड़ियल २८

छिन छिन सुरत सँवार लार ढंग के रहो ।
तन मन दरपन माँज साज श्रुति से गहो ॥

लगन लगे लख पार सार तब पाइया ।
अरे हांरे तुलसी संत चरन की धूर नूर दरसाइया ॥

अड़ियल २९

जिन २ सुरत सँवार काल डर ना रही ।
चढ़ी गगन पर धाय पाय पति पै गई ॥
लिया अगम पुर धाम जाय पिउ भेटिया ॥
अरे हांरे तुलसी जनम २ भ्रम भाव दाव दुख मेटिया ॥

अड़ियल ३०

ठौर ठिकाना ठाँव गांव पिया को कही ।
निरंकार के पार तहां तुलसी रही ॥
सत्तनाम सुख धाम अमरपुर लोक है ।
अरे हांरे तुलसी चौथा पद जद जाय संत सोई कहै ॥

अड़ियल ३१

आदि अंत सब संत सत्त कर कहत सुनाई ।
अगम निगम का भेद देत घट में दरसाई ॥
संत बिना नहिं पार सार को कहै ठिकाना ।
अरे हांरे तुलसी सूरत चढ़ी अकाश फोड़ कर गई निशाना ॥

अड़ियल ३२

भगी सुरत घट माहिं जाय जो देखा भाई ।
सुखमनी सेज सँवार सुन्न में सुरत लगाई ॥

मुकर माहिं दीदार दरश कीन्हा सोई जाने।
अरे हांरे तुलसी ज्यों स्वांती की बूंद सोप बिरहन पहिचाने।

अड़ियल ३३

रात दिवस कर खोज रोज़ रस ज्ञान सुनावै।
घट घट उठै अवाज़ तास कोउ भेद न पावै॥
पिंड माहिं ब्रह्मंड सकल बिधि रहा समाई।
अरे हांरे तुलसी खोल हिये की आंख संत दीन्हा दरसाई॥

कुंडलिया ३४

गगन मंडल के बीच में झिलमिल झलतक नूर।
झिलमिल झलकत नूर सूर कोइ बिरला पावै॥
करे तत्त का खोज नहीं चौरासी जावै।
सतगुरु मिलैं दयाल भेद सब उन से पावै॥
करै संत की टहल महल की खबर लखावै।
तुलसी मुर्दा जब बनै तब पावै गुरु पूर॥
गगन मंडल के बीच में झिलमिल झलकत नूर॥

कुंडलिया ३५

सुरत शब्द चीन्हें बिना यह सब झूंठा खेल।
यह सब झूंठा खेल सैल श्रुति सहज समावै॥
दरपन मांजे राख भाष सतगुरु अस गावै।
सत सँग करै बनाय लखे तब सुरत निशाना॥

भवन गवन कियो वास सुरत घर अपना जाना ।
तुलसी झमक चढ़ाय के पति से कीन्हा मेल ॥
सुरत शब्द चीन्हें बिना यह सब झूठा खेल ॥

कुंडलिया ३६

शब्द शब्द सब कहत हैं और शब्द सुन्न के पार ।
शब्द सुन्न के पार सार सोइ शब्द कहावै ॥
पच्छिम द्वार के पार पार के पार समावै ।
दो दल कँवल मँझार मध्य के मध्य में आवै ॥
संतन दिया लखाय सार सोइ शब्द कहावै ।
तुलसी सत सतलोक से कहुँ कुछ भेद निनार ॥
शब्द २ सब कहत हैं और शब्द सुन्न के पार ॥

सवैया ३७

एक अगत्त अगाध अनाम ।
सो धाम न गाम न ठौर ठिकाना ॥ १ ॥
जहां लख अलख का खेल नहीं ।
सो खल्क बिचारेने काहे को जाना ॥ २ ॥
ताकी बिधी कोइ संत लखे ।
सो अपेल अकेल का रूप न नामा ॥ ३ ॥
आतम हंस प्रमातम बंस ।
यह दोऊ नहीं नहिं देश पिछाना ॥ ४ ॥

जहां ब्रह्म न जीव अजीव को बास।
सो चंद न सूर ज़मीं असमाना ॥ ५ ॥
पिंड ब्रह्मंड जो तत्त नहीं।
जहां सत्तहु लोक नहीं अस्थाना ॥ ६ ॥
सो साहब सत्त के पार बसै।
सो अगार अनाम जो संत समाना ॥ ७ ॥
जाकी बिधी तुलसी लख पाई।
सो देख अनाम को जान बखाना ॥ ८ ॥

पस्तो ३८

प्यारे बिना पलंग पै जाय हाय क्या करूं।
अलीये अबर की पीर ज़बर सबर बिन मरूं ॥ १ ॥
पाटी पकड़ के सीस रैन रोय के रही।
प्यारी पिया बे पीर बात नेक ना कही ॥ २ ॥
बीती बदन पै क़हर लहर लगन लाल की।
आह फांसी फँसी मोह ज़बर जक्त जाल की ॥ ३ ॥
ज्यौं पपी की प्यास पीव रात भर रटी।
अरी स्वांति बिना बुंद भोर भ्यान पौ फटी ॥ ४ ॥
भटकी भौ भेष देख नेक नज़र में।
तुलसी मुर्शद की मेहर मूर अजर में ॥ ५ ॥

पस्तो ३९

मेरे दरद की पीर कसक किस्से मैं कहूं ॥ टेक ॥
ऐसा हकीम होय जोइ जान दे दहूं ।
खटके कलेजे बीच बान तीर से सहूं ॥ १ ॥
घायल की समझ सूर चूर घाव में रहूं ।
हीये हवाल हाल गला काटि के लहूं ॥ २ ॥
जैसे तड़फती मीन नीर पीर ज्यों सहूं ।
जैसे चकोर चंद चाह चित्त से चहूं ॥ ३ ॥
सोची सुबह और शाम पिया धाम कस गहूं ।
तुलसी बिना मिलाप छुरी मार मर रहूं ॥ ४ ॥

पस्तो ४०

महबूब से मिलाप आप अर्ज़ यह करूं ॥ टेक ॥
हरदम् क़दम के पास सीस चरन पै धरूं ।
बिन २ दीदार यार प्यार पेंच बिन मरूं ॥ १ ॥
हर वक्त जक्त बीच ज़ुलम जार में जरूं ।
मेरा उबार बार बार क़दम से तरूं ॥ २ ॥
होवे रहिम की रम्ज़ समझ सुरत को भरूं ।
सतगुरु दयाल हुक्म ज़ोर ज़ुलम से लरूं ॥ ३ ॥
तेरी सबकूफ़ही में बे फ़हम सी फिरूं ।
ताक़त बिना हवास होश तुलसी मैं मरूं ॥ ४ ॥

मंगल ४१

अली अलबेली नारि पार पिया पै चली ।
सुंदर कीन सिँगार सार स्रुति से मिली ॥ १ ॥
चढ़ी महल पर धाय राह रवि कोट है ॥
जैसे प्रीत चकोर चंद चित चोट है ॥ २ ॥
अधर अटारी माहिं लगन पिय से लगी ।
जैसे डोर पतंग संग रँग में पगी ॥ ३ ॥
देखि पिया को रूप भूप कोइ ना लपै ।
ज्यौं भुवंग मणि भाव भूमि भूमी दिपै ॥ ४ ॥
तेजपुंज पिया देश भेष कहो को लखे ।
ऐसा अगम अनूप जाय कहो को सके ॥ ५ ॥
मैं पिया की बलिहार प्यार मोहिं से कियौ ।
दीन पलंग सुख साज काज हरषौ हियौ ॥ ६ ॥
जाऊं नित २ सैल केल पति से करूं ।
जिनकी तिनको लाज काज पति से सरो ॥ ७ ॥
तुलसी कहै विचार सार सब से कही ।
बिन सतगुरु नहिं पार भिन्न कैसे भई ॥ ८ ॥

सावन ४२

सत सावन बरषा भई सुरत बही गंग धार ।
गगन गली गरजत चली उतरी भौजल पार ॥ १ ॥

भादौं भजन विचारिया शब्दहि सुरत मिलाप।
आप अपनपौ लख पड़े छूटें छल बल पाप ॥ २ ॥
कुसल कुँवार सतसंग में रंग रँगो सतनाम।
और काम आवें नहीं त्रिया सुत बित धन धाम ॥ ३ ॥
कातिक करतब जब बने मन इन्द्री सुख त्याग।
भाग भरम भौरस तजे छूटै तब लौ लाग ॥ ४ ॥
अगहन अमीं रस बस रहौ अंमृत चुवत अपार।
पाय परस गुरु को लखौ होय परम पद पार ॥ ५ ॥
पूस ओस जल बुंद ज्यौं बिन सत बंदन बिचार।
तन बिनसै पावै नहीं नरतन दुर्लभ छार ॥ ६ ॥
माह महल पिया को लखो चखो अमर रस सार।
वार पार पद पेखिया सत सूरत की लार ॥ ७ ॥
फिर फागुन सुन में तको शब्दा होत रसाल।
निरख लखौ दुरबीन से ज्यौं मत मीन निहाल ॥ ८ ॥
चैत चेत जग झूंठ है मति भरमौ भौ जाल।
काल हाल सिरपर खड़ा छूटै तन धन माल ॥ ९ ॥
सुनो साख बैसाख की भाषि गुरन गत गाय।
सब संतन मत की कहूं बूझै सत मत पाय ॥ १० ॥
ज़बर जेठ जग रीत है प्रीत परस रस जान।
आन बात बस ना रहौ सतमत गति पहिचान ॥ ११ ॥
जो असाढ़ अरज़ी करौ धरो संत स्रुति ध्यान।

ज्ञान मान मत छांड़ के बूझो अकथ अनाम ॥ १२ ॥
बारह मास भाषिया जानें संत सुजान ।
तुलसीदास विधि सब कही छूटै चारो खान ॥ १३ ॥

सावन ४३

पिया बिन सावन सुख नहीं हिय बिच उठत हिलोर ।
बोल बचन भावै नहीं तन मन तड़फे अतोल ॥१॥
पिय बिन बिरहन बावरी जिय जस कसकत हूल ।
सूल उठे पति पीर की धन सम्पति सुख धूल ॥२॥
इत बैरी बदरा भबे गरज घुमर घन घोर ।
घुमर घुमर घर द्वार में कोकै दादुर मोर ॥३॥
बीज कड़क कसकस कहूं सुधि बुध रहत न हाथ ।
साथ मिले पिय पंथ को मारग चलूं दिन रात ॥४॥
सुरत निरत डोरी करूं मन मत खंम गड़ाय ।
लै की लहर ऊपर मिली झूली सुरत चढ़ाय ॥५॥
यह सावन तुलसी कहै खोजो सतसँग माहिं ।
ज्ञान गवन सज्जन करै बूझै सत मत पाय ॥६॥

सावन ४४

पिया बिन बिरहन बावरी दइ दुख दियोरी कठोर ।
मोर खबर सुधि ना लई जों बिन चन्द चकोर ॥१॥
चकवा चकई बिछोह की बरनों कौन बयान ।
नदिया पार चकवा रहै चकई वार बिलाप ॥२॥

रैन बिलग सुनती हती मोरे हिये बरतत आज ।
बिलग पिआ से मरिबो भलो यह दुख सहो न जात ॥३॥
सब सिंगार फीका लगे पिया बिन कछू न सुहाय ।
हाय हाय तड़फ़त रहूं कहो केहि जाय सुनाय ॥४॥
लोग बटाउरी बिदेश के नहिं पर पीर पिछान ।
चरन बिना चहुँ दिश फिरी नहिं कुछ जिया जुड़ान ॥५॥
कल्प कल्प कलपत भये जुग जुग जोवत बाट ।
कोई री सुहागन ना मिली पूछों पिया घर घाट ॥६॥
नर तन नगर डगर मिले कहें सब संत सुजान ।
फिर पशु पंछिन में नहीं जड़वत जीव भुलान ॥७॥

सावन ४५

मोरे पिय छांडीरे बिदेश में सइयाँ सँग भयोरी बिछोह।टे०।
बैरन नींद न आवई सखी सुख भोर न होय ।
रोय रैन अँखियां बहीं सखी भर स्वांस उसास ॥१॥
बिरह लहर नागिन डसे बिन सइयां तड़फ़ उचाट।
चमक उठे जैसे बीजुली छतियन धड़क समात ॥२॥
प्रबल आगिन हिय में उठे येरी धुवां प्रघट न होय।
सोई अकेली सेज पै पूरब लिख्यो री बिजोग ॥३॥
ख़बर खोज कासे कहूं पतियां लिखूं केहि देश ।
अंग भभूत रमाइहौं करिहौं मैं जोगिन भेष ॥४॥
सतगुरु सोध सरने रहूं गहूं पिया डगर निवास ।
मोर मनोरथ सुरति से तुलसी मिलन मिलाप ॥६॥

चरचरी ४६

पीकी मोहिं लहर उठत खुटत रैन नाहीं ।
कहा कहूं करमन की रेख हिय की दरदाई ॥ टेक॥
अँखियां ढुर ढुरत नीर सखियां सुख नाहीं ।
पपिहा पिउ पिउ के बोल खोलत खिसियाई ॥१॥
जियरा जर जर पिरात रात रटत सांई ।
लाई स्रुति चरन सरन हित चित चिन्हवाई ॥२॥
मेरे मन की मुराद साध संगत चाही ।
खोजै खुल खुल विशेष लेखे अपनाई ॥३॥
तुलसी तत मत बिलास पास प्रेम छाई ।
पाई घर धंधक धीर रमकसी जनाई ॥४॥

चरचरी ४७

बिरह में बेहाल बिकल सुध बुध बिसराई ।
रजनी नहिं नींद नैन दीदा दरसाई ॥ टेक ॥
सखियां सुन सेज पास गाज़ परत आई ।
पलँगा पर पांव धरत नागिन डस खाई ॥१॥
तड़फत तन तोल बोल बाक बचन नाहीं ।
पल पल पी की उसास स्वांसा भरि आई ॥२॥
मोरा कुछ बल बिबेक एक चलत नाहीं ।
सतगुर बिन मेहर क़हर अजगुत दरसाई ॥३॥

तुलसी तू तरक बांध साध समझ लाई ।
गाई सब संत अंत सूरत लखवाई ॥४॥

बिलावल ४८

तुलसी जग हाल साल काल जाल माहीं ॥ टेक ॥
पंडित और भर्म भेष । देखा सब अंध अचेत ।
भूला ब्रत इष्ट टेक । पाहन लौ लाई ॥
तीरथ अस्नान ध्यान । खोजत नर चार धाम ।
ढूंढ़त पोथी पुरान । मूरत मत माहीं ॥
देखा सब जक्त भेष । नेक खोज नाहीं ॥ १ ॥
कोइ कोइ जपें इष्ट जाप । आपा चीन्हें न आप ॥
बांधे सिर पोट पाप । साफ़ नर्क जाई ॥
बूझै सतसंग सार । पावै संतन की लार ॥
मन का मद मूर मार । सार पार पाई ॥
जाना मन भूल तोड़ । पोढ़ सुरत साई ॥ २ ॥
छिन छिन तन छीन जात । बूझै नहिं एक बात ॥
तेरे कोऊ न साथ । ज़ात पांत नाहीं ॥
सम्पति सुख लार छार । निरखो सुत नाहिं नार ॥
कुटम् बंध लोक चार । भूला भल भाई ॥
यह कोउ तेरे न लार । जग असार जाई ॥ ३ ॥
तुलसी तन होत छार । यासे अगमम बिचार ॥
कीजै भौ उतर पार । नौका नसि जाई ॥

बूझै कोई संत साध । सूझै तब अंत आद ॥
जूझै चढ़ सुरत नाद । लख अनाद पाई ॥
पावै पद पुर्ष दाद । साध सुरत माहीं ॥ ४ ॥
मानौ सुज्ञान सीख । मँगि हौ भौ खान भीख ॥
भाषू अज अमर लीक । देख द्वार माहीं ॥
जनम और मरन छूट । करमन की फांस टूट ॥
सूझा मत सांच झूंठ । लूटा जग जाई ॥
तुलसी मुख कहै बैन । नैन नज़र आई ॥ ५ ॥

शब्द ४९

बिरह बिमल बैराग ।
राग तज शब्द सुनो रे ॥ टेक ॥
मिरगा रोज़ मौज बन माहीं ।
चरत फिरत भौ भाग ॥
बधिक बीन बनबीच बजाई ।
सुनत श्रवण लौ लाग ॥ १ ॥
धनुवां पकड़ पारधी मारा ।
सुधि बुधि बिसरस राग ॥
मारत बांन तान मिरगा को ।
तुरत प्रान तन त्यांग ॥ २ ॥
जैसे चंद सती सतमारग ।
तजि धन धाम सुहाग ॥

मुरदा संग तरंग जरन की ।
लै मन तन अनुराग ॥ ३ ॥
तुलसी श्रवण सुने अनहद को ।
सुन मन मृग मंत माग ॥
सती सूर सूरा मन माहीं ।
सुन धुन पूरन भाग ॥ ४ ॥

शब्द ५०

मान रे मन मस्त मसानी ॥ टेक ॥
पोख पोखि तन बदन बढ़ाया ।
सो तन बन जरे अग्नि निदानी ॥ १ ॥
कुटम् बंधु भइया सुत नारी ।
मरत कोऊ संग जात न जानी ॥ २ ॥
यह संसार समझ दुख दाई ।
पर बंधन नहिं पड़त पिछानी ॥ ३ ॥
जोइ जोइ पाप पुन्य जिन कीन्हा ।
आप आप भौ भुगतत खानी ॥ ४ ॥
फूला वृक्ष फूल गिर जावे ।
तैं फूले पर कौन ठिकानी ॥ ५ ॥
तुलसी जगत जान दिन चारी ।
भारी भौ बिच फांस फंसानी ॥ ६ ॥

शब्द ५१

कोइ बूझै न परख प्रबंध ।
शब्द की संध को ॥ टेक ॥
ज्ञानी गुनी कवीश्वर पंडित ।
क्या जानें जग अंध ॥
पंथ अंत कोइ भेद न पावै ।
मन मूरख मति मंद ॥ १ ॥
आस अनंत अपार असंखन ।
माया के फरफंद ॥
आवा गवन भवन में भूले ।
सहन लगे दुख दुंद ॥ २ ॥
ऋषी मुनी तप बन फल खाते ।
सब जड़ मूली कंद ॥
जगत त्याग बन भाग बसत हैं ।
रिध सिधि उड़ेरी सुगंध ॥ ३ ॥
आपन में आपा नहिं देखा ।
अंदर माहिं अनंद ॥
सतगुरु गगन सोध नहिं कीन्हा ।
चीन्हा न मन मकरंद ॥ ४ ॥
तुलसी तुरत तत्त तन खोजै ।
छाँडे धोखे धंध ॥

सुरत डोर सुन द्वार शब्द में ।
पिया संग केल करंद ॥ ५ ॥

शब्द ५२

कोइ सतगुरु मिलेंरी दयाल ।
काढ़ें जम जाल से ॥ टेक ॥
करता काल कलेवर कीन्हा ।
दीन्हा भौ भ्रम डाल ॥
लख चौरासी जिया जोन में ।
फिरते बहुत विहाल ॥ १ ॥
कहो उनकी क्रिरपा बिन दूजा ।
कौन करै प्रतिपाल ॥
कल्प २ कागा कर राखे ॥
कैसे होय मराल ॥ २ ॥
चहुँ दिस फेर रह्यो चक्कर को ।
दूसर चलै न चाल ॥
को रोकै सन्मुख होय जाके ।
कठिन कुलाहल काल ॥ ३ ॥
सतसँग विना दीन दिल दृढ़ कै ।
केहि विधि होय निहाल ॥
संत सरन लीन्हे बिन कोई ।
लिखारे मिटै नहिं भाल ॥ ४ ॥

तुलसी तीन लोक का नायक ।
सब का लूटै माल ॥
सतगुरु चरन सरन जो आवै ।
सो जिव देत निकाल ॥ ५ ॥

शब्द ५३

कोइ सतगुरु देव री बताय ।
चरन गहुँ ताहि के ॥ टेक ॥
चहुँ दिस ढूंढ़ फिरी कोइ भेदी ।
पूंछत हौं गुहराय ॥
उनसे कहूं बिथा सब अपनी ।
केहि विधि जीव जुड़ाय ॥ १ ॥
जो कोइ सखी सुहागन होवै ।
कहे तन तपन बुझाय ॥
पिउ की खोज ख़बर कहे मोसे ।
मरूंरी विकल कर हाय ॥ २ ॥
ज्यो न्यामत दुनियाँ दौलत की ।
सो सब देउँ बहाय ॥
बारम्बार वार तन डारूं ।
यह कहं मोल बिकाय ॥ ३ ॥
बिन स्वामी सिंगार सुहागिन ।
लानत तोबा ताय ॥

पिया बिन सेज बिछावे ऐसी ।
नारि मरै बिष खाय ॥ ४ ॥
सतगुरु विरहन बान कलेजे ।
रोवै और चिल्लाय ॥
हाय २ हिय में निस बासर ।
हरदम पीर पराय ॥ ५ ॥
यह झुँड में कोइ पाक पियारी ।
पिया दुलारी आहि ॥
मैं दुखिया हौं दर्द दिवानी ।
प्रीतम दरश लखाय ॥ ६ ॥
तुलसी प्यास बुझै प्यारे से ।
चढ़ घर अधर समाय ॥
किरपावंत संत समझावैं ।
और न लगै उपाय ॥ ७ ॥

शब्द ५४

जिनके हिरदे गुरु संत नहीं ॥
उन नर औतार लिया न लिया ॥ टेक ॥
सूरत बिमल बिकल नहिं जाके ॥
बहु बक ज्ञान किया न किया ॥ १ ॥
करम काल बस उद्र निहारा ।
जग बिच मूढ़ जिया न जिया ॥ २ ॥

अगम राह रस रीत न जानी ॥
वहु सतसंग किया न किया ॥ ३ ॥
नाम अमल घट घोंट न पीना ।
अमल अनेक पिया न पिया ॥ ४ ॥
मोटे भात जात ज़िंदगी में ।
सिर धर पैर छुया न छुया ॥ ५ ॥
तुलसी दास साध नहिं चीन्हा ।
तन मन धन न दिया न दिया ॥ ६ ॥

शब्द टप्पा ५५

प्यारी पिया पैहौं कौने भेस ।
मैं तौ हारी ढूंढ सारा देश ॥ टेक ॥
जोग जुगति जोगी ठगे । ब्रह्मा बिश्नु महेश ॥
वेद विधी बंधन भये । देव मुनी और शेश ॥ १ ॥
ब्रह्मचार वैराग लौ । सन्यासी दुरबेश ॥
परम हंस बेदान्त को । पढ़ि भाषत ब्रह्म नरेस ॥ २ ॥
तीरथ वरत अन्हान को । चार बरन परवेश ॥
काल करम करता करै । बाँधे जम धर केश ॥ ३ ॥
जगत जाल जंजाल से । कोइ नहिं पावत पेश ॥
मैं सतगुरु सरना लिया । तुलसी सकल तज ऐश ॥ ४ ॥

:0:

शब्द टप्पा ५६

प्यारी पिया पीर खली आधी रतियां ॥ टेक ॥
सोवत समझ उठी अपने में ।
क्या कहुँ वर्ण विपतियां ॥ १ ॥
चोली बंद बदन बिच खटके ।
उमँग उमँग फटे छतियाँ ॥ २ ॥
रोवत रैन चैन नहिं चित में ।
कूर करम की बतियां ॥ ३ ॥
तुलसी देश ऐश बिन पियके ।
सोच लिखूँ कित पतियां ॥ ४ ॥

शब्द टप्पा ५७

प्रीतम प्रीत लगन मन फँसियाँ ॥ टेक ॥
निरखत नैन चैन चितवन में ॥
दीप द्रिगन चढ़ चसियां ॥ १ ॥
पल पल लगन लगी वही मारग ॥
सुरत सिखर पर बसियां ॥ २ ॥
दृढ़ कर डोर पोढ़ पद परसी ॥
लख गुर गगन परसियां ॥ ३ ॥
तुलसी तलब तलाशी पावै ॥
धार अधर घर धसियां ॥ ४ ॥

शब्द टप्पा ५८

लाज कह कीजैरी घूंघट खोलो आज ॥ टेक॥

लाजहि लाज अकाज भयो है ।

सुन्दर यह तन साज ॥ १ ॥

सब तन अंग निहंग निहारे ।

परदे प्रगट बिराज ॥ २ ॥

स्वामी सब अंतर गति जाने ।

व्याकुल सकल समाज ॥ ३ ॥

तुलसी तन मन वदन सम्हारो ।

सोइ साहब सिरताज ॥ ४ ॥

ठुमरी ५९

बिसरी अघर घर प्यारी रे ॥ टेक ॥

मैं चित चोर मोर मन मोटा ।

खोट खोट घर धारी रे ॥ १ ॥

अंजन अलख पलक नहिं दीन्हा ।

छाई अधम अँधियारी रे ॥ २ ॥

संगत साध आदि नहिं चीन्हा ।

उरझी भेष भिषारी रे ॥ ३ ॥

तुलसी तीर गुरन लखवाई ।

जब देखी उजियारी रे ॥ ४ ॥

बिहाग ६०

विपति कासे गाऊंरी माई ।
जगत जाल दुखदाई ॥ टेक ॥
रात दिवस मोहि नींद न आवै ।
जम दारुन जग खाई ॥ १ ॥
पिय के ऐन बिन चैन न आवे ।
हरदम बिरह सताई ॥ २ ॥
जा दिन से पिय सुधि बिसराई ।
भटक २ दुख पाई ॥ ३ ॥
तुलसी दास स्वांस सुख नाहीं ।
पिय बिन पीर सताई ॥ ४ ॥

बिहाग ६१

आलीरी हिय हर्ष न आवै ।
ज्यौं काले की लहर सतावै ॥ टेक ॥
तन मन सुध बुध सब बिसराई ।
अन पानी नहिं भावै ॥ १ ॥
काह करूं कित जाऊँ सखीरी ।
पिय बिन नींद न आवै ॥ २ ॥
है कोइ सतगुरु पिय को लखावै ।
पत पिया पीरं बुझावै ॥ ३ ॥
तुलसी तड़फ २ तन सूखै ।
मन बिच थिर नहिं आवै ॥ ४ ॥

बिहाग ६२

सखी मोहिं नींद न आवैरी ।
एरी बैरन बिरह जगावै ॥ टेक ॥
सूनी सेज पिया बिन ब्याकुल ।
पीर संतावैरी ॥ १ ॥
रैन न चैन दिवस दुख ब्यापे ।
जग नहिं भावैरी ॥ २ ॥
तड़फ़त बदन बिना सुख सइयां ।
सब जरि जावैरी ॥ ३ ॥
बिषधर लहर डसै नागिनसी ।
ज्यौं जस खावैरी ॥ ४ ॥
देवै मौत दई बिरहन को ।
होते मरि जावैरी ॥ ५ ॥
कैफ़ बिना तुलसी तन सूखै ।
जिय तरसावैरी ॥ ६ ॥

बिहाग ६३

भोर कोइ जागोरे जागो ।
क्या सोवै नींद भर घोर ॥ टेक ॥
बदली घुमँड घोर अंधियारी ।
पहरू करत हैं शोर ॥

जागें जिन जिन तपन निवारी ।

घर मूसत हैं चोर ॥ १ ॥

पांच पचीस बसैं घट माहीं ।

सांई निपट कठोर ॥

मोर और तोर देत झकझोला ।

चलत नेक नहिं ज़ोर ॥ २ ॥

तलवी तीन द्वार पर प्यादे ।

साधे कपट की डोर ॥

आवत जात नेक नहिं रोकैं ।

एक न मानत मोर ॥ ३ ॥

तुलसीदास बाज यह बसती ।

कह कह हार निहोर ॥

कोतवाल कलबूत समाना ।

हाकिम अंधा घोर ॥ ४ ॥

सोरठा ६४

कछू ना सुहावै मोको पिया के वियोगी ॥ टेक ॥

विरह की वेली हेली फैली चहुं दिस को ।

दरद दुखी जस रोगी ॥ १ ॥

असरी हिलोर मोर मन आवै ।

तन तज अब न जियोंगी ॥ २ ॥

हार सिंगार नीक नहिं लागै ।

माहुर घोर पियोंगी ॥ ३ ॥

रैन न चैन दिवस दुख बीते ।
आवत नींद न ओंगी ॥ ४ ॥
तुलसी तलब मिटे सतगुर से ।
चित धर चरन छुओंगी ॥ ५ ॥

घनासरी ख्याल ६५

एरी आली संत चरन सुख बास ॥ टेक ॥
अंत सखी सुख नेक न पैहौ ।
सैहौ री जम की त्रास ॥ १ ॥
भाई बंद कुटम् सुत नारी ।
इन संग रहोरी उदास ॥ २ ॥
यह सब समझ बूझ भौसागर ।
लख चौरासी फाँस ॥ ३ ॥
जुग जुग जनम धरै तन तुलसी ।
आवा गवन निवास ॥ ४ ॥

कान्हरा ख्याल ६६

नाम लोरी नाम लोरी ।
ऐसी काहे सुरत सुध भूलीरी ॥ टेक ॥
बाद बिबाद तजो बहु बायक ।
नाहक दुख सहौ सूलीरी ॥ १ ॥
काल कराल भुलावत करमन ।
भ्रम तज भज पद मूलीरी ॥ २ ॥

बीतत जन्म नाम बिन लानत ।
चालत मेटि अदूलीरी ॥ ३ ॥
स्वाँस स्वाँस जावे तन तुलसी ।
क्यौं भौ सिंध सँग फूलीरी ॥ ४ ॥

कहरवा ६७

कोइ चुरियां लोरी बगरियां ॥ टेक ॥
चुरियां मन मनिहार पुकारे ।
पार अधर घर गढ़ियां ॥ १ ॥
छल्ला गढ़ सुनधाम सुनरिया ।
पहिनो अगम अँगुरियां ॥ २ ॥
फूल फूल माला दई मलिया ।
पहिनो प्रेम पियरियां ॥ ३ ॥
सालू सुरत सजी सिंगारा ।
सत मत घेर घिँघरियां ॥ ४ ॥
अंगिया अंग संग से न्यारी ।
गो गुन गन वस करियां ॥ ५ ॥
तुलसी तेज तरस से निकली ।
सौदा सतगुरु करियां ॥ ६ ॥

सारँग ६८

नहिं लागत लाज महंत को ॥ टेक ॥
गाड़ी ऊँट अटा ले चालत ।
लानत ऐसे पंथ को ॥ १ ॥

चेला करत फिरत घर घर पर ।
आस बास दुख अंत को ॥ २ ॥
इंद्री सुख भोजन नित खावत ।
जम घर तोड़त दंत को ॥ ३ ॥
काया बस माया सँग फूले ।
भूल मूल तज कंथ को ॥ ४ ॥
बदन बनाय काया जिन कीन्हा ।
चीन्ह चरन लख संत को ॥ ५ ॥
गुरघट भान जान सिख किरनी ।
नभ चढ़ मिल गुर मिंत्र को ॥ ६ ॥
कनफूंका सँग बाट न पैहौ ।
गुरु चेला बहे अंत को ॥ ७ ॥
गुरु अपना गुरु आदि न जाना ।
खानी परत परंत को ॥ ८ ॥
तुलसी किरन गगन गुरु भेंटत ।
मेटैं काल दयंत को ॥ ९ ॥

होली ६८

गगन चढ़ूं कहो कैसे ।
मोहिं उपजत लाख अंदेशे ॥ टेक ।
गडमग पांव होत पौड़ी पै ।
सोच उठै जिय में से ॥ १ ॥

केहि विधि गैल चलूं मारग की ।
भटक भई हियरे से ॥ २ ॥
पल पल पीर खलै प्रीतम की ।
मीन तड़फ़ जल जैसे ॥ ३ ॥
बिन दीदार दुखी जियरा में ।
जनम पशू तन तैसे ॥ ४ ॥
तुलसी मूल भूल भरमानी ।
रही चेत चरन बिन लेसें ॥ ५ ॥

बारहमासी ७०

गुइयां री गुन गोह गिरा बिच में न रहूँगी ॥ टेक ॥

सवैया

अली असाढ़ के मास बिलास ।
सो बास पिया बिन मोहि न भावै ॥
गर्ज अकाश कि भास रवी ।
छवि बादर की कहि घात न जावै ॥
बिजली चमके घन घोर घटा ।
घर घाट पिया कोउ नेक न पावै ॥
गोह गुना गिर बीच बसी ।
सो फँसी तुलसी चित चेत न लावै ॥

कड़ी

अगमन आयो असाढ़हिं मास ।
गरजत गगन रवी तज भास ॥
भान घटा नभ नैन निहार ।
सूरत समझ चली नभ पार ॥
पिय पद साज गहूंगा ॥ १ ॥

सवैया

सावन शोर करै बन मोर ।
सो दादुर प्यास पपीहा पुकारी ॥
ताल मही हरी भूमि भई ।
सो नहिं कोइ पंछी न चोंच चुकारी ॥
मैं मन में सुनके बिगसी ।
जस ताल रवी बिच कंज सुखारी ॥
जो तुलसी गुन माहिं रहो ।
सो भई जस साथ के संग दुखारी ॥

कड़ी

सावन सरवर नीर अपार ।
बरसत गगन अखंडित धार ॥
गैल गली सब हरियल भूम ।
नील सिखर चढ़ी सूरत घूम ॥
चमक बिजली की सहूँगी ॥ २ ॥

सवैया

भादों को भेद कहूँ जो निबेद ।
सो खेद करम को काढ़ि निकारी ॥
सूरत सूर भई मत पूर ।
सो नागिन नारि डसी जस कारी ॥
चेत चली सो अपकाश अली ।
सो गली गुन गोह से होत निनारी ॥
जो तुलसी सुख नारि भई ।
सो गई लै लार लगन के लारी ॥

कड़ी

भादों भर्म भेद सब छूट ।
काया कर्म कलस गये फूट ॥
नागिन बिरह मूल डस खाई ।
यह विधि सूरत गगन समाई ॥
लगन सँग लार लरूंगी ॥ ३ ॥

सवैया

कूकर क्वांर कुमत्ति को जार ।
सो वार बनी सब ख़ाक मिलाई ॥
कूकर काम भये जो निकाम ।
सो ठामहिं ठाम जो भूंस भुलाई ॥

सुन सूरत भाल सो ताल भई ।
गई मान सरोवर पैठ अन्हाई ॥
तुलसी सोइ सत्त के संग अड़ी ।
सो खड़ी सुन शब्द में जाय समाई ॥

कड़ी

कुमति कुँवार जार अस फूस ।
कूकर काम रहे सब भूस ॥
मान सरोवर सरस अन्हाई ।
सूरत समझ चली रस पाई ॥
शब्द सुन सार भरूंगी ॥ ४ ॥

सवैया

कातिक किर्न भये शशि सूर ।
सो दूर भये दल बादल सारे ॥
भूमि में थीर भये जल नीर ।
सो नारे नदी श्रुति सिंधु सम्हारे ॥
सिंधहि बुंद मिले चढ़चाल ।
सो काल कला जम दूर निकारे ॥
तुलसी जिन चाप धनू पै धरी ।
सो करी सम सूरत संत पुकारे ॥

कड़ी

कातिक किरन भास भये सूर ।
सलितहि समुंद मिले जस मूर ॥

बुंद सिंध बिन फिरत बेहाल ।
मिट गया शब्द कटे जम काल ॥
सुरत घर चाप चढूंगी ॥ ५ ॥

सवैया

अगहन मास अनंद अली ।
सो चली पिया पास पलंग बिछाई ॥
पायो पलक के पार पती ।
सो सती सत सूरत सार लखाई ॥
सेज मिलाप भयो पति आय ।
सो जीवन जन्म सुफल्ल कहाई ॥
तुलसी मन में सुख चैन भई ।
सो गई वार आद सो साध समाई ॥

कड़ी

अगहन अली पिया पलँग बिछाव ।
जिन्नंव जन्म मिलो अस दाव ॥
पिया की सेज सुख सज श्रुति सार ।
नित प्रति केल करूं पति लार ॥
अली वर आदि वरूँगी ॥ ६ ॥

सवैया

पूस पुरष की होश भई ।
सो गई सतलोक में शोक सिहारी ॥

प्यारी सखी गुर गैल गई।
सो कही पद प्यारे की खोज चिन्हारी ॥
छाय रही सुन मंदर में।
घर घाट पिया लख बाट बिचारी ॥
पिया रस रीत की जीत भई।
सो कही तुलसी जिन नैन निहारी ॥

कड़ी

पूस परम पद पुर्ष निवास।
श्रुति सतलोक करे नित बास ॥
शिष गुरु गवन मिले मत पाय।
प्यारी पुर्ष रही घर छाय ॥
सखी सुख जान कहूंगी ॥ ७ ॥

सवैया

माह मनोहर महल चढ़ी।
सो खड़ी खिड़की तक तोल बखानी।
जान कही सोई साध सुजान।
सो मान जिनी सोइ पास समानी ॥
पानी पै दूध की छान करी।
सो भरी लख सूरत शब्द ठिकानी ॥
जीवत ही मर जांत सही।
सो कही तुलसी जिन भाख निशानी ॥

कड़ी

माह महल झँझरी चढ़ ताक ।
पिया की सेज सुख सत सत भाख ॥
कोइ कोइ सज्जन साध विलास ।
पहुँचे अगम पिया घर बास ॥
कही जिन जिवत मरूंगी ॥ ८ ॥

सवैया

फागुन फ़हम करोरी सखी ।
लख जात वह्यौ संसार असारा ॥
सूरत सार के पार लखे ।
सो थके मन मारग मौज अपारा ॥
संत सिरोमन सैर कही ।
सो गई गुर मारग संभ सवारा ॥
प्यारे पिया को पकड़ के गही ।
सो जकड़ हिये में जँज़ीरहि डारा ॥

कड़ी

फागुन फ़र्क़ भयौ संसार ।
जिन २ सुरत करी तन झार ॥
सतगुरु मूल मता मुख बैन ।
जब लख लखी संत की सैन ॥
समझ सोइ पकड़ धरूंगी ॥ ९ ॥

सवैया

चेत चली सो सुनो री अली ।
गइ गैल गली सुन रीत निहारी ॥
सेत सरासर भेद लखो ।
सो पक्की बिधि बेनी के घाट बिचारी ॥
सारी सरोवर ताल तकी ।
पक प्यारी अन्हाय के काज सम्हारी ॥
जो तुलसी चढ़ के जो चली ।
सो अली खिड़की बिधि आन पुकारी ॥

कड़ी

चेत चली जिन चरन निहार ।
सो उतरी भौ सागर पार ॥
आदि और अंत पंथ घर घाट ।
सो पद परस त्रिवेनी घाट ॥
चीन्ह खिड़की को चहूंगी ॥ १० ॥

सवैया

बैन बिधी बैसाख बिलास ।
सो पास पिया नित सैर सँवारे ॥
यार के सार बिहार करे ।
सो बिचार बिधी श्रुत तार निहारे ॥

प्रीतम मेल भया रस खेल ।
सो केल किंवार के पार पुकारे ॥
तुलसी तन में जिन जान लखा ।
सो भषै पिया पास के भास निकारे ॥

कड़ी

कर बस बास बैसाख बिलास ।
छूट गई तन मन की आस ॥
प्रीतम प्यारी मिले मन खोल ।
रँग रस रीत सुने सब बोल ॥
पिया सँग केल करूँगी ॥ ११ ॥

सवैया

जेठ की रीत करी मन जीत ।
सो प्रीत की बात की सैन सुनाई ॥
चेत चली तज काल बली ।
सोइ जाल जली दुख दूर नसाई ॥
जिम धाय जो धीर गंभीर नदी ।
स्रुत सार सम्हार जो शब्द समाई ॥
यह मुख बैन कहे तुलसी ।
सो लसी सत द्वार जो शब्द को पाई ॥

—:0:—

कड़ी

जेठ ज़बर तन मन श्रुत रीत ।
सेत सबज़ चली अगमन जीत ॥
सुर्ख़ ज़र्द रँग श्याम भुलान ।
पांचोइ तत्त करी नहिं कान ॥
सखी सुन पार फिरूंगी ॥ १२ ॥

सावन ७१

प्रथम सरन सतगुरु गहो निरखौ नैन निहार ।
वार पार परखत रहो गुरु पद पदम अधार ॥ १ ॥
संत चरन चित हित करो सूरत संध सँवार ।
आदि अंत घर लखि पड़े सूझे पिउ दरबार ॥ २ ॥
अब जग की गत मत कहूँ बिन सतसँग अँधियार ।
मन इंद्री गुन लोभ में बिन सत नाम अधार ॥ ३ ॥
यह भौ सिंध अगाध है बूड़े भौजल धार ।
बिन सतगुरु भरमत फिरे कैसे उतरे पार ॥ ४ ॥
सुरत शहर घर आदि है पावे सज्जन साध ।
दुरजन दुख सुख में रहै करम बंद बहै बाद ॥ ५ ॥
जग रचना जम काल की फँस २ मुये हैं अजान ।
ज्ञान गली चीन्हें बिना भरमत सकल जहान ॥ ६ ॥
पिउ परचै पाये बिना निसदिन फिरत बेहाल ।
जुगन २ भटकत फिरे निज घर सुरत न चाल ॥ ७ ॥

पिय की सेज सूनी पड़ी कौन और लगवार ।
तासु पुरष घर ना मिले भयो कर्म भौभार ॥ ८ ॥
जिन पिया की बिरहा बसै छिन २ छीन शरीर ।
नैन नीर ढुर २ बहै कसके तन मन पीर ॥ ९ ॥
प्रेम प्रीत नदियां बहैं सावन भादों मास ।
रात दिवस लागी रहै बरसे झड़ी निश आस ॥ १० ॥
पिया की पीर पल २ बसै सूरत अंत न जाय ।
जैसे चंद्र चकोर गति निरखत नाहिं अघाय ॥ ११ ॥
गरज घुमर बदरी बहै चमके चम् चम् बीज ।
मोर शोर पिउ २ करै तड़फ २ तन छीज ॥ १२ ॥
धुन सुन धीर न आवही पाती लिखूँ पिया पास ।
मन सूरत क़ासिद करूँ पहुँचै अगम निवास ॥ १३ ॥
ख़बर ख़ुशी पिया की सुनौं हरषत हिया हित मोर ।
तुलसी तलब पिया की लगी जग तिनुका अस तोर ॥१४॥

सावन ७२

सतगुरु गत मत सार है दीन्हा अगम लखाय ।
सुरत चढ़ी सत द्वार को लीला गिर गम पार ॥ १ ॥
नित २ सैर सँवारही सेत श्याम के घाट ।
बाट लखी सखी संग में चढ़कर निरख निहार ॥ २ ॥
पिया का नूर लख थक भई छिन २ लौ सौ बार ।
लार २ लगी रहे तन मन बदन बिसार ॥ ३ ॥

आदि अंत पिया पट खुले चढ़ि महलन पर धाय ।
तिरबेनी घर घाट पे न्हावत बिपति नसाय ॥ ४ ॥
पिया परचै जब से भई कहिया तुलसी दास ।
बास बिंधी बिधि महल की पहुँची पति पिउ पास ॥ ५ ॥

मंगल ७३

अगम गली गम सार पार चढ़ि पेखिये ।
जहँ सतगुरु के बैन नैन नित देखिये ॥ १ ॥
चल सतगुरु के महल टहल तहँ कीजिये ।
जीवन जनम सुधार सार कर लीजिये ॥ २ ॥
सखी सुखमन घर घाट बाट पिया की लखो ।
तोड़ो जम के दंत संत सरना तको ॥ ३ ॥
पिया बिन धृग संसार जार जग जोर है ।
धृग जीवन बिन बास पास पिय को कहै ॥ ४ ॥
सतगुरु संत दयाल जाल जम काटि हैं ।
करि हैं भौ जल पार ठाट सब ठाटि हैं ॥ ५ ॥
सूरत संध सुधार पंथ पिय पाइया ।
तुलसी तत मत सार सुरत गति गाइया ॥ ६ ॥

शब्द ७४

गगन धार गंगा वहै । कहैं संत सुजाना हो ॥ टेक ॥
चढ़ि सूरत सरवर गई । शशि सूर ठिकाना हो ॥
बिरले गुरुमुख पाइया । जिन शब्द पिछाना हो ॥ १ ॥

प्राण पुर्ष आगे चली । सोइ करत बखाना हो ॥
बिमल २ बानी उठै । अद्भुत असमाना हो ॥ २ ॥
सहस कँवल दल पार ये । मानो बुद्धि हिराना हो ॥
निर्मल बास निवास में । कर २ कोइ जाना हो ॥ ३ ॥
तुलसी तलब तलबी करे । नित सुरत निशाना हो ॥
अंड अलख लखि है सोई । चढ़ि कर घर ध्याना हो ॥ ४ ॥

शब्द ७५

शब्द साख भाषत भये । तन बीत सिराना हो ॥ टेक ॥
भेष पंथ भूले फिरें । कोइ मरम न जाना हो ॥
सुन्न शहर सत द्वार में । चढ़ श्रुति असमाना हो ॥ १ ॥
नभ निवास न्यारी भई । मारग पहिचाना हो ॥
पछिम पार पट खोल के । खिड़की नियराना हो ॥ २ ॥
होत जोत जगमग लखे । आतम दरसाना हो ॥
कँवल केल आगे चली । दल द्वै दिखलाना हो ॥ ३ ॥
परमातम पद परस के । लख पुर्ष पुराना हो ॥
अगम गली आगे चली । अली आदि अनामा हो ॥ ४ ॥
तुलसीदास दुरबीन में । कोइ संत समाना हो ॥
अगम निगम गम गाय के । जिन भाष बषाना हो ॥ ५ ॥

शब्द ७६

शब्द भेद साखी लखे । सोइ साध सुजाना हो ॥ टेक ॥
अगम निगम गम चीन्ह के । बानी पहिचाना हो ॥

सुरत शिष्य शब्दा गुरू । मिल मारग जाना हो ॥ १ ॥
लख अकाश औंधा कुवाँ । तामें सुरत समाना हो ॥
गगन गिरा गरजत भई । फूटा असमाना हो ॥ २ ॥
गंग जमुन बिच सरस्वती । बेनी अशनाना हो ॥
जोग ज्ञान गम ना लखे । अली अगम ठिकाना हो ॥ ३ ॥
तुलसीदास दुरबीन का । कोइ फोड़ निशाना हो ॥
सिंध बुंद सागर मिला । सोइ सिंध कहाना हो ॥ ४ ॥

शब्द ७७

सुरत निरत निज नैन को । सतगुरु दरसावा हो ॥ टेक ॥
अति उतंग पिय पंथ को । तब मारग पावा हो ॥
श्रुति जहाज़ पर बैठ कर । अपने घर आवा हो ॥ १ ॥
सज सिँगार सुंदर चली । पिया को अपनावा हो ॥
फूलन सेज सम्हारि के । सजि पलँग बिछावा हो ॥ २ ॥
लगन लार लैसे मिली । पिया रीझ रिझावा हो ॥
सुरत सुहागन साज के । पिय से लिपटावा हो ॥ ३ ॥
तुलसी तरँग रँग राह की । कुछ कहत न आवा हो ॥
पति परचै पिउ पास की । जाना जिन गावा हो ॥ ४ ॥

शब्द ७८

साधू गति गाई अगम गली ।
भेष न पावै भरम छली ॥ टेक ॥
जस चकोर निस चंद तकत है ।
सिस्त धरन घर अधर अली ॥ १ ॥

कँवल खिले रवि रथ के निरखे।
बदन बिरह अस खटक खली ॥ २ ॥
अलल पक्ष जस उलट अकाशा।
सो मारग चढ़ सुरत चली ॥ ३ ॥
तुलसी तलब साध कोइ जाने।
आदि पिया पद परख पिली ॥ ४ ॥

शब्द ७९

गगन चढ़ अगम कपाट खुले ॥ टेक ॥
कुंजी दीन दया सतगुरु की।
सब भ्रम घाट घुले ॥ १ ॥
लोहा से कंचन कर दीन्हा।
रतनन बाट तुले ॥ २ ॥
पीकेरी पलंग पास महलों में।
गैबी चंवर ढुले ॥ ३ ॥
तुलसी अचल सुहाग सुरत ने।
पाया सत नाम ढुले ॥ ४ ॥

शब्द ८०

अधर घर सतगुरु सोध करो।
लख श्रुत धरन धरो ॥ टेक ॥
काया खोज करो कँवलन में।
सो गुर तत्त तरो ॥ १ ॥

गुरु चारो पद चार ठिकाने ।
भिन २ बरन बरो ॥ २ ॥
पिरथम गुर दल सहँस कँवल में ।
कंज काज सुधरो ॥ ३ ॥
गुर दूसर गढ़ गगन सिखर पर ।
द्वै दल पद सुमिरो ॥ ४ ॥
गुर तीसर तीसर कँवला में ।
चौदल चरन परो ॥ ५ ॥
चौथे सिंध सतलोक गुरू को ।
जानै सो जोई उबरो ॥ ६ ॥
गुरू चार पद पार परम गुर ।
सो संतन पकरो ॥ ७ ॥
सुन्न शब्द नहिं आतम आसा ।
स्वांस जोग झगरो ॥ ८ ॥
अंड ब्रहमंड से पिंड पसारा ।
निरगुन गुन बिगरो ॥ ९ ॥
गुर शिष नाहिं गुरू गुरवाई ।
बिन गुर भरम मरो ॥ १० ॥
कनफूंका गहि कंठी बांधी ।
इन से जग बिगरो ॥ ११ ॥

आशा बस बंधन शिष कीन्हा ।
इन हिय ज्ञान हरो ॥ १२ ॥
पढ़ २ मोट भये मन ज्ञानी ।
मान मस्त मगरो ॥ १३ ॥
सुन सतसंग नेक नहिं भावै ।
बूड़ जनम झगरो ॥ १४ ॥
मूल अजर सतगुरु बिन भूले ।
नहिं पावै डगरो ॥ १५ ॥
यह शब्दन में परख पुकारे ।
यासे भौ उतरो ॥ १६ ॥
अकथ अलोक लोक से न्यारा ।
तुलसी अज अजरो ॥ १७ ॥

शब्द ८१

सुरत मतवाली करत किलोल ॥ टेक ॥
पलँगा साज सजी पिउ प्यारी ।
पिय रस गांठ दई सब खोल ॥ १ ॥
गहि गहि बांह गले बिच डाली ।
धार धरन कर कीनी अडोल ॥ २ ॥
झमक चढ़ी हिय हेर अटारी ।
न्यारी निरख सुना इक बोल ॥ ३ ॥

पच्छिम दिसा दिस खोल किवारी।
पिया पद परसत भइरी अमोल ॥ ४ ॥
तुलसी जगत जाल सब जारी।
डारी डगर बेदन की पोल ॥ ५ ॥

शब्द ८२

झलीरी झपकाश सुरत सज चाली ॥ टेक ॥
उड़ २ बिहँग चढ़त नभ नाली।
भाली भलक भयो उजियास ॥ १ ॥
दृग दीपक मंदिर उजियाली।
लाली लाल फैल चहुँ पास ॥ २ ॥
उमँगी सुरत प्रेम प्रग पाली।
माली मीन जल सींच हुलास ॥ ३ ॥
तुलसी रंग रूप रस डाली।
हाल होत हिय ब्रह्म बिलास ॥ ४ ॥

शब्द ८३

सुरत सरो मन घाट।
गुमठ मठ मृदंग बजे रे ॥ टेक ॥
किंगरी बीन संख सहनाई।
बंक नाल की बाट ॥
चित बिच चाट खाट पर जागी।
सोवत कपट कपाट ॥ १ ॥

मुरली मधुर झांझ झनकारी।
रंभा नचत बैराट ॥
उड़त गुलाल ज्ञान गुन गांठी।
भर २ रँग रस माट ॥ २ ॥
गाई गैल सैल अनहद की।
उठे तान सुर ठाट ॥
लगन लगाय जाय सोइ समझे।
सुरत सैल नभ फाट ॥ ३ ॥
तुलसी निरख नैन दिन राती।
पल २ पहरों आठ ॥
यह बिधि सैर करे निस बासर।
रोज़ तीन से साठ ॥ ४ ॥

होली ८४

थिर न कोई यह जग में री।
सौदागर लाद चलोरी ॥ टेक ॥
जो कुछ माल भरी भरती में।
दुख सुख कर्म करेरी ॥
भीषम करन द्रोण दुर्योधन।
भाभी बस भर्म मरेरी ॥
राज रन खेत लड़ेरी ॥ १ ॥

येरी रावन लंक पती पै हती ।
सो रती नहिं बास बसेरी ॥
पंडौ पांच गये तज देही ।
सो हाड हिवारे गलेरी ॥
डगर जम ने घट घेरी ॥ २ ॥
जो २ देह धरें तन धारी ।
राजा रंक रचेरी ॥
को नर नारि पशू गति गावे ।
भौ सुख शोक पकेरी ॥
लखा नहिं आदि अजैरी ॥ ३ ॥
पंडित भेष भक्ति नहिं जाने ।
ज्ञान के मान भरेरी ॥
सतगुर सोध बोध बिन मारग ।
जमपुर फांस फँसेरी ॥
भली तुलसी मत फेरी ॥ ४ ॥

होली ८५

हम को जग क्या करना री ।
टुक जीवन पै मरना री ॥ टेक ॥
इक दिन देख बदन बिनसे गा ।
अगिन अंग जरना री ॥
यों बरबाद नसे नरदेही ।
भोग उमर भर नारी ॥

दई गति से डरना री ॥ १ ॥
नारि निहार जुगन विधि बाँधा ।
मुनि मन को हरना री ॥
जग परिवार सकल दुखदाई ।
इन सन्मुख से टरना री ॥
बिपति वस क्यों पड़ना री ॥ २ ॥
काया कल्प काल नहिं छूटे ।
नर तन में तरना री ॥
सतगुरु मूल मता जुगती से ।
गुप्त ध्यान धरनारी ॥
मुक्ति हिरदे चरनारी ॥ ३ ॥
औसर आज विदित बनिवे की ।
संतन के सरना री ॥
जो कोइ तोल तरक तुलसी को ।
पोढ पकड़ धरना री ॥
लखो चित से नर नारी ॥ ४ ॥

बसंत ८६

घट बसंत जहँ पिय को पंथ ।
तैं कहँ खोजत अंत अंत ॥ टेक ॥
दीप नगर लख बाट चीन्ह ।
सुन्न सिखर पर सुरत लीन ॥

सतगुर मारग अति अंतत ।
नित पहुँचे जहँ अगम संत ॥ १ ॥
कुंभ कुरम पर अधर घाट ।
बिमल लोक लख पावे बाट ॥
जहँ इक साहब अज अचिंत ।
वै मिल तोड़ै जम के दंत ॥ २ ॥
आदि अंत टूटे बिषाद ।
यह कोइ बूझैं बिरले साध ॥
चढ़ प्रयाग पद भये निचिंत ॥
न्हावत निरमल सुरतवंत ॥ ३ ॥
पदम पुरष बेनी बिलास ।
बंधन टूटे भये निरास ॥
जग दुख पावत जीव जंत ।
तुलसी निरख कहि आदि अंत ॥ ४ ।

बसंत ८७

लख लख लखियां पिय को रूप ।
जहँ अनहद बाजे बजैं अनूप ॥ टेक
जहँ बिजली चमके अति अपार ।
गगन घोर नहिं वार पार ॥
मन मतंग जहँ सुनत भूप ।
इन्द्री संग तजि रहे है चूप ॥ १ ॥

मान सरोवर हँस घाट ।
लै चढ़ लागी अगम बाट ॥
अर्ध उर्ध मुख औंध कूप ।
चंद सूर नहिं छाह धूप ॥ २ ॥
सूरत सुन सतगुरु के बैन ।
निरखत हरषी हिय के नैन ॥
अधर पंथ इक गली है गूप ।
जहाँ इक साहब अति अनूप ॥ ३ ॥
कोटि भान छवि रोम तेज ।
तीन लोक कोइ परै न पैज ॥
तुलसी निरख नित अज अरूप ।
चढ़ी सुरत गई पछिम पोहप ॥ ४ ॥

ठुमरी ८८

झँझरी पिया झांक निहारी ।
सखी सतगुरु की बलिहारी ॥ १ ॥
दीन्हा दृग सुरत सम्हारी ।
पद चीन्हा पुरुष अपारी ॥ २ ॥
चली गगन गुफा नभ न्यारी ।
जहँ चांद न सुरज सिहारी ॥ ३ ॥
तुलसी पिया सेंज सवांरी ।
पौढ़ी पलँगा सुख भारी ॥ ४ ॥

ठुमरी ८९

सुन संत गती गत भारी ।
अली जोग जुगत से न्यारी ॥ १ ॥
जहँ शब्द न सुन्न अकारी ।
सुन सुन्न महासुन पारी ॥ २ ॥
नहिं गुन निरगुन मत झारी ।
सत नाम पिया पद पारी ॥ ३ ॥
तुलसी निज नाम निहारी ।
जहँ आदि अनाम अपारी ॥ ४ ॥

बिहाग ९०

अलीरी गुरु गैल लखाई ।
अलख पलक पर पाई ॥ टेक ॥
दृग दुरबीन चीन्ह जब पाई ।
हरदम सुरत लगाई ॥ १ ॥
लीला सिखर निकर नभ न्यारी ।
छिन छिन सुरत समाई ॥ २ ॥
पश्चिम द्वार पार पट खोले ।
अगम निगम गम पाई ॥ ३ ॥
तुलसी तत्त तरक मन माहीं ।
अस आतम दरसाई ॥ ४ ॥

बिहाग ८१

आली री आगे खोज लगाई ।
चढ़ स्रुत गगन समाई ॥ टेक ॥
मकर तार मारग लख पावा ।
ता बिच धधक चढ़ाई ॥ १ ॥
मानसरोवर निरख निहारी ।
बेनी में पैठ अन्हाई ॥ २ ॥
भीतर भिन्न चिन्ह भई न्यारी ।
कोटि भान छवि छाई ॥ ३ ॥
ता मधि बीच द्वार इक दरसा ।
साहब सिंध कहाई ॥ ४ ॥
तुलसी सुरत शब्द सुन माहीं ।
गुरु पद सुरत मिलाई ॥ ५ ॥

शब्द नसीहत नामा ८२

एरी आली खोज खबर घस धाई ॥ टेक ॥
गवन भवन भिन भेद लखाऊँ ।
सत मत जोत नाद नहिं जाई ॥
अलख जोत बिन खलक समाना ।
जाना जिन २ गाई ॥ १ ॥
नाम निवास बास सतलोका ।
कोका कँवल तेज सुन माहीं ॥

परमातम पद सुन पर धामा ।
सुन धुन आतम आई ॥ २ ॥
आतम बास बसे सरवर में ।
वहिं तत बास अकाश कहाई ॥
अली अकाश चारों तत कीन्हा ।
तत बैराट बनाई ॥ ३ ॥
सुन नभ वार तार श्रुति श्यामा ।
तामें आतम मनहिं कहाई ॥
पंच इन्द्री कर्म ज्ञान पांच में ।
दस बस फाँस फँसाई ॥ ४ ॥
इन्द्री कर्म असुभ बस बांधे ।
शुभ करके गति ज्ञान गिराई ॥
शुभ और अशुभ कर्म मन मारग ।
यह दोउ भौ भुगताई ॥ ५ ॥
आसा बास बसे करमन में ।
फिर फिर जन्म जोन भरमाई ॥
यह बिधि आवागवन भवन में ।
फिर फिर खान समाई ॥ ६ ॥
यह बिधि संत सभी सब गावें ।
शब्द साख सब वर्ण सुनाई ॥
बूझै न मूढ़ चलै मन मत के ।
सत सत बचन उठाई ॥ ७ ॥

आतम ज्ञान ब्रह्म बन बैठे ।
कहते लाज न मन चितलाई ॥
दोइत भाव भरम मन बरतै ।
अद्दोइत दरसाई ॥ ८ ॥

तज मन मूढ़ कूर पाखंड को ।
झूंठ झूंठ बस धोखा खाई ॥
तन कर नाश बास चौरासी ।
फिर फिर जम घर खाई ॥ ९ ॥

यासे मान मनी मति डारो ।
लख गुरु गगन गवन बतलाई ॥
सूरत डोर लील बिच खेले ।
फोड़ के पच्छिम समाई ॥ १० ॥

लीला सेत श्याम सुन पारा ।
न्यारा द्वार दीदा दरसाई ॥
जहँ परमातम आतम नाहीं ।
खिड़की पुर्प लखाई ॥ ११ ॥

जहँ सतलोक मोप परवेनी ।
मंजन करके सहज अन्हाई ॥
चढ़ कर द्वार देख सत साहब ।
शुभ और अशुभ नसाई ॥ १२ ॥

जे जे थंद फंद करमन के ।
सत्तपुरष दरसत नस जाई ॥

यह बिधि भाँति सुरत से खेले ।
सतगुरु कहत बुझाई ॥ १३ ॥
सतसंग रंग दीन दिल पावैं ।
मोटे मन तन बूझ न आई ॥
जिन मन नीच कींच सम कीन्हा ।
उनकी दृष्ट समाई ॥ १४ ॥
जोगी भेष भरम मन ज्ञानी ।
परम हंस बैराग गुसाईं ॥
कर कर खोज रोज़ पचहारे ।
वाकी ख़बर न पाई ॥ १५ ॥
शास्तर संग बिधि साख बिचारे ।
बिधि बेदान्त ब्रह्म ब्रत लाई ॥
बेद नेत कर कहत पुकारी ।
ब्रह्मा आप हिराई ॥ १६ ॥
बिधि बैराट कँवल नाभी में ।
खोजत खोज न फिर २ आई ॥
ब्रह्मा भूल बेद कह नेता ।
यह दोउ भेद न पाई ॥ १७ ॥
यह बेदान्त ब्रह्म कस गावे ।
याकी कहु किन बूझ बताई ॥
याके गुरु का भेद बताओ ।
बिन गुरु कहु कस गाई ॥ १८ ॥

प्रथमे वन वैराट बनावा ।
ता पीछे ब्रह्मा उपजाई ॥
ब्रह्मा पीछे बेद बिधाना ।
यह सब खोज न पाई ॥ १९ ॥
वेद विधी से शास्तर कीन्हा ।
ता पीछे वेदान्त बनाई ॥
यह तौ ब्रह्म ब्रह्म कह गावैं ।
वाने नेत सुनाई ॥ २० ॥
याकी साख समझ नहिं आवे ।
झूंठ साँच निरनै न बुझाई ॥
सोल पोल विधि कोइ न विचारे ।
टेकै टेक चलाई ॥ २१ ॥
ब्रह्मा बाप वैराट कहावै ।
जामें आतम ब्रह्म समाई ॥
सूर चंद दोउ नैना वाके ।
राहु विमान सताई ॥ २२ ॥
ब्रह्मा बाप आप भयौ रोगी ।
भोग रोग नित राहु सँताई ॥
उनका बाप आप दुख पावै ।
ताका दुख न छुड़ाई ॥ २३ ॥
बेद भेद संग जगत उबारे ।
अस २ पंडित कहत सुनाई ॥

पीछे शास्तर नाती कहिये ।
आजा ठुग दुख पाई ॥ २४ ॥
जग बेदांत ब्रह्म कह ज्ञाना ।
राहु बैराट ब्रह्म दुखदाई ॥
पंडित बूझ सूझ समझाओ ।
यह कहु समझ सुनाई ॥ २५ ॥
तन को तेल फुलेल रस्क में ।
खान पान पोशाक सुहाई ॥
नित २ सैल करें बागन में ।
तन नित मांज अन्हाई ॥ २६ ॥
यह सब मौज चौज सुख संगा ।
तन हबूब बुल्ले सम जाई ॥
पल २ घट घड़ियाल पुकारे ।
जग जम सोंटे खाई ॥ २७ ॥
लेत हिसाब ज्वाब नहिं आवे ।
आतम ज्ञान गैल गिर जाई ॥
ब्रह्म बूझ बैराट दुखारी ।
परलै माहिं नसाई ॥ २८ ॥
ताके भीतर चेतन बासी ।
परलै तन तत कहां रहाई ॥
ब्रह्मा नाश और बेद नसाना ।
जब का भेद सुनाई ॥ २९ ॥

प्रथम पवन आकाश नसाना ।
ब्रह्मा वेद वैराट नसाई ॥
कागज़ स्याही न बोलन हारा ।
तब की विधि समझाई ॥ ३० ॥
विधि वैराट नाश सब जावै ।
आगे भेद न कहत सुनाई ॥
जेहि जेहि पूछौं सोइ अस गावै ।
आगे न ख़बर सुनाई ॥ ३१ ॥
काल जाल सब चाल बखाने ।
वेद नेत शास्तर समझाई ॥
यामें जोग ज्ञान फँस मारे ।
सब को भरम भुलाई ॥ ३२ ॥
अगम निगम पर नेक न पावै ।
वेद नेत आतम कह गाई ॥
सुइ शास्तर सुन मुनि जन गावैं ।
आगे भेद न पाई ॥ ३३ ॥
आतम ब्रह्म अवाच बतावैं ।
कहत दृष्ट नहिं देत दिखाई ॥
बिन देखे वर्णन जिन कीन्हा ।
नहिं परमान कहाई ॥ ३४ ॥
कहत वेद कोइ देख न पावै ।
पुनि अवाच कहु कौन सुनाई ॥

बिन बाचा शास्तर नहिं भयऊ ।
अरी अबाच किन गाई ॥ ३५ ॥
वह अबाच कहु बोलत नाहीं ।
बाचा बिन किन ख़बर सुनाई ॥
सुन क़हु बेद नाद बाचा से ।
याको भेद बताई ॥ ३६ ॥
पूछौं जित जो अबाच बतावै ।
बाचा में बरतंत सुनाई ॥
बाचा बचन न जाने पावै ।
पूंछौ कहौ सुनाई ॥ ३७ ॥
बाक बचन कहौ बात न मानूं ।
बिन बाचा में कहौ समझाई ॥
सुन दोइत बिन बाच न आवै ।
बानी बिन दरसाई ॥ ३८ ॥
यह सब काल जाल जग बांधा ।
ज्ञानी पंडित भेष भुलाई ॥
मान मनी मद अहं बतावैं ।
यह बिधि जाल जमाई ॥ ३९ ॥
पढ़ पंडित रुज़गार चलावा ।
कुटम काज परपंच बसाई ॥
तामें ज्ञानी जगत अबूझा ।
सो सुन समझ सुनाई ॥ ४० ॥

यह विधि बुधि बेदन सँग बांधी ।
संत मता बेदन सम गाई ॥
नाद बेद से संत निनारे ।
सो नहिं कोइ गति पाई ॥ ४१ ॥
यह अवाच पर और अवाचा ।
सो कोइ संत भेद बतलाई ॥
उन देखा संत से चढ़ चौथे ।
सो सब संत सुनाई ॥ ४२ ॥
प्रथमे एक अनाम अवाचा ।
बाकी गत मत संत जनाई ॥
सत्त लोक पर नाम अवाचा ।
सो पद चौथे माहीं ॥ ४३ ॥
परमातम पद सुन पै अवाचा ।
सुन धुन नीचे आतम आई ॥
मानसरोवर तेहि कर धामा ।
सोई अकाश समाई ॥ ४४ ॥
जड़ अकाश चेतन जिन कीन्हा ।
श्याम सेत बिच नाम गुसांई ॥
सोइ निज नाम निरंजन भाषा ।
वेद अवाच सुनाई ॥ ४५ ॥
सहस कँवल मध धाम कहावे ।
तापर तीन अवाच रहाई ॥

ब्रह्मा बेद बैराट न पावै ।
ऋषि मुनि भरमन माहीं ॥ ४६ ॥
शास्तर मिल पुनि आतम गावा ।
काल की कला अबाच सुनाई ॥
पंडित पढ़ गुन ज्ञान गठाने ।
यासे जग बौराई ॥ ४७ ॥
बिन गुरु कंज राह नहिं पावै ।
संत सुरत से नित २ जाई ॥
जो वहि देश भेश के भेदी ।
जिन जिन ख़बर जनाई ॥ ४८ ॥
उनको जग नास्तक ठहरावे ।
बोल बचन उनके न सुहाई ॥
वे पुनि चढ़ २ अगम निहारें ।
बिधि सब कहत सुनाई ॥ ४९ ॥
काल निरंजन बाच अबाचा ।
कहत नाद बिच बेद बनाई ॥
आतम तमा अबाच कहावै ।
यह बिधि काल जनाई ॥ ५० ॥
संत मता कुछ और पुकारे ।
आतम जीव मानसर माहीं ॥
परमातम सुन खिड़की वारा ।
संतन देख जनाई ॥ ५१ ॥

आगे सत्तलोक चौथे में ।
सो अघाच सतपुर्ष कहाई ॥
जहँ नहिं निरगुन बेद बिचारा ।
यह सब वार रहाई ॥ ५२ ॥
चौथे पार अनाम अमाया ।
नाम न रूप अगत गत गाई ॥
सो सब संत करैं दरबारा ।
यह गति बिरले पाई ॥ ५३ ॥
यह गति धाम अगम पुर ठामा ।
जाहि देत जो जाय जनाई ॥
याकी साख बेद नहिं जाने ।
संत कृपा से पाई ॥ ५४ ॥
संत सरन बिन पंथ न पावै ।
सतगुरु गैल खेल खुल गाई ॥
मन होय छोट मोट छल छांड़े ।
तब सत सुरत लखाई ॥ ५५ ॥
सत मत रीत जीत जब जाने ।
ज्ञान मान मद दूर बहाई ॥
मन और कर्म बचन बुधि सांची ।
काची कुबुधि उठाई ॥ ५६ ॥
संत दयाल चाल जब चीन्हें ।
लीन दीन दिल लेत लगाई ॥

सब अस भांत जात पक परखे ।
तरके तन बिच जाई ॥ ५७ ॥
वे अंदर घट घाट विचारें ।
कर कर फ़ेल गैल नहिं पाई ॥
कूर कपट सब झाड़ निकारे ।
जब रस राह लखाई ॥ ५८ ॥
सतमत सुरत निरत नित न्यारी ।
सारी समझ बूझ बतलाई ॥
नील सिखर पट परदे माहीं ।
पल २ मनहिं लगाई ॥ ५९ ॥
काग भसुंड धाम धस पावै ।
कँवल कंज करिया के मांही ॥
तापर सेत सुरत सत द्वारा ।
चढ़ चढ़ सुन्न समाई ॥ ६० ॥
सुन धुन ताल तरँग आतम जिव ।
पछिम दिसा दिस देत दिखाई ॥
खिड़की खोल अबोल अबाचा ।
सो रच जीव जनाई ॥ ६१ ॥
ताल निहार पार चली आगे ।
सुन्न सिखर फाटक में जाई ॥
तहँ कहुँ ताक भाष दोउ द्वारा ।
पारब्रह्म पद पाई ॥ ६२ ॥

सुरत सैल जहँ खेल निहारी ।
लख २ गगना अंड अथाई ॥
जा बिच सुरत सरोमन पेली ।
ज्यों चेंटी सम जाई ॥ ६३ ॥
अस भसुंड भिन अंड निहारा ।
राम रमा मुख जाय समाई ॥
रामायन लख साख सुनाऊँ ।
हिये दृग देत दिखाई ॥ ६४ ॥
चर और अचर खान सब सारी ।
भिन २ भेद भसुंड सुनाई ॥
काग भसुंड काया के माहीं ।
लख निज ज्ञान जनाई ॥ ६५ ॥
यासे परख पार पद न्यारा ।
पारे चल चढ़ चशम चिन्हाई ॥
सुन धुन आतम पद परमातम ।
इनके पार लखाई ॥ ६६ ॥
यह दोउ वार पार सतलोका ।
परदा तीन फोड़ जोइ जाई ॥
सूरत शब्द पुरुष पद पारा ।
जब घर अपने आई ॥ ६७ ॥
जापर धाम नाम नहिं न्यारा ।
तारा चंद न सुरज रहाई ॥

धरती न गगन गिरा नहिं बानी ।
ज्ञानी जिन जिन गाई ॥ ६८ ॥
पिंड ब्रह्मंड न अंड अकारा ।
न्यारा अली यह अलोक कहाई ॥
जहँ सब संत पंथ पद मांही ।
नित नित सैल समाई ॥ ६९ ॥
सतगुरु साख हाथ हित पावै ।
संत सरन श्रुत सार लखाई ॥
सतसंग संत बिना नहिं पावै ।
फिर २ करमन माहीं ॥ ७० ॥
आगे सुन गुन ज्ञान बताऊं ।
जीव कर्म बस ब्रह्म बँधाई ॥
ब्रह्म जीव बस कर्म बिचारे ।
जड़ सँग ज्ञान गिनाई ॥ ७१ ॥
अब याकी सुन साख सुनाऊँ ।
भागवत मत बिध ब्यास बताई ॥
जब बैराट ठाट ब्रह्म भइया ।
देवन जाय उठाई ॥ ७२ ॥
नहिं बैराट उठा बिन आतम ।
पुरुष अंस आतम जब आई ॥
मधि बैराट जीव आतम अस ।
तब तन तुर्त उठ ई ॥ ७३ ॥

अंस जीव आतम कहु कहँ से ।
आया सो बिधि खोज कराई ॥
सो स्वामी का कहु कहँ वासा ।
सिंध खोज कहुँ अंत रहाई ॥ ७४ ॥
अंस बुंद आतम तन बासा ।
सिंध खोज कहुँ अंत रहाई ॥
यह बिन संत पंथ नहिं पावै ।
फिर २ जड़ तन माहीं ॥ ७५ ॥
बिन साखी संध फंद नहिं टूटै ।
छूटै न ज्ञान जो कोटि कराई ॥
बिन विधि सुरत संध नहिं पावै ।
बिन सिंध बुंद बहाई ॥ ७६ ॥
चेतन जड़ तन गांठ बँधानी ।
छूटै बिन बस ब्रह्म न भाई ॥
छूटै गांठ गगन चढ़ चीन्हें ।
तब विधि ब्रह्म कहाई ॥ ७७ ॥
जैसे गगन रवी रहे वासा ।
किरन भास भूमी पर आई ॥
जब सब सिमट भास गत रवि में ।
बुंदा सिंध कहाई ॥ ७८ ॥
नाश अपकाश सूर शशि विनसे ।
तब रवि रहे कहो कहँ जाई ॥

सो ठेके का खोज लगाओ ।
यह पद कौने ठांई ॥ ७९ ॥
शास्तर ने गत गैल भुलाई ।
ब्रह्म बाँध जड़ जीव रहाई ॥
यह बिध भूल फूल मन मारग ।
यासे गति नहिं पाई ॥ ८० ॥
ज्ञान ठान दृढ़ शास्तर भाषा ।
परमहंस ज्ञानी उरझाई ॥
चार अवस्था भाष बताई ।
सो सब कहत सुनाई ॥ ८१ ॥
सब ज्ञानी तुरिया गति गावैं ।
पूछो भेद सो मनमुख माहीं ॥
जाग्रत स्वप्न सुषोपति तुरिया ।
तुरियातीत सुनाई ॥ ८२ ॥
जाग्रत स्वप्न का भेद न बूझैं ।
सुखपति तुरिया मुख से गाई ॥
तुरियातीत रीत मन मारग ।
आगे भेद न पाई ॥ ८३ ॥
बानी चार लार कहि बोलैं ।
परा पसंती मधमा भाई ॥
बैखरी बिधि बोलैं सब बोली ।
कँवल पेट के माहीं ॥ ८४ ॥

यहँ से बानी उठत बतावैं ।
बिष्ठाग्रास बतावत आई ॥
जहँ से बानी उठत अवाज़ा ।
वहँ का खोंज न पाई ॥ ८५ ॥
ज्ञान तीन गति गाय सुनावैं ।
रेचक पूरक कुंभ कहाई ॥
यह सब ज्ञानी बानी बूझैं ।
मन संग बुद्धि बहाई ॥ ८६ ॥
मन बिधि ज्ञान बुद्धि बस देखे ।
ब्रह्म ब्रह्म कर कहत सुनाई ॥
आतम को अद्वैत बतावैं ।
यासे बूझ न आई ॥ ८७ ॥
आतम कुबुधि बंध करमन में ।
ब्रह्मज्ञान गति कहत बुझाई ॥
रहे अज्ञान बास जड़ देही ।
ता बिच गांठ बँधाई ॥ ८८ ॥
हटकर ओट ठटे जब सूरत ।
अंडा फोड़ अगम गति पाई ॥
शब्द सिंध सूरत चढ़ जावै ।
जब पावै पद आई ॥ ८९ ॥
तुलसी तुच्छ कुच्छ नहिं जाने ।
संत पंथ कह कहत सुनाई ॥

मैं मति नीच कींचसम किंकर ।
सतसँग समझ सुनाई ॥ ६० ॥

होली ६३

अली आन लखाई गुर ने अगम आदि री ।
सखी सतमत सूरत गगन नादरी ॥ टेक ॥
पिउ को निरख पद परख पुकारी ।
संत बिना नहिं लगत दादरी ॥ १ ॥
सुन्न महल पर धुन धधकारी ।
प्यारी पकड़ लख सुगम साधरी ॥ २ ॥
रूप रेख बिन देख निशानी ।
रोम एक रबि कोटि बादरी ॥ ३ ॥
तुलसी चरन धूर सतगुरु की ।
लै लख धुर की कहि अनाद री ॥ ४ ॥

होली ६४

कोई पूछोरी जा सतगुरु से ।
बाल तरुन बिरधापन बीता ॥
प्रीत करी सोइ रीत रखी नहिं धुर से ॥ टेक ॥
जोग ज्ञान बैराग बिरह नाहिं ।
घटत स्वांस नित सुर से ॥ १ ॥
बीतत बदन बिषय रस माहीं ।
भेंट नहीं पिया पुर से ॥ २ ॥

हिय में हिलोर पिया बिन प्यारी ।
उठत अगिन जिय भुर से ॥ ३ ॥
तुलसी ताप तपे दिक माहीं ।
मरत दवा बिन ज्वर से ॥ ४ ॥

प्रभाती ९५

सतगुरु बिन ज्ञान गई खान में जहाना ॥ टेक ॥
तीरथ और बरत न्हात फिरत है ज़माना ।
कच्छ मच्छ जल जनम आठ पहर का अन्हाना ॥ १ ॥
शस्तर नर सार सो ब्योहार हू न जाना ।
आतम तम रूप भूप भवन में समाना ॥ २ ॥
ब्रह्मा बैराट नाभ कँवल है पुराना ।
सोई बैराट मनुष देह को बखाना ॥ ३ ॥
अगिन और अकाश पवन बास में बंधाना ।
जल थल तत पांच तीन गुनन में रहाना ॥ ४ ॥
उतपति घर बाद की उपाधि को न जाना ।
खोजे बिन साध आदि अंत को भुलाना ॥ ५ ॥
नर हर बेदान्त ब्रह्म देत हैं लखाना ।
तुलसी तत मूल छांड़ पूजते पषाना ॥ ६ ॥

शब्द ९६

एरी आली अपने में देखो आंप ॥ टेक ॥

तैं जपने में सखी जनम बिशेषा ।

लेखा सुपन बिलाप ॥ १ ॥

तप तपना नहिं जोग समाधा ।

साधोरी सूरत साफ़ ॥ २ ॥

दै दुरबीन चीन दरबारा ।

धारा गंग मिलाप ॥ ३ ॥

गगन गुहा तुलसी अली ऐजै ।

खैंचे धनुआँ चाप ॥ ४ ॥

राधास्वामी दयाल की दया
राधास्वामी सहाय

निरनै और भेद संत मत का

सम्वाद महाराज तुलसी साहब का साथ फूलदास
साधू-कबीर पंथी के

फूलदास उवाच

॥ चौपाई ॥

फूलदास जव यचन बषाना। सत्त कबीर पंथ अस जाना॥
फूलैदास महंत अस नामा। काशी कबीर चौरा अस्थाना॥
महिमाँसुनिपुनि हमहूं आये। दरशकीनसुख मनउपजाये॥
फूलदास तव यचन उंचारा। गुरूपंथ बिधि कहौ बिचारा॥
को है गुरू पंथ को कहिये। कौन मते के साधू कहिये॥

तुलसीदास उवाच

॥ चौपाई ॥

संतगुरू और पंथ न जाना। यहिजेहि संत पंथ हित नामा॥
दूजा इष्ट न जानौं कोई। संत सरन नित श्रुति रहे सोई॥

फूलदास उवाच

॥ चौपाई ॥

संतगुरू विन पंथ न होई । अपना गुरु मत भाषौ सोई ॥
सतगुरुविना ज्ञाननहिं आवै । सतगुरुविना भेदनहिंपावै ॥

तुलसीदास उवाच

॥ चौपाई ॥

कहो कैसे गुरु भेद लखावैं । कौन राह से पंथ वतावैं ॥
ताकी विधि कहो तुम साषी । सो कृपाल दायाकर भाषी ॥
हम अजानकुछ मर्म नजाना । तुमहौ साधू परमनिधाना ॥
तुमकोकससतगुरुदरसावा । भाषिभेदसोइमोहिं सुनावा ॥
मैं अतिदीन दया कर कीजै । दीनदयाल भेद पुनि दीजै ॥

फूलदास उवाच

॥ चौपाई ॥

तुलसीदास सुनो चित लाई । पंथ भेद मैं कहूं सुनाई ॥
सत्तपुर्ष रहेपोहप मंझारा । सम्पुटकँवलखुलेतेहिवारा ॥
सत्तपुरुष तेहि वचन उचारा । ज्ञानी वेग जाव संसारा ॥
कालदेत जीवन को त्रासा । सत कबीर काटो जम फांसा ॥
प्रथमे चले जीव के काजा । सतजुग चले पास धर्मराजा ॥
धर्म देख उन बोले वानी । जोगजीत कित कौन पयानी ॥
तव कवीरअस कही पुकारी । जीवकाज मैंजगत सिधारी ॥

सत्तपुर्ष अ्रस कहा बुझाई। जग में जाय जीव मुक्ताई॥
धरमरायअ्रसवचनसुनाई। तुमभौसिंधबिगारन चाही॥
तबकबीर बोले अ्रस बाता। तुम्हरी करहुँ प्रान की घाता॥
पुर्ष वचन अ्रब देहौ टारी। तौ हम तुम को देहिं निकारी॥
मनमें सोच धरम सकुचाना। तब उनजुगको कीन पयाना॥
सतजुग नाम मुनिंद्र धरावा। चौकाकरजीव लोक पठावा॥
चौका कर परवाना पावै। छूटै जीव मुक्ति को जावै॥
अ्रौर त्रेताजुग कीन्हा चौका। जीव मिले जो किये बिशोका॥
द्वापर जुग की कहूँ बपानी। धुंधल सुपच खेवसर जानी॥
मुक्तिलोक जीवकियो पयाना। अ्रस२ जीवमुक्तिकीजाना॥
चौकाकर परवाना पावा। नरियरमोड़ तिनका तुड़वावा॥
कलजुग नाम कबीर कहाये। पुरइन सेत पान पर अ्राये॥
काशी नगर कीन कर काया। नूरा नीमा के घर अ्राया॥
बालक जान चीन्ह नहिं पाये। कई दिवस अ्रस बीत सिराये॥
एक दिवस धर्मदास चितावा। चौका कर परवाना पावा॥

तुलसीदास उवाच

॥ चौपाई ॥

भर्म एक मोरे उपजाई। चौका बिधी कहो समझाई॥
चौका कीन दीन परवाना। सो विधि मोसों कहो बषाना॥
धरमदास जबचौका कीन्हा। जसकबीर वाकोकहिदीन्हा॥
सोबिधिमोकोबरनसुनाअ्रो। दयाभावयहविध दरसाअ्रो॥

फूलदास उवाच

॥ चौपाई ॥

तुलसीदास सुनो तुम काना ।
चौके का मैं कहौं विधाना ॥

॥ छन्द ॥

निज भाव आरत सुन खेवसरी । तोहि कहौं समझाय के ॥ १ ॥
मिष्टान पान कपूर केला । अष्ट मेवा लायके ॥ २ ॥
पांच बासन सेत बस्तर । कजली पत्र अछेदना ॥ ३ ॥
नारियर और पोहप सेतहि । सेत चौका चांदना ॥ ४ ॥

॥ सोरठा ॥

और आरत अनुमान, सब बिधि आनो साज तुम ।
पूंगीफल परमान, शब्द अंग चौका करौ ॥

॥ चौपाई ॥

औरवस्तु आनौ सुठपावना । गउघृत और सेतसोहावना ॥
ऐसे शिष्य सिषापन मानै । ततखन सब बिस्तारजो आनै ॥
सेत चदरवा दीन्हौं तानी । आरत कीन जुगत बिधिठानी ॥
चौकापरबैठक जब लयऊ । भजन अखंड शब्द धुन भयऊ ॥
पांच शब्द का दल जबफेरा । पुर्ष नाम लीन्हा तेहि बेरा ॥
नरियर मोड़त बास उड़ाई । सत्तपुर्ष को जाय जनाई ॥
छिन में पुर्ष परसपद आये । सकल सभा उठ आरत लाये ॥
पुनिआरत बिधि दीन मँडाई । तिनका तोड़ा जल अचवाई ॥

सोइ सिष हाथ दीन जब पाना। पावैं पान सोइ लोक पयाना॥
शब्द अंग दीन्हो समझाई। शिष्य बूझ के सुरत लगाई॥
पहुँचै लोक अगम के द्वारा। चौका बिधी कबीर पुकारा॥
यह विधि जीव करे जो चौका। जाका मिट गया संसै शोका॥

तुलसीदास उवाच

॥ चौपाई ॥

तुलसीदास मन में मुसक्यानी।
मौन रहे कुछ कही न बानी॥

फूलदास उवाच

॥ चौपाई ॥

फूलदास विधि कहे सुनाई। तुलसीदास कुछ मन में आई॥
कह तुलसी नहिं बूझ बयाना। फूलदास मन में रिसियाना॥
तुलसी रीस ताहि पहिचानी। दीन होय जोड़े जुग पानी॥
फूलदास अस कहे बिचारी। तुलसी कैसे मौन सँवानी॥
चौका कबीर भाष बतलावा। तुम्हरे मन कुछ एक न आवा॥
सत कबीर जो बिधी बताई। सो हम तुम को भाष सुनाई॥

तुलसीदास उवाच

कहि कबीर जो चौका गावै। सो विधि कहो तो मनमें आवै॥
दासकबीर जो कही बषाना। सो विधि चौका है परमाना॥
वाका भेद बिधी बिधि गावै। तब तुलसी के मन में आवै॥

उन पुनि चौका कौन बतावा। तुम ने कौन बिधी ठहरावा ॥
नरियर उन पुनि कौन बतावा। मोड़े तास जो बास उड़ावा ॥
तुम बज़ार से नरियर लावा। ताकी बिधि तुम हमैं सुनावा ॥
जो कबीर नरियर फ़रमावा। सो तौ तुम्हरी बूझ न आवा ॥
सिलपिलीदीप से नरियर लाये। ताके पांच फूल बतलाये ॥
पांच फूल का नरियर होई। ताको भेद बताओ सोई ॥
सिलपिली दीपसे नरियर आवा। ताके पांच फूल बतलावा ॥
वेही दीप जलखंडी राजा। तासे आना नरियर साजा ॥
सो नरियर का भेद बतावै। तब तुलसी के मन में आवै ॥
नरियर बास उड़ाव न जानो। ताकी बिधि तन भीतर मानो ॥
जो जो संतन मुख से भाषा। सो काया के भीतर राखा ॥
पिंड ब्रह्मंड दोऊ हैं एका। है है नरियर पिंड बिबेका ॥
ताकी बिधी भेद दरसाओ। सो बिधि हमको भाष सुनाओ ॥
पान प्रमाना भाषा लेखा। ताका मन में उठै बिसेषा ॥
बेचै बरई पान बतावा। सो परवाना मन नहिं आवा ॥
अम्बू सागर देखो जाई। नरियर पान की बिधी बताई ॥
चौदा हाथ पान बतलावा। सो कबीर अपने मुख गावा ॥
चौदा हाथ पान बतलाओ। सो परवाना भाष सुनाओ ॥
वह भी काया में कहुँ होई। संत कृपा से पावै सोई ॥
अठमेवा तुम भाष सुनावा। छुहारा दाख बदाम मँगावा ॥
यह हमरे मन में नहिं आवै। कहि कबीर सो भाषि सुनावै ॥

अठमेवाइ पुर्ब बिधि भाषी। पुर्ष आठ मेवा कहि साखी ॥
और कपूर उन भाषि सुनावा। तुम दुकान बनियें से लावा ॥
वह कपूर काया के माहीं। ताकी बिधि कोइ संत बताहीं ॥
गऊ घृत्त तुम भाख सुनावा। सोभी यही गऊ घृत्त गावा ॥
सो कबीर बिधि और बताया। गो इंद्री का घृत कहाया ॥
कजली पत्र कहा उन गाई। काया मे साकृष्ट दिखाई ॥
कजली पत्र छेदन बतलावा। काटि पेड़ तुम खंभ गड़ावा ॥
कजली छेदनकौन बखाना। तुमताकीबिधि नहिं पहिचाना ॥
बासन पाँच कबीर बतावा। तुम तांबा पीतल मंगवावा ॥
पांचौ बासन काया माहीं। करता ठठेरे आप बनाई ॥
सो बासन का कहौ विचारा। तब जीव उतरै भौजल पारा ॥
तुम जो बस्तर सेत सुनावा। धोआ कपड़ा आन मंगावा ॥
वस्तर सेत कबीर बखाना। सो विधि तुमने नहिं पहिचाना ॥
संत सरन सेवा चित लैहौ। साध कोई बिरले से पैहौ ॥
पूगीफल उन भाषि सुपारी। ताका मर्म न जान बिचारी ॥
निकरै पवन सुपारी माहीं। सोफल पूगी चौका गाई ॥
पवन सुपारी संतन पासा। दीन होय पावै निज दासा ॥
पांच शब्द चौका उन भाषा। भिन २ भेद बताओ ताका ॥
एक शब्द काया के माहीं। और चार का भेद बताई ॥
चार चार विधि कौन ठिकाना। न्यारे न्यारे कहौ मकाना ॥
न्यारी २ विधि बतलइया। पांचौ शब्द कबीर सुनइया ॥

चौकाकौन शब्द धुनगाजा। कहौवह शब्दकेहिठामबिराजा।
श्रौर चार की बिधी बतावै। तव तुलसी के मनमें श्रावै॥
सेत चद्‌रवा दीन तनाई। सो कबीर ने कहा बनाई॥
कपड़ातान चद्‌रवा कीन्हा। कहिकबीर सोबिधिनहिंचीन्हा
आरत करन साज अतलाई। सूरत रितरत मरम न पाई॥
श्रावै सुरत शब्द रित माहीं। सो कबीर ने भाषि सुनाई॥
चौका कौन ठिकाने कीन्हा। ताकी राहरीत नहिं चीन्हा॥
कहिकबीर चौका सोइ साजा। जहं बसैशब्द श्रखंडितगाजा
चौका माहिं शब्द तुम गाई। स्वांस थके खंडित ह्वै जाई॥
श्राठ प्रहर चौसठ घड़ि गाजा। येंबिधिशब्द श्रखंडितसाजा
ता चौके का करौ बखाना। सो कबीर मुख श्राप बखाना॥
कहि कबीर सोई बिधि हेरे। पांच शब्द के दलको फेरे॥
सोदल कौनशब्द केहि ठामा। याकी बिधि भिनुभाषिबषाना
कौन ठिकान पांच दल फेरा। पुर्ष नाम केहि ठेके हेरा॥
नरियर मोड़त बास उड़ाई। सो नरियर मोड़ा केहिठांई॥
नरियर बनियें हाट मँगावा। सोनरियर मनमें नहिं आवा॥
नरियर मोड़त बास उड़ानी। सो कहो बातें ठीक ठिकानी॥
नरियर मोड़त बास उड़ाई। तुर्त पुर्ष के दरशन पाई॥
सो ततबर कहौ पुर्ष दिखाना। सो ठीके का करो बयाना॥
नरियर ऐसा कबीर बतावैं। मोड़त छिन पदपुर्ष दिखावैं॥
तुम तौ नरियर मोड़े श्रनेका। उमर गई पुनिपुर्ष न देखा॥

चौकाकर परवाना लीन्हा । तनबीता पुनि पुर्ष न चीन्हा॥
मिलन कबीर आज बतलावा । पूंछे कोइ नहिं भेदबतावा
कहा कबीर जीवतकर लेखा । तनबीता सुपने नहिं देखा॥
परवाना सतलोक पठावै । जीवतमिले न मुयेकोइपावैं॥
कहि कबीर छिन लोकै जाई । सो परवाना भेद न पाई॥
सतकबीर परवानाभाषी । सो तुलसीसूझी नहिं आंखी॥
तिनका तोड़ के जल छपचवाई । यह विधि तुमने भेदवताई
तिनका तिरन कबीर न गावा । तिनका कौन मर्म बतलावा॥
सिषके हाथ पान पुनि दीन्हा । कौन पान भाषा उन चीन्हा॥
चौदा हाथ पान बतलावा । तुम बरई की हाट मँगावा॥
पावै पान सो लोक पयाना । यह कबीर ने करी बषाना॥
तुमहूँ पान लिये हैं हाथा । देखा कहौ लोक बिख्याता॥
जोइ २ कहो देख दृग अपना । हाल मिला कहो २ न सुपना॥
जाना विधि विधि पाय न होई । पाये कहैं कबीर बिलोई॥
शव्द अंग कब्बीर वुझाई । शिष्य बूझकर सुरत लगाई॥
पहुंचे शिष्य अगम के द्वारा । चौका सुरत कबीर पुकारा॥
निरत कबीर द्वार दृग भाषा । सूरत शव्द मिलैसिष साषा॥
सूरत शब्द मिले चढ़ चापा । घर लिपाय चौका तुम थापा॥
नौ तम चौका द्वार लिपाई । यह कबीर चौका नहिं गाई॥
चौका नौतम भेद बताओ । तब कबीर का गाया गाओ॥
जो कबीर विधि भाषा चौका । मिटै जीव का संसै शोका॥

देखौ तुम अपने मन मांही। संसै सोग अनेक सताई॥
चौका करै शोक नहिं आवै। यह तौ शोक अनेक सतावै॥
चौका कहौ कौन है भाई। तासे संसै शोक नसाई॥
कर २ चौका लोग सुनावै। छिन २ संसै शोक गिरावै॥
यह चौका परतीत छुढ़ाया। सो तुलसी के मन नहिं आया॥
चौका कर पावै परवाना। एक पलक में लोक पयाना॥
लोक बिधी सिष आय बखाना॥ सो चौका मोरे मन माना॥
चौका पान अनेकन खाया। बपुरे कोऊ लोक नहिं पाया॥
चौका कर कर साख बतावे। जीवत कोई लोक नहिं पावै॥
चौकाकर कर जन्म सिराना। अब मरनेका रहा ठिकाना॥
मूये पर मुक्ती नहिंपावै। यह कहोलोक कौन बिधिजावै॥
जो कबीर ने चौका गाया। सोचल आज लोक जिन पाया॥
जो कुछ पंथ कबीर चलाया। पंथ भेद कोइ मर्म न पाया॥
पंथ कबीर जौनबिधि भाषी। सोताकीबिधिसूझीनआंखी
पंथ कबीरकौनबिधि गावा। गयेकबीर सोइमारग पावा॥
पंथ नाम मारग का होई। मारग मिले पंथ है सोई॥
बिन मारग जो पंथ कहावा। सोउन नहीं पंथ को पावा॥
पंथ कबीर सोई है भाई। गये कबीर जेहि मारग जाई॥
यह नहिं पंथ कहावे भाई। चेला कर सिष राह चलाई॥
यह सब जात पांत कर लेखा। यासे गुर सिष तरत न देखा॥
अब कबीर की साष सुनाई। जो कबीर अपने मुख गाई॥

पुरइन सेतपान कियौ चौका। चीन्हौ पुरइन छांडोधोखा॥
पुरइन सेत का खोज लगाओ। ढूंढ ताहिपर चौका लाओ॥
तुम धरतीपर चौका ठाना। पुरइन सेत कबीर बखाना॥
यह तौ विधि मिली नहिं भाई। कही औरतुम और चलाई॥
यह तुम बनिये हाट लगावा। कहा कबीर सो मर्म न पावा॥
जो कबीर ने. विधी बताई। शब्दराह मारग समझाई॥
शब्दचीन्हकरबूझविचारा। केहिंविधिशब्दकहैंनिरवारा॥
जाको कहिये साध सुजाना। शब्द चीन्ह सोइ बूझैज्ञाना॥
सोई साध विवेकी होई। कहा कबीर पद बूझै सोई॥
शब्द पंथ सब राह बतावै। भिन्न २ विधि विधि दरसावै॥
कोऊ न बूझै सुरत लगाई। चौका पट्टा औरहि गाई॥
सब कहि भिन्न २ दरसाई। कोई पंथिन की दृष्ट न आई॥
पंथ और मग औरे जाई। कहि कबीर सो राह न पाई॥
अब कबीर मुख शब्द सुनाओं। फूलदास सुनमनमें लाओ॥
चौकाराह पंथ दरसाऊं। कहि कबीर मुख शब्द सुनाऊं॥
तुलसी शब्द कबीरसुनाई। फूलदास सुन सुरत लगाई॥

मंगल

खोजौ साध सुजान सो मारग पीव का।
परख शब्द गहौ सरन मूल जहँ जीवका॥१॥
भौजल अगम अपार लहर विकराल है।
कठिन यह पाँचौ मगर बीच जम जाल है॥२॥

इन्द्रादिक ब्रह्मादिक पार न पावहीं ।
गुरु बहियाँ कढ़िहार जो पार लगावहीं ॥ ३ ॥
निरख परख कढ़िहार तौ घर पहुचावहीं ।
देत नाम की डोर तौ दुख बिसरावहीं ॥ ४ ॥
बैठी आनंद महल परम गुन गावहीं ।
सुखमन सेज जगाय तौ पिया रिझावहीं ॥ ५ ॥
बिन जल लहर अनूप तौ मोती झिलमिले ।
देख छत्र उजियार तौ हंसा हंस मिले ॥ ६ ॥
अग्र जोत उजियार तौ पंथ सिधावहीं ।
कोटिन भान निछावर आरत साजहीं ॥ ७ ॥
का लिखदीन्हे पान तौ तिनका तोरई ।
का नरियर के मोड़े तौ जम घर बोरई ॥ ८ ॥
सत लिख दीन्हे पान सो तिरगुन तोरई ।
सुरत फूल बर मूल नारियर मोरई ॥ ९ ॥
नरियर भेद अगम्म संत जन मोरई ।
कहैं कबीर तेहि जांच तौ बंदी छोरई ॥ १० ॥

मंगल

तेरो सँग निकर गयौदूर। सुहागन आय मिलो ॥टेक॥
आया अदेशा तुझै आद घरका। लियेशब्द टक सार ॥१॥
सतगुरु घाट तुझै है चढ़ना। चढ़ने का पंथ सिधार ॥२॥
नवयें धाम कुंजी खोलिये। दसयें गुरु परताप ॥३॥

चौका चार गुप्त हम कीन्हा । ताका सकल पसार ॥४॥
कहैं कबीर धर्मदास से । यह चौका है निरधार ॥५॥

॥ चौपाई ॥

यह कबीर चौका अस भाषा॥मूल वृक्ष तजि पकड़ोसाषा॥
पंथराह चौका अस जाना । सोइ कबीर पन्थी को माना॥
कहि कबीर सो राह उठाई । अपने मत की राहचलाई ॥
झूंठापंथ जगत सब लूटा । कहाकबीर सो मारग छूटा॥
कहाकबीर जीवतनिस्वारा। तुमलै उलटी फांसीडारा ॥

फूलदास उवाच

॥ चौपाई ॥

सुन कर फूलदास सकुचाना । तुलसी बचन सत्तकर माना
तुमकबीर विधि भाषीरीती । यामें नेक न कही अनीती॥
जो कबीर ने पंथ चलाई । सो तुलसी ने राह बताई॥
साहब ने इक बानी भाषा । धरमदास कुलंदीन्ही साषा॥
वंस बयालिस तुम्हरे होई । अटलराजभाषा पुनि सोई॥
ऐसी शब्दसाष समझावै । और ग्रंथ यह भेद बतावै ॥
अंसकबीरअपनेमुखभाखा । अटलबयालिसवंसीसाखा॥
याकीतुलसीकसरभइया । कही बुझायकैसीविधिकहिया
कहिकबीरनेवंसबखाना । कही २ तुलसीकेहिविधिजाना॥
वंसबयालिस अटलबतावा । कस २ धर्मदाससोइगावा ॥
याकीविधि २ भेदबतइये । सो तुलसी बरतंत सुनइये ॥

तुलसीदास उवाच

॥ चौपाई ॥

बंसबयालिसभाषिसुनाऊँ । मुखकबीरविधिमैंसमझाऊँ॥
जो कबीर मुख भाखे बैना । ताकी बिधी सुनाऊँ सैना ॥
कायाबीर कबीर कहाई । शब्दरूप है घट के माहीं ॥
ताको नाम कबीर कहाई । सोकबीर है जगके माहीं ॥
चौथे पद से शब्द जो आवै । सत कबीर सोइनामकहावै
निज २ पदसे शब्दजो आवै । धर्मदास तेहि नाम कहावै॥
कायाबीर कबीर कहाई । धर्मदास यह मन है भाई॥
एकशब्द और एक कबीरा । धर्मदास मनभया अनीरा॥
धर्मदास को पंथ बतावा । धर्मदास मनशब्द समावा ॥
ताकीपंथराह बतलाई । यह कबीर मुख अपने गाई ॥
कायाबीर कबीर कहावा । धरमदास मनको दरसावा॥
बंसबयालिस मन के भाई । ताकीविधी कहूं समझाई॥
चालिसबंस बास मनकेरा । इकतालिस स्रुत सारबसेरा ॥
बिधीबयालिसशब्दबषाना । ऐसेबयालिसअटलकहाना॥
यहकबीर मुखभाख सुनावा । तुमकुछऔरऔरठहरावा ॥
मन और सुरतशब्दमेंजावैं । अस २ बयालिसअटलकहावैं
मनऔरसुरतशब्दभयामेला । असकबीरभाषौनिजखेला ॥
ग्रंथमाहिंप्रतिदेखोसाखी । यह कबीर मुख अपने भाषी॥
अब आगे का कहूं बषाना । फूलदास सुनियो दै काना ॥

भिनभिन भाषूं भेदबुझाई । आदिअंतसुनगुनमनमाहीं ॥
अगमनिगमभिन २ करभाषी । कहैंकबीरश्रुतसमझौवाकी
औरो और संत सबगाये । जोइ २ अगमपंथ पदपाये ॥
जिनकी विधिबताओसाषी । कहिकबीर सोइ संतनभाषी॥
जिनकीसुरतअगमपुरधाई । जिन २ की पुनिसाषसुनाई॥
कहिकबीर सोइग्रथमेभाषा । छूटैतिमिरहोयअभिलाषा ॥
सुन और महासुन्न केपारा । जहँ वह सारशब्द विस्तारा ॥
सुनऔरमहासुन्नपुनिगावा । हमअनामनिहनामसुनावा ॥
यह आलोक कबीर लखावा । तापीछे सतलोक बतावा॥
सत्तपुर्ष सतलोक कहाये । ताको हम सतनाम सुनाये ॥
सोलासुत कब्बीर बखाना । हमने सोला निरगुन ठाना ॥
सोलामांहिं निरंजनपूता । हम भाषा निरगुन मज़बूता ॥
सोईनिरंजन मन भया भाई । जाने जग रचना उपजाई ॥
हमनिरगुनसेसरगुनभाषा । मनकोसरगुनकहिकरराखा ॥
मनसरगुनसबजगउपजाई ।कहिकबीरतुलसीपुनिगाई॥
मनहिंकबीरनिरंजनगावा । ब्रह्माविश्नुशिवपुत्रकहावा॥
निरगुनसेसरगुनमनभाषा । हमपुनितीनगुननमें राखा ॥
तीनों गुन मन से उपजाई । ब्रह्माविश्नुशिवगुनकेनाई ॥
सरगुनमनहिंनिरंजनकहिया । मनहिंनिरंजननिरगुनभइया
यहकबीरतुलसीविधकहिया । तुलसी कहीकबीरसुनइया ॥
संतमताविधिएकहिजाना । नामकहाविधिआनइआना

तासे तुमको बूझ न आवै । अन्य२ नामधरे बिधि गावै ॥
सतसाहब सतनाम सुनावा । सार सो शब्द अनाम कहावा ॥
निरगुन नाम निरंजन जाना । राम कहा सोई मनहिं बषाना ॥
कहि २ संतन भाष सुनाई । सोई कबीर अपने मुख गाई ॥
और संत और बिधि समझाई । यही कबीर और बिधि गाई ॥
मत पहुंचे पहुंचे कर एका । जो अबूझ सो बांधे टेका ॥
जिन२ अनुभव भाखसुनावा । अगम पंथ बिधि एकहि गावा ॥
पुरइनपात कबीर सुनाये । पुरइन सोई संत सब आयें ॥
पुरइन सेत कबीर सुनावा । सोइ सब सेत संत बतलावा ॥
सुरत शब्द कबीरहि खेला । सार शब्दमत अंगम अकेला ॥
सूरत सत्तनाम कियौ सैला । सूरत सारशब्द करे मेला ॥
निःअक्षर सोइ आदि अमेला । कहिये सार शब्द तेहि खेला ॥
जो २ संतन कही अगारा । सो २ दास कबीर पुकारा ॥
यामें भर्म न कीजै भाई । संत द्रोह नीच ऊँच न गाई ॥
संतको नीच ऊँच बतलावै । आदि और अंत नर्क गतपावै ॥
संतदेशगत अगम बखाना । फूलदास तुम्हरा नहिं जाना ॥
चौका पंथ यह हाट बजारा । चौका संत पंथ गति न्यारा ॥
फूलदास सुन सीतल भइया । स्वामी तुलसी अगम सुनइयां ॥
हम तौ पंथ भेष में भूला । तुम कहा सार भेद पद मूला ॥
फूलदास ऐसी बिधि बोला । तब हम अपन दीनगत खोला ॥
तुलसी निःकाम संत कर चेरा । संत कृपा सो अगमपद हेरा ॥

संत चरन परसादी पाई। तासे सब कहैं तुलसी गुसांई॥
सब मिलके पुनि कहें गुसांई। मैलामन मत बुद्धि न पाई॥
मैं किंकर संतनकर दासा। संत चरन बिन और न आसा॥
दास कबीर संत हैं स्वामी। उन सम फूलदास को जानी॥
तुम साधू हो चतुर सुजाना। तुलसी जानो दास समाना॥
मैं साधन का दास विचारा। संत चरन की लागौं लारा॥
दीन जान किरपा कर हेरा। वे दयाल सब कीन निबेरा॥
तुमहूं साध दया के स्वामी। फूलदास तुम चरनन जानी॥
भूल न मोरी अचरज मानों। मैं तुम्हरे चरनन लिपटानों॥

फूलदास उवाच

॥ चौपाई ॥

फूलदास कह स्वामी सूझा। है कबीर तुलसी नहिं दूजा॥
मैं महंत मनमान निकामा। मैं गतिनीच न तुमको जाना॥
हाथ चरन पर तुरत चलावा। दीन होय सिर चरन गिरावा॥

तुलसीदास उवाच

॥ चौपाई ॥

तुलसी धाय पाय को लीन्हा। चरन सीस तेहि अपना दीन्हा।
तुलसी कह ऐसी नहिं कीजै। कृपा चरन अपना मोहिं दीजै॥
फूलदास विधि कैसी भाखी। दीन साधना क्या कहुं जाकी॥

फूलदास उवाच

॥ चौपाई ॥

फूलदास कह अंध अचेता। तुलसी स्वामी दीन्ही चेता॥
मोरा मन मैला अति नीचा। यह महंत मतमन सम कींचा॥
मोरी मत पर दृष्ट न दीजे। फूलदास अपना कर लीजे॥
तुम्हरे चरन माहिं निरवारा। बिना चरन नहिं होय उबारा॥
जो कबीर सो तुम हो स्वामी। दया करो मोहिं अंतरजामी॥
मैं अपनी गति कस२ गाऊँ। सुरत न छांड़े तुम्हरा पाऊं॥
एक बात मोरे मन आई। भाषौ स्वामी तुलसी गुसांई॥
है शरीर में बीर कबीरा। सात दीप नौ खंड का बीरा॥
ऐसी साषि कबीर पुकारा। बूझौ यह बिधि कौन बिचारा॥
याकौ भेद भर्म मोहिं आवा। भाषौ स्वामी भरम बुझावा॥

तुलसीदास उवाच

॥ चौपाई ॥

फूलदास सुनियौ ठैकाना। याका भाषूं सकल बिधाना॥
धरमदास मनहीं को जानो। काया बीर कबीर बषानो॥
बिधि कबीर सम्बाद बषाना। धरमदास मन तुलसी जाना॥
काया बीर मन कहि सम्बादू। यह कबीर मुख भाषी आदू॥
साती दीप कबीर समाना। सो कबीर मन माहिं भुलाना॥
मन भूला इंद्री संग साथा। काया कबीर देह में राता॥

सात दीप नौ खंड समाई। रहत कबीर भर्म उपजाई॥
तन संग कर्म माहिं किया वासा। उपजै बिनसै पुनि २ नासा॥
तन सँग पाया हिये रहे सोगा। उपजै बिनसै दुखसुख भोगा॥
मन से इंद्री वास उड़ाई। सो मन धरमदास है भाई॥
काया बीर जो धरम न जाने। होय कबीर आदि पहिचाने॥
सुरत सैल जो चढ़ै अकाशा। फोड़ अकाश अमर पद बासा॥
अगम चढ़ै सतगुरु पद पासा। सत्तलोक सतपुर्ष निवासा॥
ताके परे अगम पुर धामा। देखै लोक अलोक अनामा॥
सत्त कबीर ताहि कर नामा। और कबीर जिव भरमें खाना॥
सत कबीर हूं वहँ की जाई। और कबीर भौ भटका खाई॥
सत्त कबीर जाहि कर नामा। चढ़ै सुरत सतलोक समाना॥
सतगुरु सत्तपुर्ष है स्वामी। सो गुर करै चेला परमानी॥
सतगुरु सत्तपुर्ष है सेला। वह कबीर सतगुरु का चेला॥
वह कबीर जेहि राह बतावै। सुरत सैल सोइ अगम लखावै॥
वह कबीर भौ पार लगावैं। और कबीर भौ भटका खावैं॥
और गुरु चेला झूंठ पसारा। दोनों बूड़े भौ जलधारा॥
सतगुरु सत्त पुरुष की बाटा। चेला चढ़ै सुरत से घाटा॥
सोइ चेला है पद परमाना। और सगरा जग निगुरा जाना॥
कनफूंका से काज न होई। दोनों जाय नरक में सोई॥
सत्य सोई गुरु गगन प्रकासा। जासे मिटै काल की त्रासा॥
गगन चढ़ै सोई सतगुरु पाई। नाहीं तौ चेला निगुरा भाई॥
गगन चढ़ै गुरु परसै आई। चेला से पुनि गुरू कहाई॥

सत्त कबीर ताहि को नाई। काया कबीर को राह बताई॥
कनफूंका गुरु जग व्यौहारा। उनसे न उतरै भौजल पारा॥
सतगुरु सत्त कबीरहि पावै। चौका की बिधि बिधी बतावै॥
सुरत शब्द की डोर लखावै। चौके से चौथा पद पावै॥
शब्द शोर जो उठै अखंडा। सुरत राह से चढ़ गई डंडा॥
होवै सत्तपुरुष पद मेला। सो कबीर सतगुरु का चेला॥
सो कबीर चौका बिधि जानै। चौथे पद की राह बखानै॥
चौका बिधि भिन २ बतलावै। पंथ राह सतगुरु दरसावै॥
सूरत चढ़ै पंथ जब पावै। चौका पंथ राह सोइ आवै॥
यह चौका कब्बीर बतावा। चौका राह रीत समझावा॥

फूलदास उवाच

॥ दोहा ॥

फूलदास बिनती करै तुलसी स्वामी साथ।
चौका बिधि बतलाइये कस २ बिधि बिख्यात॥

तुलसीदास उवाच

॥ दोहा ॥

फूलदास बिधि २ सुनो चौका बिधि सब सार।
जो कबीर मुख भाषिया सो बिधि हम निरवार॥

॥ चौपाई ॥

चौका बिधि काया में गाई। जो कबीर ने कही लखाई॥
सिलपिलीदीप जल खंडीराजा। यहसबबिधि कायामें साजा

पांच फूल नरियर के गावा। सो सब काया माहिं लखावा ॥
सतगुरु मिलै तौ भेद बतावै। नरियर मोड़त बास उड़ावै ॥
बहुतक नरियर मोड़े भाई। पत्थर पर फोड़े तुम जाई ॥
नरियर मोड़त बास उड़ाई। तुमने गंध बास ठहराई ॥
यासे भेद मिलै नहिं भाई। ढूंढ़ौ बनियें हाट बिकाई ॥
अवै पान का भाषूं लेखा। पान परेपर आवन पेखा ॥
तुम बरई का पान मंगावा। बीरा कर २ ताहि खवावा ॥
बीरा पान कबीर लखावा। सोई पान घट माहिं बतावा ॥
सतगुरु मिलै पानपरआना। बिनसतगुरुकोइ राह न जाना
मेवा आठ बखाने जोई। अठ मेवा पुरुष है सोई ॥
सत कबीर ऐसी विधि भाषा। मेवा फल लीन्हे सिष साषा॥
काया पूर जोत है ताई। तुम कपूर बनियें से लाई ॥
इंद्री पांच बासना नासा। पांचौ बासन तन में बासा ॥
तुम लीन्हा तांबा और कांसा। यासे भूले अगम तमाशा ॥
पूंगी फल सूपारी गाई। स्वांसा पवन चलै तेहि मोहीं ॥
सोपारी पारी पद जाई। तुम बनिये की हाट मंगाई ॥
सेतै वस्तर बास बतावा। तुम बज़ार से कपड़ा लावा ॥
उन चंदा दर तान बतावा। तुम घर कपड़ा बांधि तनावा॥
उन तंदूल सेर सवा बतावा। तुम चौके चावल मंगवावा ॥
कजली पत्र छेदन उन कहिया। तुम केरा के खंभ गड़इया॥
सेत मिठाई उन बतलाई। तुम गुड़ मीठा खांड मँगाई ॥
नीके तम चौका चिन्हआवा। तुम सगरा घरजायलिपावा॥

आवै रत उन साज बतावा। तुम दीपक की आरत लावा॥
पांचौशब्दअखंडितकहिय॥खंभरीबजायजोशब्दसुनइया
पाँच शब्द का कहूं विधाना। न्यारा २ ठाम ठिकाना॥
सत्तशब्द पहिले परिमाना। सो कोइ साधू विरले जाना॥
सत्त शब्द सत लोक निवासा। जहं वहां सत्तपुर्प का वासा॥
दूजा शब्द सुन्न के माहीं। तीजा अक्षर शब्द कहाई॥
चौथा ओङ्कार विधि गाई। पंचम शब्द निरंजन राई॥
चढ़ब्रह्मंडफोड़असमाना। सुरत शब्द में लगे निशाना॥
ताहि परे सत लोक विराजा। अखंड शब्द ता ऊपर गाजा॥
मिलै संत कोइ भेद बतावै। तब वह पंथ संत से पावै॥
दीन होय गरुवाई डारे। संत कृपा से उतरै पारे॥
पंथी भेष टेक नहिं राखै। सुरत चीन्ह के द्वारा ताके॥
चौका काया कबीर बतावा। बोली चीन्ह भेद जिन पावा॥
जो समान चौका कर साजा। सो समानतनमाहिंविराजा॥
जो जो वस्तु चौका में गाई। भिन्न२ घट भीतर दरसाई॥
अंदर घट में चौका कीन्हा। सत्तलोक का मर्म जो चीन्हा॥

छन्द

चौका विधिगाई भाषिसुनाई। जोकबीर मुख आपकही१॥
तुलसी सब भाषी देखा आंखी। जब कबीर की साख दई २॥
घट भीतर जाना भेद बखाना। फोड़ निशाना पार गई॥३॥
अंतर गत गाई भेद सुनाई। तन भीतर विधि बात कही।४॥

देखा सत लोका अगम अलोका। चौका चौथे पार गई ॥५॥
यहबिधि हमभाष।नैनन ताका। सेत पुरइन तन तार लई ६।
तोड़ा तन तारा खोलकिवारा। अगम निगम का भेद कही ७
तुलसी कहेसाँचीयहबिधिबाची। शब्दसुरतगुरगैलगई॥८॥

मंगल

सतगुरु मारग चीन्ह दीन दिल लाय के।
बूझ अगम की राह पाय पद जायके ॥ १ ॥
दृग पर चौका पान जान जब पाइये।
नरियर सीस सम्हार सार समझाइये ॥ २ ॥
तत मत गुन हैं तीन सो तिनका तोड़िया।
सुरत निरत निज नैन नारियर मोड़िया ॥ ३ ॥
सुरत चढ़े असमान पोढ श्रुत डोर है।
दीन्हा दीन दयाल कालसिर फोर है ॥ ४ ॥
इन्द्री वासन पांच वासना जाइया।
अठमेवा है पुर्ष बाट तब पाइया ॥ ५ ॥
काया मद्धे पूर कपूर जनाइया।
पांच तत्त तन अगिन जोत दरसाइया ॥ ६ ॥
होत जोत उजियार पार श्रुत से लखो।
सारशब्द सतद्वार लार श्रुत से पको ॥ ७ ॥
मन बैठक है बास स्वांस सुन से भई।
पवन सुपारी सेत सोई चौका कही ॥ ८ ॥

गगन चढ़ै असमान चंदुरवा तानिया ।
सेत माहि हैं श्याम पान सोइ आनिया ॥ ९ ॥
नौ तम द्वार लिपाय सोई नौ द्वार हैं ।
अष्ट कँवल दल फूल मूल सोइ सार है ॥ १० ॥
यह बिधि चौका चार सार सोइ भाषिया ।
और चौका जग रीत चित्त नहिं राखिया ॥ ११ ॥
यह बिधि चौका चाह थाह जब पाइये ।
अगम चढ़ै सोइ संत पंथ दरसाइये ॥ १२ ॥
धरमदास धर ध्यान सुरत समझाइया ।
सुरत फोड़ असमान शब्द जब पाइया ॥ १३ ॥
अटल बयालिस बंस राज अस गाइया ।
याको भाखूं भेद भाव दरसाइया ॥ १४ ॥
चालिस सेर मन फेर इकतालिस सुरती भई ।
बिधी बयालिस शब्द अटल ऐसे कही ॥ १५ ॥
जो कोइ मिलि है संत भेद अस भाषिहै ।
मन चढ़ सुरत सम्हार शब्द में राखि है ॥ १६ ॥
सुरत शब्द मन मेल सैल समझाइया ।
अटल बयालिस बंस राज अस गाइया ॥ १७ ॥
तुलसी भाषा भेद भाव दरसाइया ।
चौका कौन कबीर हंस मुक्ताइया ॥ १८ ॥

॥ सोरठा ॥

तुलसी कहै पुकार, फूल दास चौका बिधी ।

यह गत तनहिं विचार, जो कबीर चौका कहा ॥
चौका चार चिताव, सुरत शब्द तुलसी कहै ।
दीन लीन मन भाव, भेद संत दरसावहीं ॥

॥ चौपाई ॥

अस चौका कब्बीर पुकारा । पुरइन पात पर साज सँवारा ॥
जो जल पुरइन बूझनलाओ । तन में पुरइन खोज लगाओ ॥
तापर बैठ करो चित चौका । सूरत चढ़ै मिटै मन धोखा ॥
जब कोइ सूरत संत लखावै । पुरइन सेत सुत चौका पावै ॥
पुरइन पात नभ गगन अकाशा । पावै सोइ सतगुरु का दासा
ताकर भेद लखावैं संती । पावै सोई कबीरा पंथी ॥
पान फोड़ के सुरत चढ़ावै । सहस कँवल दल अंदर पावै ॥
दो दल कँवल द्वार में ताके । सुन की धुन्न सुरत से राखे ॥
धरती ऊपर तरे अकाशा । ता के चार कँवल मध वासा ॥
वाके बीच नाल नल जानी । धधके ज़ोर गगन से पानी ॥
ता नाली चढ़ सुरत सँवारा । निरखै पिंड ब्रहमंड पसारा ॥
ताके परे अगम गढ़ घाटी । हिय दृग नैन निरखिये बाटी ॥
जोड़ा कँवल दोय दल चारी । तिरबेनी सोइ संत पुकारी ॥
सुरत अन्हाय सुन्न के पारा । ताके परे अगम का द्वारा ॥
पुनि सुन महा सुन्न के पारा । सत्तलोक सतपुर्ष अपारा ॥
सूरत सतगुरु मिले ठिकाना । तुलसी चौका भाषि बषाना ॥
सूरत शिष्य शब्द गुरु पावै । चौथा पद सतगुरु गत गावै ॥

॥ सोरठा ॥

तुलसी समझ बिचार, फूल दास चौका श्रुती ।
यह गति मनहि सिहार, जो कबीर चौका कहा ॥

चौपाई

फूलदास चौका बिधि जाना । यह कबीर मत माहिं बषाना ॥
चौका तन के माहिं सँवारा । यह कबीर बिधि माहिं पुकारा ॥
तुलसी राह पंथ बिधि गाई । सो सब समझ पड़ा मन माहीं ॥
बिन सत संगत राह न पावै । सत्त २ तुलसी गोहरावै ॥
मन महंत कुछ काम न आवै । अंत बाद नरकै लै जावै ॥
यह सब भूल भाव हम चीन्हा । चौका पाटा जगत अधीना ॥
चौका से कुछ काज न होई । वह चौका औरै बिधि जोई ॥
स्वामी तुलसी चौका भाषी । बिधि बिध्यान बिधी कहि जाकी ॥
काया माहिं रीत बतलाई । सोइ चौका सत सत्त चिन्हाई ॥
यह सब और पखंड पसारा । भौजल खलक खान की धारा ॥
जो कबीर चौका बिधि गाई । सो तुलसी बिधि समझ सुनाई ॥
चौका काया माहिं पुकारा । कहि कबीर कहि तुलसी सारा ॥
खूब २ मन में ठहरानी । तुलसी बचन सत्त कर मानी ॥
तुलसी कबीर भेद नहिं दूजा । हमरी बुद्धि नैन अस सूझा ॥
जग अजान कुछ मर्म न जाना । डिंभी पाखंड भेष भुलाना ॥
यह जग रीति जीत नहिं पावै । भेष पंथ सब पोल चलावै ॥
माला कंठी सेली माहीं । भूले पंथ भेष यहि राही ॥

जो कोइ मंत्र ज्ञान को जानै। जिनको बड़े संत कर मानै ॥
जो रथ गाड़ी बाज चलावै। जग जोइ बड़े साध ठहरावै ॥
गाय भैंस और खेती होई। चेला गांव महंती सोई ॥
माया मोह बँधे संसारा। जिनको साधू कहैं लवारा ॥
जग अंधा अंधे भये भेषा। यह दोउ पंथ इष्ट की टेका ॥
जग में इष्ट टेक लौ लावै। भेष टेक पंथी गोहरावै ॥
जग अंधा पुनि भेष भुलानो। यह सब काल राह रस जानों ॥
जहं लग अंत पंथ जग माहीं। भूले फिरैं राह नहिं पाई ॥
चेला करैं द्रव्य के काजा। भोजन खान पान कर साजा ॥
यहि आसा वस फिरे अयाना। बंधन जीव काल नहिं जाना
जिनसे मुक्ति जगत सब मांगे। आया संग्रह भोजन त्यागे ॥
जस २ रीत जगत की होई। तस २ साधू समझ बिलोई ॥
अस २ साध जगत में लेखा। जो कथि कही सो नैनन देखा ॥
संत रीत रस जगत न जाना। डिंभ करै तेहि संत बखाना ॥
संत दयाल दरश नहिं चीन्हा। उन बिन फिरै करम लौलीना ॥
वे दयाल के दर्शन पावै। मुक्ति राह अरु अगम लखावै ॥
जिनके बड़े भाग जग माहीं। नित प्रति संत चरन लौलाई ॥
कालजाल और जम की फांसी। दरशत संत करम भये नाशी ॥
वे साधू विरले जग माहीं। जग जल में जस कँवल रहाई ॥
वे सज्जन सत साध कहावैं। उनकी गति मत विरले पावैं ॥
संत भेद भिन कोउ २ जाना। भेष डिंभ सब भर्म भुलाना ॥
वे सब जग में कौन दुकाना। या में जक्त भेष लिपटाना ॥

जीवलोक की राह निनारी। कृपा संत बिन पावै न पारी ॥
हम तौ जन्मबाद सब खोवा। समझ पड़ी तब सिरधुनरोवा॥
बार २ नरदेह न पावै। यह तन दुर्लभ सब गोहरावै॥
जोगीऋषीमुनी और देवा। जपतप जोग ज्ञान बहु सेवा॥
पुनि जिन नरदेही नहिंपाया। हम अबूझ तनबाद गँवाया॥
अब यह समझ पड़ा सब लेषा। भेष पंथमें कछू न देषा॥
भेषपंथ मद राह अबूझा। सब अबूझ बस काहू न सूझा॥
मान बड़ाई दोज़ख़ काजा। जिह्वा इंद्री सब सुख साजा॥
यह कबीरने कहा पसारा। उन सबकीन जीव निरवारा॥
ना कोई बूझै समझ बिचारा। इन सबकीन दुकान बज़ारा॥
यह दुकान से लोग जोजावै। तो सबजगत रहन नहिंपावै॥
सांच झूंठ सबपरा निवेरा। चित चीन्हा नैनन से हेरा॥
तुलसी बिधि २ सत्त बषानी। मन में ठीक २ पहिचानी॥
तुलसी स्वामी संत सुजाना। अस २ बूझ सुनाई काना॥
तन और प्रानछूट सबजाता। यह पुनि भेद हाथ नहिं आता॥
सारवी शब्द अनेकन देखा। ग्रन्थ कबीर अनेक बिबेका॥
सो सब देख २ पचिहारा। बस्तु न पाई रहे अपसारा॥
सार भेद संतन ने जाना। सो ग्रंथन में नाहिं बषाना॥
साखी शब्द पढ़ै जो कोई। बस्तु न पावै सिरधुन रोई॥
कह्यौ कबीर सारपद गुप्ता। परघट माहिं लखो सब थोथा॥
यह तौ संत गुप्त मत भाषी। ताकी नक़ल ग्रन्थमें राखी॥

ढूंढे अब यामें अज्ञाना । पच २ मूरख भये हैराना ॥
यह सब ग्रंथ देख हम भूला । साषी शब्द सुपने कर मूला ॥
आंखी फार २ हम जोवा । जनम अकारथ बादहि खोवा ॥
शब्द साष जो पढ़ि २ चलि है । संत दृष्ट बिन कछू न मिलि हैं ॥
जो कबीर मुख कहकर भाषी । संत दृष्ठ बिन पड़े न आंखी ॥
तासे संत चरन सिर दीजै । कारज और बात में छीजै ॥
जो कबीर ग्रंथन में कहिया । सो तौ भेद संत पै रहिया ॥
हम भूठे ग्रंथन के माहीं । केहि विधि हमरे हाथै आई ॥
संत सुरत चढ़ गये जो पारा । पावै जिनसे भेद निनारा ॥
जगत भेष नहिं भेद विचारै । यह कह समझै सार असारै ॥
दीन होय सतसंगत तोला । जासे सूझै वस्तु अमोला ॥
तोलै दीन होय निज दासा । सो श्रुतसार मिलै उन पासा ॥
हम तौ सरन संत करलीना । और बात नहिं आवै यक़ीना ॥
जो कोइ लाख २ समझावे । हमरे मनमें एक न आवै ॥
कहौ को खोज सारकर दीन्हा । हम तौ स्वामीतुलसी चीन्हा ॥
संत कही और दासकबीरा । जो २ अगम पंथ पद धीरा ॥
जिन २ स्वाद पाय पदहेरा । हूं हौं उन चरनन कर चेरा ॥
चरनलाग तुलसी के तीरा । उनहीं लखाया अद्भुत हीरा ॥
अब कहुं चितलागे नहिं भाई । तुलसी वस्तु अमोललखाई ॥
बार २ चरनन सिर नाई । करि हैं तुलसी मोर सहाई ॥
अब तौ पोढ़ पोढ़कर पकड़ा । तुलसी चरननमें मन जकड़ा ॥

और कहूं मोहिं बोध न आवै। जो कोइ कोटि २ समझावै॥
समझ पड़ा सबबात बिधाना। तुलसी बिन सूझै नहिं आना।

॥ दोहा ॥

फूलदास बिनती करै पुनि २ सरन तुम्हार।
मैं अचेत चेतन कियौ तुलसी उतर्यौ पार॥

तुलसीदास उबाच

॥ दोहा ॥

फूल दास सज्जन बडे तुम चित मत बुधिसार।
संत चरन अब मन बस्यौ पैहौ सतसंग सार॥

॥ चौपाई ॥

फूलदास तुमसाधसुजाना। तुम्हरी बुधिनिरमलपरमाना॥
दिन दोपहर भयौ मध्याना। अब परशादी करो समाना॥
आटा चून चना कर होई। करो प्रशाद भाजी संग सोई॥
घी बिन पास न पैसा होई। नोन मिर्च चटनी संग सोई॥
कर पारस सब भोग लगाई। पुनि हम करैं प्रशाद बनाई॥

फूलदास उबाच

॥ चौपाई ॥

हम नहिं अपने हाथ बने हैं। सीत उछिष्ट और पानी पी हैं॥
तुलसी उठ परशाद बनावा। भयापरशादसाध सब आवा॥
सब साधू मिल भोग लगाई। भोजन कर आसन पर आई॥

फूलदास वंदगी सिर नाई। सीसटेक कर परसे पाई ॥
हाथ जोड़ कर विनती लाई। हे स्वामी तुम कृपा गुसाँई ॥
हम पुन दीनडंडवत कीन्हा। सीस नवायचरनपुनिलीन्हा ॥
फूल दास बोले सँग साथा। मनमें रहे मान मद माता ॥
रेतीदास ताहि कर नामा। देखा फूलदास घबराना ॥
वह अपने मनमें रिसियाना। स्वामीअवचलियेअस्थाना ॥
फूलदास कहैआज न आवौं। तुम सबमिलअस्थानै जाओ ॥
हमहुँ भोर विहाने अइहैं। रातवसे स्वामी पर रहि हैं ॥
तिन पुनि तरक कीन इक वाता। तुमहूं रहिहौ इनके साथा ॥
हम को सूझ पड़ा अस लेखा। तुम्हरीमतिवुधिअसरदेखा ॥

फूलदास उवाच

॥ चौपाई ॥

गुसा भये बोले अस बोली। ली उतार दीन्हीं सोइ सेली ॥
फूलदास दीन्हीं तेहि हाथा। रेती सीस नवायो माथा ॥
गलबिच डार महंती दीन्हा। सु वखूशीशीकीन्हा ॥
तुमतौ करौ महंती जाई। अब ह अस्थानै आई ॥
चेला चला बैठ सुखपाला। फू का और हवाला ॥
चेला मारग मता विचारा। मन किया अधिकारा ॥
छांड महंती हमको दीन्हा। यासे आधक वात कुछचीन्हा ॥
सब सुखभोग मनै नहिंलाये। यहतौ अधिक वात कुछपाये ॥
जो महंत पद होता भारी। तौ छांडत यह देत न डारी ॥

यह सब बात तुच्छ सम होई। तब हमरे सिर डारी सोई ॥
यह बिचार मन माहिं समाना। मनमत शुद्ध उठा अस ज्ञाना ॥
फिर पीछे मारग से आये। सुखपाले अस्थान पठाये ॥
सब मिलके जाओ अस्थाना। हम महंत संगउपजो ज्ञाना ॥
मंगलदास और गुरु भाई। टोपी सेली देव पहिराई ॥
आये पुनि महंत के पासा। जहं तुलसी की कुटी निवासा ॥
चवर दार सुखपाली गइया। चौरापर उन खबर जनइया ॥
मंगल चेला मन पछिताना। चौरा सून भया अस्थाना ॥
पुनि बिचार कीन्हा मनमाहीं। यह अस्थान महंती जाई ॥
यह दोनौं मिल कीन विचारा। हम छांड़ेतौ होय बिगारा ॥
जो कुछ होय २ सो होई। अब निबाह बिन बनै न सोई ॥
मंगल मनमें बहुत रिसाना। सेली पहिर बैठ अस्थाना ॥
रेतीदास कुटी पर आवा। तुलसी के पकड़े सोइ पाँवा ॥
रेतीदास बोल असबानी। मैं रहि हौं इनके ढिंग स्वामी ॥
कुटी सामने कुटी बनाई। दोनों रहे कुटी के माहीं ॥
रेतीदास दीन दिल आनी। स्वामी से पूंछौ इक बानी ॥
गुरु चेला का कैसा लेखा। सो स्वामी मोहिं कहौ विवेका ॥

तुलसीदास उवाच

॥ चौपाई ॥

रेतीदास सुनो तुम भाई। याकी विधी कहूँ समझाई ॥
नहिं कोइ गुरू नहीं कोइ चेला। बोले सब में एक अकेला ॥

जो कोइ गुरु चेला कर जाना। सोइ २ पड़े नर्ककी खांना ॥
एक बोल सब माहिं बिराजा। गुरुचेलादोइतबिधिसाजा ॥
चेला होय नीक विधि भाई। गुरू होय चौरासी जाई ॥

दोहा

तुलसी मैं तू जो तजै रहे दीन मत सोय।
गुरू नवे जो शिष्य को साध कहावे सोय ॥
तुलसी कह रेती सुनो कहुं कबीर मुख बात।
कहि कबीर सब में बसूं को गुरु चेला साथ ॥

॥ चौपाई ॥

कहकबीर सबमाहिंविराजूं। सबमें कियाहमी सब साजू ॥
कह कबीर हम सब के माहीं। सब हम किया सभी सबठांई ॥
सबके माहीं बासा कीन्हा। सब में हमी हमी को चीन्हा ॥
जो महंत चेला करै भाई। सब में रहा कबीर समाई ॥
यह विधि बिधी कबीर पुकारा। काको चेला करै लबारा ॥
घट २ माहिं कबीर समाना। काको चेला करै हैवाना ॥
कह कबीर मोहिं सबमेंबूझा। चेला करौ आंखनहि सूझा ॥
है कबीर सब काया मांही। ताको तुम चेला ठहराई ॥
कह कबीर सब ठाम ठिकाना। सोइ कबीर काफूंको काना ॥
तुम्हरी मत कहो कौन हिराई। कह कबीर हम ठावैं ठाईं ॥
कहते तुमको लाज न आई। कहौ कबीर फिर गुरू कहाई ॥
कहौ कबीर सबमाहिं समाना। गुरकबीर की करौ बषाना ॥

तुम कबीर को स्वामी गाओ । पुनि वाको चेला ठहराओ ॥
कस २ ज्ञान तुम्हारा भाई । भूल न अपनी देखो जाई ॥
अगम निगम का ज्ञान सुनाओ । अपने घरकी भूल न पाओ ॥
कहकबीर मुख गाना गाओ । शब्द न खोजो पोल चलाओ ॥
नहिं कोइ तुमको पकड़न हारा । सोधन शब्दसमझकीलारा
तासे सोल पोल तुम लाई । पकड़े तौ कछु ज्वाब न आई ॥
और अनेक बात असनासी । कौन २ कहुं तुम्हरी फांसी ॥
अपना मता ऊँचकर मानो । ऊँचे का कुछ मर्म न जानो ॥
कहिकबीर मुखसांची बानी । तुम अबूझ कुछपरख नजानी
कहि कबीर कथनी को गाओ । बूझे ज्वाब न ताको पाओ ॥
एकज्वाब हम पूछैं भाई । कहु चौरासी कँवल केहि ठांई ॥
याकी भेद राह बतलाई । कौन ठांव वे कँवल कहाई ॥
नौलख कँवल कबीर बषाना । कहो कहँ उनका कौनठिकाना
सहस कँवलदल सोपुनि भाषा । अष्ट कँवल जोभेदकहौताका
चार कँवल दल देव बताई । द्वै दल कँवल कौन से ठांई ॥
यह सब कँवल जोगसेन्यारा । जोगी न जाने भेद बिचारा ॥
कँवल चक्रषट जोगी गाई । उन कँवलन से न्यारे भाई ॥
याकी बिधि २ कहो बुझाई । कहिये कबीर पंथ तेहि नाई ॥
जो कबीर मुख भाष बषानो । ताको तुम से पूछौं बानी ॥

तुलसीदास उवाच

॥ चौपाई ॥

अब सुनभेद कहूँ समझाई । रेतीदास सुन चित्त लगाई ॥

षष्ठ कँवल जोगी पुनि गाई। याकौ तुम को भेद बताई॥
रहे चारदल गुद के माहीं। और दूजे की बिधी बताई॥
छः दल कँवल नाभिके नीचे। अष्टदल कँवल पोहमीके नीचे॥
पँखड़ी बारह हिरदे माहीं। सोला पँखड़ी कंठ कहाई॥
उदित मुदित द्व दीप कहावै। तामें सहस कँवल को पावै॥
कँवल चक्रपट खुलके कहिया। संत कँवल भिनन्यारे रहिया
यहकँवला षटचक्र से न्यारा। उनकौ जानै संत बिचारा॥
षोड़स द्वार काया के माहीं। तुम जानो दल द्वार जनाई॥
छः त्रिकुटी काया के माहीं। तुम जानों पुनि एक बनाई॥
नाल सताइस काया माहीं। अठाइस पुनि बंककहाई॥
बाइस सुन्न संत बतलावा। यह कबीर मुख अपने गावा॥
मानसरोवर सुखमन नारी। तिरबेनी ब्रहमंड के पारी॥
इतना भेद कहा हम गाई। भिन्न२ यह कहूं बुझाई॥
यह हम कहा भाषि सोइ देखा। यहकबीर ने भाषा लेखा॥
जों कोइ याको भेद बषाने। पंथ कबीर जाहि को जाने॥
कहि कबीर की भाषि सुनावे। बे बूझे औरन को गावे॥
अपने शब्द ख्यालकी गावै। और की करनी हाथ न आवै॥
और की करनी बूझ बुझावे। सो अपना कारज नहिं पावे॥
गुरु चेला का बूझौ लेखा। सो गुरका मैं कहूँ बिबेका॥
जक्त गुरू नहिं संत पुकारा। सतगुरु भेद जगत से न्यारा॥
जो कोइ चढ़ै गगन को धावै। सो सतगुरु के सरने आवै॥
सतगुरु सत्तपुर्ष है स्वामी। सो चौथा पद संत बषानी॥

॥ सोरठा ॥

तुलसी कहै बुझाय, रेती यह बिधि गुरु लखो ।
चखौ अगम पद सार, भाषि आदि अंतर मई ॥

॥ चौपाई ॥

सुन रेती मन संसै आनी । तुमने औरे और बखानी ॥
जस २ बचन बिधी समझावा । अस आगे कोउ संत न गावा ॥
औरो संत गये यहि राही । सो संतन की साष सुनाई ॥
अस सुधारस जिनकी बानी । कहिये नाम भेद गुरु छानी ॥
यह बिधि फूलदास पुनि बोला । पूछे बिधी गुरू और चेला ॥
स्वामी याकी साष सुनाई । अगम पंथ कोउ संतन पाई ॥
भिन २ न्यारा नाम बताई । जिनकी साषी शब्द सुनाई ॥
अनुभव भिन २ सब कर न्यारा । भाषौ एक २ बिस्तारा ॥
संत संत की न्यारी बानी । एक एक की कहौ निशानी ॥

तुलसीदास उबाच

॥ चौपाई ॥

कह तुलसी तुम सुनियौ काना । संत शब्द का करूँ बषाना ॥
दादू मीराँ नाभा भाई । नानक दरिया सूर सुनाई ॥
और कबीर पुनि भाषा भाई । और अनेक संत बिधि गाई ॥
जो जो संत अगमपुर धाये । जिन २ ने सब शब्द सुनाये ॥
संत चरन रज तुलसी दासा । कुछ २ भाषा अगम बिलासा ॥
तुलसी संत चरन की लारा । मेरी बुधि नहिं उन अनुसारा ॥

संत चरन महिमां पुनि भाषूं। उनके चरन सीस पर राखूं॥

॥ दोहा ॥

संत शब्द बिधि बिधि कहूँ सुनियौ फूलादास ।
जो जो शब्द उन भाषिया कहूँ चरन हूँ दास॥

शब्द घटरामायन

तुलसी तुल जाई गुरुपद कंज लखाई ॥ टेक ॥
मैं तौ गरीब कछू गुन नाहीं । मोको कहत गुसाईं ॥
जो कुछ कीन कीन करुनामय। मैं उनकी सरनाई॥ १ ॥
मैं अति हीन दीन दारुनगत । घट रामायन बनाई ॥
रावन राम की जुद्ध लड़ाई । सो नहिं कीन बनाई ॥२॥
यह तत सार तती निज जानत। जो यह लखै लख पाई ॥
काल कथा परवार मयाई । यह गुन ग्रंथन गाई ॥ ३ ॥
तामें सार पार पद न्यारा । सो कोई संत जनाई ॥
पंडित भेष भक्त और ज्ञानी । भेद कोई नहिं पाई ॥४॥
अब धरतंत कहूँ याही को । भरत चत्र गुन भाई ॥
दसरथ सीता और कौसिल्या। सिया लछमन्न कहाई ॥५॥
कागभसुंड गरूड़ सबै सब । मंथा और केकाई ॥
रघुपति रंगसंग परवारा । यह बिधि जगहि सुनाई ॥६॥
और सुनौ रावन रघुराई । सब परवार बताई ॥
कुंभकरन्न भभीषन भाई । इन्द्रजीत सुतराई ॥ ७ ॥
रानीराय मंदोदरि सोई । सब परवार सुनाई ॥

यह घट माहिं घटाघटही में । रामायन्न बनाई ॥ ८ ॥
रावन ब्रह्म बसै त्रिकुटी में । लंका त्रिकुट बनाई ॥
कुंभ तनै करता मनही को । कुंभकरन्न कहाई ॥ ९ ॥
भैभौ खान भभीषन भाई । सौ भौ माहिं भ्रमाई ॥
इन्द्रजीत जीतै मनही को । सो इंद्रजीत कहाई ॥१०॥
रावन ब्रह्म बसैं मनदौरी । ताकौ मदोदरी बनाई ॥
मनकी दौड़ कभे दूर बहावे । त्रिकुटी ब्रह्म कहाई ॥११॥
दस इन्द्री रत दसरत कहिये । राम रमा मन जाई ॥
सत्त की सीता असत्त सिया को । कुमति कौसिल्या बसाई १२
मनथिर सुरत करै थिर कोई । सो मनमें मंथ्रा कहाई ॥
वहँ की बात कही कौन सुनाई । कर मन थिर केकाई ॥१३॥
लै छै रस मनही को भाई । लछमन वीर बड़ाई ॥
गोमें रूढ़ गरूड़ गिनाई । भैल भसुंड भुलाई ॥ १४ ॥
भैरत भर्म भरत है सोई । चाह त्रिगुन्न गिराई ॥
ताको नाम चतुरगुन कहिये । यह सब भेद बताई ॥१५॥
यह नौ द्वार काया के सांई । सो हनुमानहिं सौंई ॥
यह तौ चिन्ह भिन्न बिन देखे । जोग करै सो जनाई ॥१
काया सोध कसै इंद्री को । त्रिकुटी ध्यान लगाई ॥
स्वांसा धाय बंक कुल खोले । सहस कँवल दल पाई ॥१७
जो कोइ जोग जुगत कर लाई । जेहि घट ब्रह्म दिखाई ॥
जोगी का जोग इष्ट जगही का । यह गति यौं बिधि गाई ॥१८

दूजा जोग ज्ञान गतगाई । आतम तत्त लखाई ॥
मुद्रा पांच अवस्था चारी । ज्ञान तीन गत गाई ॥ १९ ॥
चाचरी भूचरी और अगोचरी । खेचरी खेह लगाई ॥
उनमुन उभै अकाश के ठांई । ज्ञान विधी बतलाई ॥२०॥
रेचक पूरक कुंभक कहिये । यह विधि ज्ञान गिनाई ॥
और अवस्था अर्थ बताई । ज्ञानी किनहूँ न पाई ॥२१॥
जाग्रत सुपन सुखोपति कहिये। तुरियातीत कहाई ॥
तुरियातीत बसै वहि पारा। जो यह करै नित पाई ॥२२॥
चारों बानी का भेद बताई । शास्तर संध लखाई ॥
परा पश्यंती मधमा सोई। बैखरी बर्ण बताई ॥२३॥
यह सब जोग ज्ञान गति गाई। ज्ञानी यही बताई ॥
इनके परे भेद है न्यारा । सो कोइ संत जनाई ॥२४॥
और सुनो जो अगाध अघाई । संतन की गति गाई ॥
जाको भेद बेद नहिं जाने। जोगी किनहूँ न पाई ॥२५॥
परम हंस वैरागी गुसाईं । जगत की कौन चलाई ॥
यह कहुं देखी कहुँ न कहाई । काहू प्रतीत न आई ॥२६॥
तुलसी तोड़ फोड़ असमाना । सूरत सार मिलाई ॥
सरकी चांप चली धी धाई । धनुआँ धनक चढ़ाई ॥२७॥
तीन लोक तिल खेई पारा । चौथे जाय समाई ॥
वे सांहब सत नाम अपारा। तिन मोहिं अंग लगाई ॥२८॥
याके पार परे गति न्यारी। सो कोई संत बिचारी ॥
जाको नाम अनाम अमाई । केहि बिधि क हूं बुझाई ॥२९॥

ताके रंग रूप नहिं रेखा । नाम अनाम कहाई ॥
तुलसी तुच्छ कुच्छ नहिं जाने । ताघर जाय समाई ॥३०॥
सब संतन के चरन सीस धर । आदि अजर घर पाई ॥
तीन लोक उपजै और विनसै । चौथे के पार बसाई ॥३१॥

॥ सोरठा ॥

यहि विधि रघुपति रंग, रावन संग प्रसंग भयो ।
सुरत चढ़ी चित चंग, ज्यों पतंग डोरी गह्यो ॥

शब्द दादू जी

दादू देखा अदीदा । सब कोइ कहत सुनीदा ॥टेक॥
हवा हिरस अंदर घस कीदा । तब यह दिल हुआ सीधा ।
अनहद नाद गगन गढ़ गरजा । तब रस पाया अमीदा ॥१॥
सुखमन सुन्न सुरत महलों नम । आया अजर अक़ीदा ॥
अष्ट कँवल दृग में दल दर्शन । पाया खुद्द खुदीदा ॥२॥
जैसे दूध दूध दधि माखन । बिन मथे भेद न घीदा ॥
ऐसे तत्त मत्त सत साधन । तब टुक नशा पिया पीदा ॥३॥
नहिं यह जोग ज्ञान मुद्रा तंत । यह गति और पदीदा ॥
जो कोई चीन्ह लीन यह मारग । कारज होगया जीदा ॥४॥
मुर्शद सत्त गगन गुरु लखिया । तन मन कीन उसीदा ॥
आशिक़ यार अधर लख पाया । होगया दीदम दीदा ॥५॥

शब्द नानक साहब

उघरा वह द्वारा । वाह गुरू पर वारा ॥ टेक ॥

चढ़ गइ चंग पतंग संग ज्यों। चंद चकोर निहारा ॥
सूरत शोर ज़ोर ज्यों खोलत। कुंजी कुलफ़ किवारा ॥१॥
सूरत धाय धसी ज्यौं धारा। पैठ निकस गई पारा ॥
आठ अटा की अटारी मंझारा। देखा पुर्ष निनारा ॥२॥
निराकार आकार न जोती। नहिं वहँ वेद विचारा ॥
ओंकार करता नहिं कोई। नहिं वहँ काल पसारा ॥३॥
वह साहब सब संत पुकारा। और पखंड पसारा ॥
सतगुरु चीन्ह दीन्ह यह मारग। नानक नज़र निहारा ४॥

शब्द दरिया साहब

दरिया दरबारा खुलगया अज़र किवारा ॥ टेक ॥
चमकी बीज चली ज्यौं धारा। ज्यों बिजली बिच तारा ॥
खुल गया चंद बंद बदरीका। घोर मिटा अँधियारा ॥१॥
लै लगी जाय लगन के लारा। चांदनी चौक निहारा ॥
सूरत सैल करै नभ ऊपर। बंक नाल पट फारा ॥२॥
चढ़गई चाप चली ज्यों धारा। ज्यों मकरी मुख तारा ॥
मैं मिली जाय पाय पिया प्यारा। ज्यों सलिता जलधारा३॥
देखा रूप अरूप अलेखा। लेखा वार न पारा ॥
दरिया दिल दरवेश भये तब। उतरे भौजल पारा ॥४॥

शब्द मीरा

मीरां मन मानी। सुरत सैल असमानी ॥टेक॥
जब २ सुरत लगे वा घर की। पल २ नैनन पानी ॥

ज्यों हिय पीर तीर सम सालत। कसक २ करोंनो ॥ १ ॥
रात दिवस मोहिं नींद न आवै। भावत अन्न न पानी ॥
ऐसी पीर विरह तन भीतर। जागत रैन विहानी ॥२॥
ऐसा वैद मिलै कोइ भेदी। देश विदेश पिछानी ॥
तासे पीर कहूं तन केरी। फिर नहिं भरमौं खानी ॥३॥
खोजत फिरूं भेद वहि घर को। कोई न करत वखानो ॥
रैदास संत मिले मोहिं सतगुरु। दोनी सुरत सहदानी ॥४॥
मैं मिलीजाय पाय पिया अपना। तव मोरी पीर वुझानी ॥
मीरां खाक खलक सिरडारै। मैं अपना घर जानी ॥५॥

शब्द सूरदास।

मुरली धुन गाजा। सूर सुरत सर साजा ॥टेक॥
निरखत कँवल नैन नभ ऊपर। शब्द अनाहद वाजा ॥
सुन धुन मैल मुकर मन मांजा। पाया अमीरस झाझा॥१॥
सूरत संध सोध संत काजा। लख लख शब्द समाजा ॥
घट २ कुंज पुंज जहँ छाजा। पिंड ब्रहमंड विराजा ॥२॥
फोड़ अकाश अलल पक्ष भाजा। उलट के आप समाजा॥
ऐसे सुरत निरख निह अक्षर। कोटि कृष्ण तहँ लाजा ॥३॥
सूरदास सार लख पाया। लख लख अलख अकाया ॥
सतगुरु गगन गली घर पाजा। सिंध में वुंद समाजा॥४॥

शब्द नाभाजी

नाभा नभ खेला। कंवल केल सर सैला ॥ टेक॥

दरपन नैन सैन मन मांजा। लाजा अलख अकेला ॥
पल पर दल दल ऊपर दामिन। जोत में होत उजेला ॥१॥
अंडापार सार लख सूरत। सुन्नी सुन्न सुहेला ॥
चढ़ गई धाय जाय गढ़ ऊपर। शब्द सुरत भया मेला ॥२॥
यह सब खेल अपेल अमेला। सिंध नीर नद मेला ॥
जल जलधार सार पद जैसे। नहीं गुरू नहिं चेला ॥३॥
नाभा नैन ऐन अंदर के। खुल गये निरख निहाला ॥
संत उच्छिष्ट वार मन झेला। दुर्लभ दीन दुहेला ॥४॥

शब्द कबीर साहब

कबीर पुकारा। मैं तौ जगत से न्यारा ॥ टेक ॥
आदि पुर्ष अविगत अविनासी। दीप लोक पद पारा ॥
सूरत सेर हेर हिय द्वारा। शब्द न सिंध अकारा ॥ १ ॥
काल न जाल खाल नहिं बानी। सोघर अघर हमारा ॥
अंत न आदि साध कोई जाने। सतगुरु पदम निहारा ॥२॥
नहिं तहँ आदि निरंजन जोती। सत्त पुर्ष दरबारा ॥
ब्रह्मा विश्नु बेद बिधि नाहीं। नहीं आदि ओङ्कारा ॥३॥
यह सच यार प्यार लख पूरा। रूप न रेख ज़हूरा ॥
कहैं कबीर संत वहि द्वारा। चकवा चौक हुँकारा ॥४॥

॥ दोहा ॥

फूलदास तुलसी कहै, संत शब्द की रीति।
जो २ गये अगाध को, सोइ २ संत समीर ॥

॥ छन्द ॥

तुलसी गति गाई शब्द सुनाई ।
पंथ अगम श्रुत सार भई ॥ १ ॥
नानक और दादू दरिया साधू ।
मीरां सूर कबीर कही ॥ २ ॥
नाभा मभ जानी भाषि बषानी ।
सुरत समानी पार गई ॥ ३ ॥
सब की बिधि न्यारी एक बिचारी ।
सब संतन इक राह लई ॥ ४ ॥
सब चढ़े इक धारा पहुंचे पारा ।
लखी गगन गति गवन गई ॥ ५ ॥
कोई करि है संका मह मत रंका ।
तुलसी डंका दीन कही ॥ ६ ॥
यह सत मत भाषा देखा अंखा ।
साख शब्द मे गाय कही ॥ ७ ॥
यह करी बषाना भेष न जाना ।
शब्द निशाना सुरत लई ॥ ८ ॥
कागज़ नहिं स्याही ग्रंथ न पाई ।
गाय गाय सब जन्म गई ॥ ९ ॥
कोइ संत लखइ है न्यारी कहि है ।
कथन बदन में नाहिं नहीं ॥ १० ॥

जो पोथी पढ़ि है ज्ञान से झड़ि है ।
नर्क पड़े पन भक्ति नहीं ॥ ११ ॥
बिन भक्ति न पैहै जन्म गँवै है ।
संत सरन बिन राह नहीं ॥ १२ ॥
जिन जिन यह मानी सतकर जानी ।
भक्ति संत सब भाखि कही ॥ १३ ॥
संतन को जाना शब्द पिछाना ।
सुरत समानी आदि लई ॥ १४ ॥
तुलसी तत सारा अगम निहारा ।
गुरू पिया पद पार लई ॥ १५ ॥
महुँ पुनि पाई संत सुनाई ।
संत शब्द रस अगम कही ॥ १६ ॥
सब संत पुकारा महुँ पुनि लारा ।
सारा चारा पार गई ॥ १७ ॥
चौथा पद गाई संत सुनाई ।
सुरत सैल अज आदि लई ॥ १८ ॥
संतन कर भेदा जाने न खेदा ।
खेद करम की दूर भई ॥ १९ ॥
संतन के सरना दुख सुख हरना ।
बरना तुलसी तोल लई ॥ २० ॥
संतन मुख भाषी अगम की आँखी ।
उन से ताकी तरक कही ॥ २१ ॥

कोइ बूझ न संधा पड़ा जम फंदा।
अंधा जग को बूझ नहीं ॥ २२ ॥
संतन बिधि गाई शब्द सुनाई।
भई बानी सब गाय कही ॥ २३ ॥
शब्द जो गावै आंख न आवै।
बिन सतसंगत भर्म सही ॥ २४ ॥
छूटै सब टेका बूझै एका।
यह संतन ने सार दई ॥ २५ ॥
तुलसी दोहराई बूझ न पाई।
बिन बूझे सब खान भई ॥ २६ ॥
दीन निहारा संत पुकारा।
शब्द बिचारा पार भई ॥ २७ ॥

॥ सोरठा ॥

तुलसी शब्द बिचार, फूलदास यह बिधि सुनो।
शब्द करै निरधार, सार पार पद लख पढ़े ॥

॥ दोहा ॥

शब्द शब्द बहुभेद यह अभेद गति भाषिया।
तुलसी ताकी धार शब्द निरख रस जिन पिया ॥

॥ चौपाई ॥

तुलसी शब्द संत जो भाषा। जिन २ संत जो गये अगाधा ॥
अपने अपने शब्द बनाये। अपनी अपनी साष सुनाये ॥

जो जो गये अगम के द्वारा। पंथ अगम के उतरे पारा॥
पाय जाय विधि सगरी भाषी। जो२ देखी अपनी आंखी॥
अपनी देखी कही बखानी। आदि अंत जो जिन्ने जानी॥
कहीसंत और कहीकबीरा। सब मिलकही एक विधि हीरा॥
पहुंचे पहुंचे एक ठिकाना। बिन पहुंचे का और बखाना॥
जो जो संत जो भये सनाथा। पहुंचे पार सार रस माता॥
बरन न जाय संत गतिन्यारी। मोरीमति कुछनाहिं बिचारी
संतन की गति कस २ गाई। दादू की कहूं साष बताई॥
दादू शब्द संत विधि गाई। शब्द संत उन भाषि सुनाई॥
उनकी निसा साप दरसाऊँ। तुलसी उनकी अगम सुनाऊँ॥

॥ शब्द ॥

दादू जाने न कोई। संतन की गति गोई॥ टेक॥
अब गति अंत अंत अंतरपट। अगत अगाध अघोई॥
सुन्नी सुन्न सुन्न के पारा। अगुन सगुन नहिं दोई॥१॥
अंडन पिंड खंड ब्रहमंडा। सूरत संध समोई॥
निराकार आकार नजोती। पूरन ब्रह्म न होई॥२॥
उनको पारसार सोई पैहै। मन तन गत पत खोई॥
दादू दीन लीन चरनन चित। मैं उनकी सरनाई॥३॥

॥ सोरठा ॥

तुलसी कहै बुझाय, फूलदास सुन संत गत।
दादू साप बताय, निसा बूझ को यह कहा॥

॥ चौपाई ॥

फूलदास सुनियो चितलाई। यह दादू की साष बताई ॥
जो संतन ने देखा माहीं। रूप रेख बिन रहै अकाई ॥
तन भीतर जो लखा अलेखा। रूप रेख ना रहै अदेखा ॥
जाके रूप रेख कुछ नाहीं। सो वह देखा घट के माहीं ॥
पुनि दादू की साष बताऊं। शब्द एक जो गाय सुनाऊं ॥
जो जो संतन दिलमें देखा। जिन २ भाषा अगम अलेषा ॥

॥ शब्द ॥

दादू दिल बिच देखा। रंग रूप नहिं रेखा ॥ टेक ॥
हद हद बेद कतेब बषाने। मैं कहा बेहद लेखा ॥
मुल्लां शेख सइयद और पंडित। यह मुये अपनी टेका ॥१॥
राम रहीम करीमा केशी। हरि हज़रत नहिं एका ॥
वह साहब सबही से न्यारा। कोइ कोइ संतन पेखा ॥२॥
दादू दीन लीन है पाया। क्या कहुँ अगम अलेखा ॥
जिन २ जाना तिन पहिचाना। मिटगया मन का धोखा ॥३॥

॥ सोरठा ॥

जो देखा घटमाहिं, जिन २ संतन सब कही।
रूपरेख नहिं ताहि, सो अदृष्ट अंदर लखा ॥

॥ चौपाई ॥

सब संतन ने पाया लेखा। जोई अगम पंथ जिन देखा ॥
जोइ जोइ संतन भाषि सुनाई। सो सब देखा अपने माहीं ॥

बिन देखे नहिं संत पुकारा। देखे बिन कहें झूंठ लबारा॥
फूलदास बूझी मन माहीं। संत कही जी कबीर गुसांई॥
संत कबीर से अंतर नाहीं। भिन्न कहै सो नरकै जाई॥
जो जो संत गये निजधामा। सो २ कबीर ने कहा मुक़ामा॥
चढ़े संत जो गगन ठिकाना। उनकी गति काहू नहिं जाना॥
संतमते को द्वै कर जाने। ताते पड़ै नर्क की खाने॥
संतकी निंद्या करे बनाई। आदि अंत भौ भटका खाई॥
संतन की गति भेष न जाना। संत बिना कहुँ नाहिं ठिकाना॥
भेष भुलाना भौके माहीं। रहै काल बस जमकी छाहीं॥
मैं कुछ कहीं न निंद्या भाई। जस जस देखा तस २ गाई॥
मुख अपने निंद्या नहिं गाऊं। और संत की साख सुनाऊं॥
और और और पुनि गाऊं। तिन २ की मैं साख बताऊं॥
तुलसी संत भेष कर चेरा। यह भी सिंध अनीत अनेरा॥
तुलसी संत चरन की धूरी। दादू शब्द बताऊँ मूरी॥
उनकी साषी शब्द बताऊँ। पुनि दादू की साख सुनाऊं॥
भेष भूल सब जगके माहीं। ता कारन यह शब्द सुनाई॥
भेष भुलान खान सुख कारन। तासे दादू शब्द पुकारन॥

॥ शब्द ॥

दादू भेष भुलाना। जग सँग कीन पयाना॥ टेक॥
षट दर्शन पंडित और ज्ञानी। पढ़ि पढ़ि मुये पुराना॥
परमहंस जोगी सन्यासी। बेद करत परमाना॥ १॥

आतम ब्रह्म कहैं अपने को । सब में हमी समाना ॥
तासे भौजल पार न पावैं । अहं ब्रह्म मन माना ॥२॥
मन बिहंग की खबर न जानै । तन निहंग हैवाना ॥
जग ज्यास मोह मद माते । तासों वह लपटाना ॥३॥
वह साहब समरथ है दाता । जिनको नहिं पहिचाना ॥
जाको भेद बेद नहिं पावै । अगम पंथ नहिं जाना ॥४॥

॥ सोरठा ॥

तुलसी भेष भुलान, जान मान भौ में लसा ।
फँसा रस सार न जान, जान कान बूझी नहीं ॥

॥ चौपाई ॥

भेष भुलान सबै जग माहीं । आदि अंत की खबर न पाई ॥
जो कोई भेद कहै समझाई । भेष कान पर एक न लाई ॥
कपड़े रँगे भेष भये साधू । बूझै न बस्तु को आदि अनादू ॥
दया जान कोइ भेद बतावै । तौ वह नगर रहन नहिं पावै ॥
ग्रही भेष सब मारि निकारै । कहैं हमरा रोज़गार बिगारै ॥
परमारथ नहिं सूझ गंवारा । पढ़ पढ़ भूले भौजल धारा ॥
यासे संत मता नहिं पावै । जाते जिव भौमें रह जावै ॥
कर्म बँधा जीव भरमें खाना । बिना संत नहिं लगे ठिकाना ॥
फूलदास सुन रेतीदासा । संत मिलैं तौ होय सुपासा ॥
और जो सुनो जगत सब बूड़ा । भेष टेक में बूड़ न थोड़ा ॥
संत मता कहुं देख न पावै । भेष मता सब जगत बुड़ावै ॥
ऐसी पोल पोल कह कीजै । उपजै बिनसै नित २ छीजै ॥

ऐसी कहाँ कहाँ की कहिये। तासो गुप्त मौन ह्वै रहिये॥
को जग अजगुत सिर पर लेई। भूल पड़ी सब भेषन जेई॥
एक समय इक अचरज भइया। इक फ़कीर मक्के से अइया॥
नाम अली तेहि ज़ात फ़कीरा। रात रहे पुनि हमरे तीरा॥
अल्ला हक़ हक़ करै निमाज़ा। कीन्हा पहर माहि मनलाजा॥
फ़ारिग भये तब खाना खाया। पुनिआँसनकूटीपरलाया॥
हमसे खुदा खुदा कर बोले। खुदा नबी बिन कछू न तोले॥
पूंछा अला नबी केहि ठांवा। उनपुनि लै असमान बतावा॥
हम पुनि कहा तुम्हारे पासा। मुर्शद मिले कहे हक़ आसा॥
हमरी बानी कान न लावा। तब दादू का शब्द सुनावा॥
अली मियां सुन हक्क इमाना। मुर्शद दादू किया बखाना॥
अंदर अली भली कर मानें। अल्लाअलिफ़ज़बान बखानें॥

अली उवाच

भूल रसूल रमक दरसावै। पैग़म्बर परमान बतावै॥
पैग़म्बर कहि भाषि सुनावै। मसजिद हक़ मक्का कोगावै॥
कितनी कही इमान न लावा। ग़ज़लएकउनभाषिसुनावा॥
खुदा खुदा सब खलक़ बपानै। खुदा बिनाकहिएकनमानै॥

ग़ज़ल

बन्दा बेहोश याद हरदम लावै।
तेरे बिन खुदी खूब कैसे भावै॥

कीन्हा तैं आफ़ताब खलक़ आफ़री ।
कलमा बिन पढ़न कहै कुफ़र काफ़री ॥
तुलसी यह अली ग़ज़ल गाय सुनाई ।
दादू दरवेश देस हमहूँ गाई ॥

तुलसीदास उवाच

ग़ज़ल

दिलके दरबेश इक दादू फ़क़ीरा ।
भाष कही साख शब्द मुर्शद पीरा ॥
सुनिये मियां अली अलिफ़ बानी उनकी ।
रोज़ा नीमाज़ कही अंदर धुन की ।
कलमा पढ़ खुदा खोज अपने माहीं ।
देखो तन्न वदन बीच भिश्त बनाई ।
तुलसी की कहन मियां दिल् में लाओ ॥
वदन बीच खोज यार अंदर पाओ ॥

॥ सोरठा ॥

अली अजब दीदार, पार परख दादू कही ।
दिल दुरबीन निहार, सो बिचार कह्यो शब्द में ॥

॥ दोहा ॥

फ़हम फ़क़ीरी अरश की मुकर देख दुरबीन ।
चीन्ह चलो उस राह को रूह रहम लौ लीन ॥

॥ सोरठा ॥

दादू दूर दराब आफ़ताब पट अबर नहिं ।
अल्ला अलिफ़ मकान अबर फाड़ पट राह लख ॥
दिल बिच अलिफ़ दिदार श्याम शहर पर रूह लखो ।
चखो अर्श रस सार यह विचार दादू कही ॥

॥ चौपाई ॥

दरिआवी दादू बतलाई । अलीमियां सुन साष सुनाई ॥
जो शराब दादू भर पीना । सो सुनकर के करो यक़ीना ॥
आब अलिफ़ जिनकी चलिआई । सो फ़क़ीर दरबेश कहाई ॥
उनकुरानकामज़हबसुनावा । भिश्तखोजखुदखुदालखावा ॥
अबदादू का शब्द सुनाऊँ । परम पिया रस लखन लखाऊँ ॥

शब्द

दादू दूर दराबी । पियारस पियत शराबी ॥ टेक ॥
पीयत प्याला मन मतवाला । भोर भया उजियाला ॥
खूबी खलक़ खुदी खोय ख्वाबी । अंदर खिलगइ स्वाबी १॥
मक्का भिश्त हज्ज को देखा । अबरा आब अरु ताबी ।
अल्ला आदि नबी लख छूटा । रोज़ा निमाज़ अज़ाबी ॥२॥
मलकूत नकसूत जबरूत जाके । लाहूत हाहूत पागी ॥
लै लगी लामुकाम रबही से । जगत जहान ख़राबी ॥३॥
दादू दृग दीदार हियेके । चून बेचून बेज्वाबी ॥
चौदह तबक़ अहतियाज तवज्जा । आया अर्श अराबी ॥४॥

॥ सोरठा ॥

अलीमियां सुन साष, दिल फ़हम बेदिल हुआ।
मुये रूह से बाद, साथ स्वाल काफ़र कहा॥

॥ चौपाई ॥

अलीमियां सुन हमरी बानी। गुन २ मन में बहुत रिसानी॥
कहि कुरान अल्ला मुखबानी। हिन्दू को काफ़र कर जानी॥
स्वालभाषिपुनिआसनलीन्हा।उठकरचलेफ़िकरमनकीन्हा
हाथ पकड़ कर गुसा उतारा। बैठे ज़मी गुसा को मारा॥
हमपर मेहर करो तुम साईं। अपने दिल में बूझौ भाई॥
तुम खुदाय का खोज न पावा। मिट्टीमसूजिदकोसिरनावा॥
खुद मसूजिद जो आपबनाई। ता मसूजिदमेंखोजलगाई॥
कहो खुदा तुम सबके माहीं। ऐसे कुरान किताब सुनाई॥
अपने मुख से सब में भाखो। मिट्टी मसूजिद कोफिरताको॥
समझौ अपने दिलके माहीं। खुदा खोज खोजौदिलमाहीं॥
पांच यार महमद जोकहिये। रूआतिशजलपवनमें रहिये॥
ताको खोज आपने माहीं। बिन मुर्शद जो खोज न पाई॥
सबमें खुदा कुरान बतावै। करौ हलाल सो दर्द न आवै॥
अपना कुफ़र चीन्ह नहिं भाई। हिंदू को काफ़र बतलाई॥
सुनकर अलीमियां कुछ बूझा। यहतोज्वाब खूबकर सूझा॥
खुशी भये और गुसा उतारा। है खुदाय सब में की न्यारा॥
फिरहम से वे पूंछनलागा। कहु खुदाय सब माहिंबिराजा॥
अली कहै कुछ देख न आवै। खोजै खुदा खोज वहि पावै॥

॥ सोरठा ॥

तुलसी कह मियां अली सुन खुदा भिश्त करद्वार ॥
दो अनार लटकत रहैं कुंजी मुर्शद हाथ ॥
अली मियां अचरज भया कहा भेद सब सांच ।
मियां भेद बतलाइये कह तुलसी यह बात ॥

॥ चौपाई ॥

कह तुलसी हम भेद बतावा । भिश्त के द्वारअनारलखावा ।
यहिअनारपर सुरतलगाओ ।खुलगयाद्वार भिश्ततबपाओ
तबतुलसीकेकदमउनलीन्हा। अलीमियांआधीनीकीन्हा ॥
हुआ अधीन राह बतलाई । तब उठ मियां राह को जाई ॥
फूलदास बूझौ तुम मूला । हिन्दू तुरक भेद दोउ भूला ॥
भूला भेप काल भरमाया । काल अपरबल सबको खाया ॥
संतमतेकी राह न जांनै । काल चाल विधि कालहि मानै ॥
जम फांसी में भेष भुलाना । केहिविधिपावैजीवठिकाना ॥
यह जग माहिं फांस जमडारा । संत बिना नहिं होय उबारा ॥
बारा मता काल लै कीना । आदि अंत फांसी जीव दीन्हा ॥
सतयुग त्रेता द्वापर माहीं । और कलजुग की कहा बताई ॥
अनेक जुगन जुग फांस फंसानी । भेदनचीन्हा पुनिरखानी ॥
जब निरगुन वैराट पसारा । सत्तनाम से मांग लबारा ॥
बारा मता मोहिं को दीजै । मोरा मता साधअस कीजै ॥
बारामत की राह चलाऊँ । जासे जीव जगत उरझाऊँ ॥

ऐसा निरगुन मांगा भाई । काल जाल मत उन्हीं चलाई ॥
बारामाहिं भेष सब भूला । सो जग जाल सहे जम सूला ॥
निरगुन काल जग कीन्हें भेषा । चारो जुग जग बांधी टेका ॥
भेष किया जग काल कराला । संत बिना नहिं छूटे जाला ॥
काल भेष जग भये अनेका । जे जे मत जग माहीं देखा ॥
तासे तुलसी पंथ न कीना । जगत भेष भया काल अधीना ॥
जो जो कहे जीव निरवारा । सो सो फांसी सब ने डारा ॥
बिन आंखी सूझा नहिं भाई । बिना संत कहो कौन लखाई ॥
चीन्हे संत तौ होय उबारा । नाहीं तौ बूड़े भौ जल धारा ॥
जो कोई बारा मत को चीन्हा । काल रहै पुनि तास अधीना ॥
बहिपर काल जाल नहिं डारा । जम है दीन ताहि की लारा ॥
संत मिलैं पुनि मारग पावै । ऐसे जीव लोक को पावे ॥
यह जग भेष काल बस होई । इनकी बात न मानौ कोई ॥
जो कोई काल भेष पहिचाने । गत मत भेद संत कर जानै ॥
दस औतार निरंजन जाना । ब्रह्मा बिश्नु काल उतपाना ॥
बेद कितेब और फंद पसारा । यह सब काल जाल मत डारा ॥
याको जब चीन्हे कोइ प्रानी । मत बारा की राह पिछानी ॥
पुनि बारा से भये अनेका । कहं लग कहूँ पार नहिं जेका ॥

॥ दोहा ॥

फूलदास बिनती करै स्वामी कहौ बुझाय ।
यह बिधि मोको लख परी पुनि कबीर कहि गाय ॥

॥ सोरठा ॥

अनुरागसागर माहिं, कहि कबीर धर्मदास सों ।
हम पुनि देखा ताहि, स्वामी यह बिधि सत्त है ॥

तुलसीदास उबाच

॥ सोरठा ॥

तुलसी पूछै बात, फूलदास कहो कस बिधी ।
कस कबीर बिधि भाष, काल मता बारा कही ॥

॥ चौपाई ॥

फूलदास यह भाषौ साषी । बारा मता काल कस भाषी ॥
कस कबीर ग्रन्थन में गावा । सो बारा की बिधी बतावा ॥
तुम ग्रन्थन में देखा आंखी । सो सबभाषिकहौबिधिताकी ॥

॥ सोरठा ॥

पूंछै तुलसी बात, कस कबीर ग्रन्थन कही ।
बारामत बिख्यात, काल चलाये जो जेही ॥

॥ चौपाई ॥

तुलसी कहै कहो पुनि भाई । फिर तुमको हम बर्ण सुनाई ॥
बारा भेद नामगुन कहिये । भिन्न २ पुनि बर्ण सुनइये ॥
कस कबीर ने भाषि बताई । सोबिधि तुमहमकोसमझाई ॥

फूलदास उबाच

॥ चौपाई ॥

फूलदास अस भाषा लेखा । कहि कबीर सो कहूं बिबेका ॥

तुमने बचन जो भाषि सुनावा। सो कबीर मुखअपनेगावा ॥
यामें वामें अंतर नाहीं। ताकी बिधि मैं बर्ण सुनाईं ॥
तुम भाषा सत नाम से पावा। बारा मते काल ले आवा ॥
तुम ऐसी बिधि भाषि सुनावा। यह कबीरमुखअपनेगावा ॥
यह कबीर मुख अपने कीन्हा। काल निरंजनको मतदीन्हा ॥
उन अपना खुद ज्ञानइभाषा। तुमने भक्ति भाव करराखा ॥
दोनो बिधी एक सम जानी। यामें कछू भेद नहिं मानी ॥
बारामत्ते काल को दीन्हा। मन अपने परमान जो कीन्हा ॥
यह तौ स्वामी सत्त जनाई। कहि कबीर ग्रंथन में गाई ॥
भाषूं सोई सुनाऊँ लेखा। जोई कबीर ग्रंथन में देखा ॥
यह कबीर मुख अपने भाषी। बारा मते काल बिधि ताकी ॥
धरम राय निरंजन होई। बारामते दोनं हम सोई ॥
असकबीर ग्रंथन में गाई। देखी जस बिधि ताहि सुनाई ॥
१ प्रथम दूत मृत अंध कहावा। दास नरायन नाम धरावा ॥
काल अंस यह नाम नरायन। जीव फांस फंदा जिन लायन ॥
२ तिरमिर दूजा नाम बषाना। जात अहेरी कुफ़र कहाना ॥
३ दूत तीसरा भाषि सुनाऊँ। अंध अचेत ताहि कर नाऊँ ॥
सुरतगुपाल नाम तेहि पावा। कहकबीर ऐसी बिध गावा ॥
४ चौथा दूत भंग मन होई। भंगा मूल पंथ कह सोई ॥
५ पांचवां दूत ज्ञानभग नामा। परचा करन मृत्त को थामा ॥
६ मकरँद षष्टम दूत कहावा। नाम कमाली तास धरावा ॥

७ सप्तम दूत आहि चितभंगा। नानारूप करै मन रंगा॥
८ अष्टम दूत का नाम बताऊँ। अकूलभंग तास कर नाऊं॥
९ नवां दूत कर नाम बताऊँ। दूत बिशंभर वर्ण सुनाऊँ॥
१० अब मैं दसवां दूत बताऊँ। नकटा दूत ताहिकर नाऊँ॥
११ इकादश दूत नाम बतलाऊँ। दुगदानी तेहि वर्ण सुनाऊँ
१२ द्वादश दूत नाम बतलाऊँ। हंसमुनी तेहि वर्ण सुनाऊँ॥
ऐसे बारा दूत बषाना। अनुरागसागर करत बयाना॥
साहब कबीर ऐसी बिधि गावा। सो मैं तुमको भाषि सुनावा
तुलसी स्वामी बिधी सुनाई। कस २ मता काल बिधि पाई॥
याकीबिधि मोहिंवर्ण सुनइये। सबबिधिनामदूतकरकहिये

तुलसीदास उवाच

॥ चौपाई ॥

फूलदास सुनियो चितलाई। अब याको हम वर्ण सुनाई॥
निरगुन काल निरंजन जानों। सोई यही मनहिं पहिचानों॥
सत्त शब्द तन माहिं रहाई। बारह छांड खान को जाई॥
बारामत नहिं कहिया भाई। वही राह की मती बुझाई॥
मन यह राह की मत जो राखा। याको बारह की मत भाषा॥
मन यह द्वैत भाव जग राखा। दूत नाम येही बिधि भाषा॥
एक नाम बिधि भूला भाई। तासे मन को दूत बताई॥
यह मन की बिधि कहूँ बषाना। फूलदास सुनियौ दैकाना॥
बारह मत मनहीं के जाना। द्वैत न छांड़ एक नहिं माना॥

यौं बारा मत मन के भइया। बारा मत मन नाम कहइया॥
द्वैत राह मन छांड न भाई। तहँ लग यह मन काल कहाई॥
द्वैत काल मन यह बिधि गावा। मनमत द्वैत जगत सब छावा॥
मनमत द्वैत बोराह न पाया। यह कबीर ने यों बिधि गाया॥
या मन की बिधि २ समझाई। बारा दूत मन काल कहाई॥
यह मत बिधि सब कही बषाना। बारानाममनहिंकेजाना॥
नरायनदास नर मन है भाई। यह बिधि दास कबीर बताई॥
मनमृत अंध दूत बतलाई। मन नित मृत्त करै जग जाई॥
यह मन तिमिर जगत को लावा। याते तिमिर नाम मनपावा॥
मन जग अंध अचेत करावा। अंध अचेत दूत ठहरावा॥
सुरतगुपाल नामतेहि कहिया। सूरत मन गो पालन करिया॥
मन मत भंग करै जग केरी। मनमतभंग नाम असफेरी॥
मन २ ज्ञान करै चित भंगा। मन भँग दूत नाम रसरंगा॥
मन मतंग माया मन राखा। मन मकरंद दूत यौं भाखा॥
मन और चितभंग करे अनेका। चित भंग दूत नाम यों लेषा॥
मन अक्कल को भंग लगावा। अक्कलभंग नाम असगावा॥
बिषय अमर मन करके राखे। सुरत नाम को नेक न ताके॥
ताकर नाम बिशंभर दूता। बिषरस जीव किया मज़बूता॥
मनही नकटा दूत कहाई। ज्ञान भुनै फिर बिष रस खाई॥
याको लज्या नेक न आवै। नकटा है पीछे पुनि धावै॥
नकटा नाम दूत यहि जानों। याकी साख न कोऊ मानो॥
मन द्रुग गुनके दान चुकावै। गुन तीनौं से जग बौरावै॥

दुगदानी यहि मन को जाना। आस दुगदानी नाम कहाना॥
याकी बात सत्तकर मानी। यहि बिधि मनको दूत बषानी॥
यह मन निर्मल सुरत कराई। मन ह्वै हंस सुरत घर जाई॥
हंस मुनी ह्वै दूत उड़ाई। सुरत शब्द घर अपने जाई॥
सत्त नाम पद पहुँचे भाई। चौथा पदरस पिये अघाई॥
मुनि ह्वै हंस ताहि कर नामा। बारा मत मन के पहिचाना॥
यह कबीर ने भाषा पेषा। औरों संत यही बिधि लेखा॥
यह सब मनके मते बताये। मन में पंथ भेष जग आये॥
मन बारह कोइ पंथ न होई। यह सब मते काल करजोई॥
मनसे भिन्न सुरत को पावै। सुरत जाय पद नाम समावै॥
सो बारह से न्यारा होई। सो जिव अमर पंथ को जोई॥
मन से राह सुरत नहि जाने। सो सब पंथ काल मत साने॥
ह्वै महंत मन चेला करिया। खुद कबीर जगमाहि बिचारिया
कह कबीर मैं सबमें बासा। चेलाकर जेहि बूझै दासा॥
यह महंत मन अंधा धुंधा। यह मह काल राह वा फंदा॥
दास कबीर यही पुनि भाषा। हमहूं दीन्ह यही बिधि साषा॥
यह कबीर यह तुलसी लेखा। मन माने तौ करौ बिबेका॥
तुलसी संत चरनकी आसा। संत सरन में सुरत निवासा॥

॥ दोहा ॥

फूलदास मत भाषिया मनहि कालमत नास।
बारा पंथ मनमें बसें बूझौ तुम्हरे पास॥

शब्द

बारा मत गाई मनहि लखाई ।
बूझ बुझाई राह दई ॥ १ ॥
तुम अन्ते गाओ भेद न पाओ ।
मनहिं काल घर घाट मई ॥ २ ॥
याको नहिं बूझा अन्त न सूझा ।
तासे तुमकों भूल रही ॥ ३ ॥
जिनमन सत जाना खुत पहिचाना ।
निरत तोल असमान गई ॥ ४ ॥
संतन जिन जानी करी बखानी ।
महुँ पुनि उन संग गाय कही ॥ ५ ॥
मनकी बिधि जानी सुरत पिछानी ।
बिन सूरत यह राह नहीं ॥ ६ ॥

॥ दोहा ॥

तुलसी कहै बुझाय फूलदास सूरत लखो ।
यह चौका यहि पान सुरत जान पदरस चखो ॥

॥ चौपाई ॥

सुरत चीन्हरस जानो भाई । तब यह घर का मारग पाई ॥
कमठ ध्यान कछुवामत ताको । ऐसी सुरत नाम में राखो ॥
ज्यें चकोर चंदा को ताके । यह बिधि सुरत नामरसचाखे ॥
सूरज मुख पषान इक होई । रबि सनमुखतेहिपावकजोई ॥

पथरी सूरज सन्मुख लावै । ततखन तामें अगिन समावै ॥
चन्द्रमुखी इक पथरी भाई । सनमुख चंदा जाय दिखाई ॥
ततखन नीर चुये तेहि माहीं । देखो पथरी हाल मंगाई ॥
ऐसे दृढ़कर सुरत लगावै । चूवै अमी नामरस पावै ॥
चौका पान झूंठ है भाई । सूरत नाम पान से पाई ॥
भापा संत सरन को चीन्हा । सुरत पान लख होय यक़ीना ॥
नील सिखर खिड़की के पारा । वहँ से तके अगमका द्वारा ॥
अलख ख़लक़ से न्याराहोई । ख़लक़ राह सब छूटैसोई ॥
निशदिन सुरत गगन को राखे । झँझरी सुरतनज़रसेताके ॥
यह विधि निशदिननितप्रतिराखे । मनसेइष्टभरमनहिं ताके
ऐसे सुरत द्वारपर खेला । श्याम सफ़ेदी न्यारी सैला ॥
श्याम लोक पुनि सेतहि दीपा । शंखचक्रमधपुनिइकसीपा ॥
वाके परे बंक गढ़ न्यारा । सुखमन सैल मानसर पारा ॥
वाके परें त्रिवेनी घाटी । तासे निकर अगम पुर बाटी ॥
कर अशनान अगम को धावै । तब साँचे सतगुरु को पावै ॥
चार कँवल द्वै भीतर माहीं । तामें पैठ द्वादस में जाई ॥
ताके परे पुर्ष इक देखा । रूप रेख बिन अगम अलेखा ॥
कह कबीर पुर्ष मेवा आठा । तुम मँगाइ मेंवा की गाँठा ॥
अठमेवा है पुर्ष अस्थाना । अस कबीर मेवा आठबखाना ॥
अठमेवा पुरुष को जाना । अठवाँ लोक तेहि संत बखाना ॥
कोउ २ आठ अटारी भाखो । कोउ२ आठमहलकहजाको ॥

कोइ अठमेवा पुर्ष बतावा । यहबिधिसंतननामलखावा ॥
संत बिना कोइ भेद न पावै । ताते तुलसी यह बिधि गावै ॥
यह बिधि भेष पंथ में नाहीं । संत मिलैं तौ पावें राही ॥
सूरत चढ़ै गगन को धावै । तौ अठमेवा पुर्ष को पावै ॥
पांच बासना मनसे जावै । तनमन राह पुर्ष की पावै ॥
नरियर ऐनक मुकर लगाई । मन मोड़े पुनि बासउड़ाई ॥
तीन गुनन का तिनका तोड़े । इंद्री गोचर रीत को मोड़े ॥
कजली छेद बास चढ़ पारा । सेत के परे निरखि वहि द्वारा ॥
सुपारी जाय पवन सो पावै । सेत सुपारी पुनि दरसावै ॥
यह बिधि चौका जो कोइ जाने । सोईकबीरपंथ हममाने ॥
अस अनेक बिधि कस२कहिये । स्याना होयसमझलखलइये
थोड़े में लख लेय सयाना । बहुत २का करहि बखाना ॥
सूक्षम बूझ भेद हम भाषा । थोड़े माहिं भेद कह्यौ ताका ॥
यासे भेद संत कर न्यारा । कोइ बूझै संतन का प्यारा ॥
जिनपर संत दयाली कीन्हा । अगम बूझ कोइ बिरलेलीन्हा
कहा २ कहूं अगम की बाता । तुलसी बूझ संत सँग साथा ॥
भेष अबूझ जगत नहिं जाने । कस २ कही कोऊ नहिंमाने ॥
तासे मौन २ हूँ रहिये । जस जग देख ताहिबिधि कहिये ॥
जग अपनी बिधिमें सबमाना । तासे उनसे करी बखाना ॥
राम रमायन माहीं गाई । सातकान्ड कहे असबिधिभाई ॥
रावन राम किया सम्बदा । और २ कही बनाई ज्यादा ॥
जग सब अंध फंद गत बूड़ा । राम २ गत जान अगूढ़ा ॥

उन अँधरन मिलके हम गायो। यह बिधि राम चरित्र सुनायो॥
सब जग कहै राम रस भाषी। तुलसी तौ भये राम उपासी॥
यह बिधि सकल जगत कह भाषी। राम बिना कुछ इष्ट न राखी॥
सब अंधो में महु पुनि चोटा। कस २ कहूँ जगत सब खोटा॥
राम काल जग खाय बढ़ाया। मैं दयाल पद औरहि गाया॥
राम काल जग कारन भाषा। सो बूझा नहिं उनकी आँखा॥
राम जगत हम यह बिधि गावा। नहिं देखा जग मोर निभावा॥
राम २ कुछ इष्ट न मानी। जग अँधरे को कहा बखानी॥
राम चरित्र राम बिधि राखी। दसरथ राम अजुध्या भाषी॥
यह नहिं अगम राह कर पंथा। अगुन सगुन जग नहिं तहँ संता॥
निरगुन सरगुन इष्ट न जानौ। चौथा पद सतनाम बखानौ॥
अगुन सगुन दूउ काल की फांसी। जग में कहूँ जक्त करे हांसी॥
वह साहब पद इनसे नारा। तीन लोक निरगुन के पारा॥
निरगुन सरगुन दूऊ न जाई। तेहि घर संत करें बादशाही॥
तुलसी इष्ट संत को जाना। निरगुन सरगुन दूऊ न माना॥
जो २ संत अगम गत गाई। निरगुन सरगुन नहिं ठहराई॥
जो कोई कह तुलसी कस गावा। राम २ कहि ग्रन्थ बनावा॥
हम कुछ और भेद दरसावा। जग अबूझ अँधरा समझावा॥
जो ग्रंथन में गाय सुनाई। जीवत मिल न मुये कस पाई॥
मै मत ढाक २ कर गावा। पंडित भेष जगत नहिं पावा॥
राम २ कह सब जग मरिया। आदि अंत मध कोऊ न तरिया॥
राम जो कहै पड़ै भौ खानी। राम रमन मन अपना जानी॥

जो कोइ करै रामकी टेका । सो भौ भरमैं खान अनेका॥
तुलसी सत्त २ कह भाषी । जस २ सूझ जौन जेहि आंखी॥
फूलदास बिधि सुनहु बनाई । यह बिधितुलसीग्रंथनगाई॥
और कबीर दादू रैदासा । दरिया नानक अगम तमाशा॥
सूरदास नाभा अरु मीराँ । अरु २ संत अगम मत धीरा॥
अस २ बिधि सब साधबताई । सो २ सबन अगम गत गाई॥
जस २ मैं पुनि भाषि सुनावा । संत कृपा रज महुं पुनि गावा॥

॥ सोरठा ॥

फूलदास सुन बैन, आदि सैन अंतै कही ॥
जो कबीर मत ऐन, संत सार लारै लई ॥
यह संतन मत सार, जो अगार अंदर लखा ।
चखा सुरत पदसार, आदि अंत बिधिसबलखी ॥

॥ दोहा ॥

तोल बोल जेहि लख पड़ै तुलसी निरख निहार ।
सार पार सूरत करै तब लख लोक अगार ॥

बिलाबल

तुलसी जग तरक तोल । बोल हेर हारा ॥टेक॥
देखो दृग काल जाल । माँगे स्वर्ग बास हाल ॥
लिये मोह भर्म जाल । ख्याल खोज पारा ॥
बूझै नहिं साध संत । खोजै नहिं आदि अंत ॥
पावै कस पिया पंथ । बूड़े भौ धारा ॥

ऐसा भौ भर्म माहिं । काम क्रोध लारा ॥ १ ॥
राम सिये परन ठान । मन से सुत त्रिये मान ॥
माया बस पड़त खान । बूझ खोज पारा ॥
यह बिधि अज्ञान बास । बूझो मृत अंत नास ॥
प्रीत मुक्ति कह अकास । स्वाँस नास न्यारा ॥
ऐसी बुधि हीन चीन्ह । बूझ ले गँवारा ॥ २ ॥
चाहत पद राम बास । राम ही पुनि होत नास ॥
वहू पुनि काल फांस । आस मौत मारा ॥
यासे कोउ करो न हेत । बूझो नर अंध अचेत ॥
सूरत छबि नाम लेत । चौथे पद पारा ॥
याही ब्रत बान ठान । संत पंथ न्यारा ॥ ३ ॥
देखो कृत कर्म काग । यासे पुनि निकर भाग ॥
साधों सत सुरत लाग । लख अकाश पारा ॥
ऐसी लख मान सीख । नाहीं भौ खान नीक ॥
ऐसी अज अमर लीक । तुलसी तन छारा ॥
याही घट खोज रोज़ । चौज मौज मारा ॥ ४ ॥
भाषा सत मत पसार । ताको भौ भिन अपार ॥
चाखा पद मूर सार । ज़ाहर जग सारा ॥
पावै सतमत्त सार । देखो अगमन बिचार ॥
उतरै भौ सिंधपार । नौका भौ वारा ॥
तुलसी घर घोर शोर । निरतौ चित चारा ॥५॥

तुलसी तन माहिं पैठ । छाँडो नर सकल टेक ॥
आदि और अंत देख । टेक एक सारा ॥
कहनी मन में बिचार । तेरा कोउ ना निहार ॥
निरख नैन पार सार । घोही को अधारा ॥
तुलसी यह खूब अजूब । पावै मन मारा ॥ ६ ॥
मोकों सब जक्त कहत । तुलसी के राम टेक ॥
जाना जिन एक अलेख । संतन के लारा ॥
जाके नाहिं रूप रेख । देखा जो जाय अदेख ॥
ऐसा पद पार पेख । कोटि राम चेरा ॥
तुलसी तत कर बिचार । राम खान घेरा ॥ ७ ॥
तुलसी सतगुरु की दृष्ट । तासे निरखा अदृष्ट ॥
सत्तलोक पुर्ष इष्ट । वे दयाल न्यारा ॥
मोरी लौ चरन लार । छिन २ निरखत निहार ॥
कीन्हा पद मूर पार । काल जाल पारा ॥
तुलसी यह जक्त भ्रष्ट । देख मैं दिदारा ॥ ८ ॥
तुलसी यह अंड खंड । निरखा सगरा ब्रह्मंड ॥
मारा मन कालडंड । छौंट छूंट न्यारा ॥
धरती और चंद सूर । निरखा सगरा जहूर ॥
लीन्हा रन खेत सूर । संतन मत सारा ॥
तुलसी दीदा निहार । भागे बट पारा ९ ॥

॥ सोरठा ॥

फूलदास सुन बात, जक्त भूल बिधि यों कही ।
राम रहे भौ खान, जाकी आसा जगमही ॥

॥ चौपाई ॥

फूलदास सब विधी बताई। जगत राह हम यह विधि गाई॥
हम संतन मत अगम बखाना। हम तौ इष्ट संत को जाना॥
संत इष्ट लख वार और पारा। उन चरनन सूझा सतद्वारा॥
उन सम और इष्ट नहिं भाई। राम करम वस भौके माहीं॥
संत अगम घर कीन पयाना। सो घर राम न सपनेहु जाना॥
राम करम वस भौके माहीं। संत अगम घर नित प्रति जाई॥
संत जायँ निरगुन के पारा। राम रहे निरगुन भौ वारा॥
संत जायँ निरगुन जहँ नाहीं। सरगुन की कहौ कौन चलाई॥
सरगुन निरगुन दूउ से न्यारा। वा घर संत करैं दरबारा॥
निरगुन राम भौ जग में आई। संत अगम घर अपने जाई॥
राम रह्यौ तीन लोक समाई। कर्म भोग भौ खान रहाई॥
तीन लोक के चौथे पारा। वासे परे संत घर न्यारा॥
राम कांचसम क़ीमत जाना। संतगती हीरा परमाना॥
राम कांच मन जग को भावै। वह पैसे में जग ले आवै॥
संत अगम हीरा गत न्यारी। केहि विधि पावै जक्त भिखारी॥
यह मत बिरले खोजकहुं कीन्हा। सतकृपा कोउ हीरा चीन्हा॥
जो जेहि संत लखावैं भाई। जब वह हीरा हाथै आई॥
वह हीरा पत्थर मत जानौं। हीरा नाम अगम घर मानो॥
वह हीरा चौथे पद पारा। राम जगत जौहरी निहारा॥
राम जगत जौहरी पै नाहीं। हीरा अगम संत पै पाई॥

संत कृपा कोइ दास निहारा। संत चरन लागे सोइ लारा॥
राम कांच चूड़ी जग माहीं। तिरिया पहर हाथ में जाईं॥
फूटे बिनसे बहुर बनाईं। धक्का लगे फूट जिम जाईं॥
टूक २ चूड़ीगर लीन्हा। धरिया कर्म आंच पुनि दीन्हा॥
धरिया कर्म माहिं पुनि डारा। चूड़ी मनिया बहुर सवांरा॥
ले बजा़र गलियन के माहां। कर ख़रीद ले तिरिया ज़ाईं॥
पुनि कमनीगर कहत पुकारे। नीच बुद्धि तिरिया के लारे॥
ऐसी नीच जगत मत जानी। राम कांच जेहि अगम बखानी
राम २ बिधि ऐसी जाना। चूड़ी फूट कमनीगर आना॥
फोड़ २ भट्टी औटाई। यह बिधि राम कर्म भौ माहीं॥
तन भट्ठी कमनीगर काला। यह जग खानहि राम बेहाला॥
ताकौ जपे जगत मन लाई। ताकी कहूँ कौन गति गाई॥
राम कर्म बस आपे पड़िया। कहो तासे जग कस २ तरिया॥
राम २ मन बूझो भाई। मन को राम संत गुहराई॥
देखो सब संतन की साषी। बूझ ज्ञान जब खुलिहै आंखी॥
मन जो राम को जपहि बनाई। मनही राम को गारी लाई॥
मन से कहत बहुत यह खोटा। राम जपे का बँधिहो पोटा॥
मुख से मन को खोट लगावै। वही राम मन इष्ट बतावै॥
राम इष्ट मन गारी दइया। तुम्हरा ज्ञान आहि कस भइया॥
राम २ जपिया दिन राती। मन को खोट कहो केहि भांती॥
मन को खोट देव तुम गारी। इष्ट राम पर परिहै सारी॥
अपने मन में ज्ञान विचारा। बूझ करो सतसंगत लारा॥

जग सब भूल भूलके माहीं। बुद्धि कर्म बस बूझ न आई ॥
भेष पंथ सब भार विचारा। वहु पुनि पड़े राम की लारा॥
राम २ पुनि आपहिं गावें। जो कोइ बूझ ताहि बतलावें॥
उनसे बूझ राम कहँ होई। कहें सब माहीं रहा समोई॥
राम २ सब माहिं बताई। चार खान चर अचर समाई॥
यहविधि मुख सेबोलैं बाता। नर पशु पंछी सबके साथा॥
पूछे नर में राम बतावे॥ कंठी बाँधि चेला ठहरावैं॥
राम २ विधि सब में गावें॥ पुनि चेला कस २ ठहरावें॥
मुख से कहैं राम सब माही। पुनि पूछे सेवक बतलाई॥
सेवक मनसे ताको जाने। कस २ राम को स्वामी माने॥
स्वामी सब के माहिं समावा। पुनि सेवक कस२ बतलावा॥
राम बसा सब जग के माहीं। यह तो जगस्वामी भयाभाई॥
सब घट माहीं राम विराजा। घटमें रामहिं करै अवाज़ा॥
चेला कर तुम नाम पुकारी। बोलै को लख दृष्ट पसारी॥
को अवाज़ चेला में दीन्हा। को बोलै केहि चेला कीन्हा॥
बोलनहार राम बतलाओ। शिष्य करो सेवक ठहराओ॥
कस२ बुद्धि तुम्हारी भाई। बुद्धिगई मति ज्ञान हिराई॥
राम२कर मुक्ति तुम्हारी। बोलै चेला राम बिचारी॥
बोलै राम तुम चेलाकीन्हा। चेला मुक्ति कौन बिधि दीन्हा॥
बोलै राम रत चेला थापा। बुद्धि गई तुम बूड़े आपा॥
बूझो खूब खूब कर देखो। तुलसी बचन हृदय में पेखो॥

तुलसी बूझ अबूझ बिचारा। साँझ झूंठ परखो निरधारा॥
मनगुनज्ञानबुद्धिसँग बूझी। तुलसीनहिंकुछ कहीअबूझी॥
निंदाभाव कीन कुछ नाहीं। निंदा संत न करि हैं भाई॥
निंदाभाव नर्क की खानी। ताको संत न करहिं बखानी॥
यह अबूझ अपने से जानें। तासे निंदा कह कर मानें॥
तुम निंदा कर बूझा भाई। संतमता सत सँग नहिं पाई॥
संत मता सत संगत जानो। सार असार सभी पहिचानो॥
बिन सत संग बूझ नहिं आवै। तासे निंदा कर ठहरावै॥
संत सरन से उतरे पारा। सो तौ तुम निंदा कर डारा॥
मुख से कहौ संत मत न्यारा। संत बिना नहिं होय उबारा॥
संत गती न्यारी तुम भाषो। न्यारी कहें ताहि नहिं ताको॥
संत का भेद बेद से न्यारा। अस अपने मुख कहौ बिचारा॥
संत साध कहौ सबसेन्यारा। पुनिसुनिकेनहिंमानंलबारा॥
न्यारी कहैं सत्त सत जाना। न्यारी सुनैदेय नहिं काना॥
न्यारी को न्यारी कर बूझै। न्यारी गुने सुने नहिं सूझै॥
कह न्यारी मुख मीठी लागे। न्यारी सुने तभी उठ भागे॥
अपने मुख से न्यारी भाषे। न्यारी सुन उठके कस भागे॥
न्यारी सुन बूझै नहिं भाई। तासे कछू हाथ नहिं आई॥
यह अद्भुत सुनियो अज्ञाना। न्यारी कहै सुने नहिं काना॥
भेष जगत की ऐसी रीती। ज्यों भेड़ी जग बहे अनीती॥
या बिधि से जग भेष भुलाना। संतमता तासे नहिं जाना॥
फूलदास यह यौं बिधि लेखा। परघट नहिं संतगत पेखा॥

जो कोइ परघटकहतबुझाई। जब कोइ जगमेंजानतभाई॥
गुप्तमता संतन ने भाखी। कागज़ में मिलि है नहिं साखी॥
साखी शब्द ग्रन्थ जो गावै। बिन सतसंग हाथ नहिंआवै॥
यह झूठ कागज़ के माहीं। ढूंढ २ सब जनम सिराई॥
ज्यों बाज़ीगर डंक पसारा। जग को देखन भर्म जोरारा॥
ऐसी सब ग्रथन की बानी। तामें ढूंढै भेष अज्ञानी॥
तासे याके हाथ न आवै। गुप्त संतबिन कैसे पावै॥
फूलदास मत बूझौ भाई। अस जग अंध कहा कहूँ गाई॥
सब २ बिधि२ गाय सुनाई। फूलदास बिधि भूल बताई॥

॥ सम्बाद गुनुवां ॥

इतने में हिरदे चलि आये। संगहि सुत दर्शन को लाये॥
दोनों दरश दंडवत कीन्हा। दोनों चरन धायकर लीन्हा॥
हिरदे पुत्र सामने कीन्हा। तुलसी कौन नाम यह चीन्हा॥
हम पूंछी हिरदे से बाता। आज को लाये अपने साथा॥
हिरदे कह यह जक्त बिधाना। पुत्र कहँ गुनुवा यहि नामा॥
पूछे तुलसी कौन ठिकाना। कहँ से आये कहो बिधाना॥
हिरदे कहै सुनो हे स्वामी। मोसे जुदा रहै बिधि जानी॥
बहुत दिनों में मोसें भेटा। लखनउ रहे आहि मोरा बेटा॥
मोरे मिलन कांज यह आवा। सो स्वामी के दर्शन पावा॥
कह तुलसी गुनुवां सँग बाता। रहौ दो चार रोज़यहिंराता॥
तुलसी चरचा कर बिख्याता। फूलदास साधू के साथा॥

उन सब यह चरचा सुनपावा। वाके मनमें भर्म उठावा॥
यह साधू कस ज्ञान बखाना। मोरी समझ बूझ नहिं माना॥
राम २ इन कछू न गाई। रामसे और कोऊ बतलाई॥
राम से और कोई नहिं दूजा। यह मोरे मन आये न बूझा॥
तब पुनि हाथ जोड़ जुगपानी। स्वामी से पूछी इक बानी॥
राम२ जप बिरति बिराजा। जिन्ने किये अनेकन काजा॥
जक्त भेष सब साध बतावा। तुम ताको कुछ नहिं ठहरावा॥
सब मिलके यह बिधीवखानी। महुं पुनिसुनी कहूंयहबानी॥
राम ने सिंध पषान तरावा। जल पर सिला तरी उतरावा॥
और प्रहलाद भक्तको तारा। ता कारन हरनाकुश मारा॥
गुजरी एक बिंद्राबन माहीं। तिन पुनि कथासुनीइकठाईं॥
कथा माहिं इक सुना प्रसंगा। राम २ नौका चित चंगा॥
उन सुन सांच मान मन धारी। सो उतरी जमुना के पारी॥
अजामेल अस पातकि होई। ता सुत नाम नरायन सोई॥
मरत बार सुत नाम पुकारा। सो मुक्ती कर पहुंचे द्वारा॥
गनिका सुवा पढ़ावत तारी। राम राम कह उतरी पारी॥
ध्रुवने अटल तपस्याकीन्हा। पदश्रीरामअटल तेहि दीन्हा॥
और गज अर्ध नाम गोहरावा। ताको तुर्त स्वर्ग पहुंचावा॥
बालमीकि कह उलटा नामा। राम राम कह मुक्ति समाना॥
महादेव द्वै अक्षर बासी। राम २ कह भये अबिनाशी॥
अस परचे जो राम के गावें। तुलसी पत्र लिखा इकठावें॥

राम २ इक पत्र लिखाया। याकी विधि सब साख सुनाया॥
पत्र एक पर राम लिखाना। पलड़े माहिं धरा तेहि जाना॥
इक पलरा पर द्रव्य चढ़ावा। दूजा पलरा पत्र धरावा॥
पलरा गरू उठा नहिं भाई। राम २ बिधि ऐसी बड़ाई॥
महिमाँ राम २ अस गाई। नाम देव पुनि गाय जियाई॥
यह विधि साखी वेद पुकारे। शास्तर कहै रामही तारे॥
ऐसी विधि मिल रामकीसाखा। सोईरामतुमने नहिंराखा॥
राम २ विधि तुमहूँ गावा। तुमहूं राम राम समझावा॥
याका भर्म बहुत मोहि आई। याकी विधी २ समझाई॥
पहिले तुमहूं राम कह गावा। राम २ कह भाषि सुनावा॥
अब तुम मोड़ तोड़ सब डारा। राम २ कहौ झूंठ पसारा॥
याकी विधी भेद समझाओ। रामछोंड़तुमकेहिकाध्याओ॥
सब जग साख तुम्हारी गावै। तुलसी राम २ समझावै॥
याकी स्वामी साख सुनइये। मोरे मन का भर्म मिटइये॥
सो स्वामी मोको समझाओ। मोरे मन का भर्म छुड़ाओ॥

॥ दोहा ॥

स्वामी कहौ बुझाय भर्म भाव मोको भयौ।
मन में सर्व समाय राम राम कुछ ना कह्यौ॥

तुलसीदास उवाच

॥ चौपाई ॥

सुन गुनवाँ तोकों समझाऊं। आदि अंत याकी बतलाऊं॥

सत्तलोक इक पुर्ष अपारा। चौथा पद पुनि पार विचारा॥
तास अंस जिव पुर्ष अपारा। जाका पद चौथे के पारा॥
ताके पुत्र भये पुनि भाई। सोला निरगुन तिन कर नाईं॥
सो निरगुन जो पुर्ष से भइया। जामें लघू निरंजन कहिया॥
ताको संत काल गोहरावैं। सोई राम रमतीत कहावैं॥
राम काल रमतीता जाना। कालराम रमतीत कहाना॥
सोइ निरंजन कहिये काला। आदिहि जोत बिछाई जाला॥
पुर्ष निरंजन जोती नारी। तिरिया पुर्ष यह दूउ विचारी॥
ताके पुत्र तीन जो जाना। ब्रह्मा विस्नु ताहि कर नामा॥
तीजे शम्भू छोटे भाई। तीन पुत्र जाने उपजाई॥
निरंजन पिता जोतिहै माता। यह तीनों यहि विधि उतपाता॥
रमतीता सोई बूझौ काला। जोती काल रची जंजाला॥
ताके भये दसौ औतारा। काल अंस जग राम पसारा॥
रमता राम कर्म के माहीं। रमतित राम काल की छाहीं॥
रमतित काल ने जाल पसारा। रमता रहा राम भौ जारा॥
राम कहौ सोइ मन है भाई। मनहि राम जिन जक्त बुड़ाई॥
राम काल सब संत पुकारा। जाको जपै सोइ जक्त लबारा॥
ब्रह्मा बिश्नु महेश्वर जाना। वेद कहैं सोई झूंठ पुराना॥
यह तीनों ने जाल पसारा। राम काल ने सब जग मारा॥
राम काल जो जपै बनाई। चर और अचर सभी चर खाई॥
राम काल को जपि है भाई। जम बंधन भौ खान समाई॥
रमतित काल जोत है ठगनी। तीन पुत्र उपजाये अपनी॥

शास्तर वेद और दश औतारा। यह सब जानों कालपसारा॥
याके मत में परि है प्रानी। काल जाल यह ज़म की खानी॥
तीन लोक जम जाल पसारा। वह दयाल पद इन से न्यारा॥
वह दयाल समरथ है दाता। सो पद में कोउ संत समाता॥
वाकी राह संत सो जाने। भेष जक्त दुउ नहिं पहिचाने॥
संत मता कोऊ भेद न जाना। सूरत संत चढ़ै असमाना॥
पहुंचे सूरत अगम ठिकाने। अपना आदि अंत घर जाने॥
सूरत मिलै पुर्ष को जाई। तिनको नाम संत है भाई॥
संत राह सूरत कोइ पावै। और सब भेष खान में आवै॥
आदि पुर्ष को देखे नैना। तब अदृष्ट की बूझै सैना॥
पतिब्रता सो पुर्ष पिछाने। वाको इष्ट संत सब मानें॥
और इष्ट नहिं जाने भाई। राम इष्ट यह काल कहाई॥
जो कोइ राम पती ब्रत कीना। सो सब पड़े कर्म आधीना॥
जिन दयाल से सुरत लगाई। सो पहुंचे वा पद के मांही॥
यह विधि संत कहैं गोहराई। अस २ संत सभी समझाई॥
याको कोई भर्म ले आवै। बार बार चौरासी पावै॥
संत बचन निंदा कर माना। ताते पड़े नर्क की खाना॥
राम काल जो जपै बनाई। संत बचन निंदा ठहराई॥
आम अबूझ बूझ नहिं लावै। संतन को नास्तिक ठहरावै॥
यह सब भेष अंध भया भाई। संतन को निंदक ठहराई॥
संतन की बूझैं कोई बानी। तौ छूटै चौरासी खानी॥
राम काल को दूर बहावै। निस दिन संत चरन लौ लावै॥

अह दयाल कहुँ राह बतावैं। तब जिव अपने घर को जावै ॥
संत चरन पावै निरवारा। राम काल जम फांसी डारा ॥
जो कोई कहे राम के सरना। छूटत जनम मरन का मरना॥
कहे राम के होगया बेटा। जा को पड़ि हैं जम के सेंटा ॥
जो कोइ भये राम के प्यारा। खान गये जम लातन मारा॥
तुलसी सत २ यह मत भाषा। यामें पक्षपात नहिं राखा॥
संत बचन जेहि संत न भासी। जाकी होय जनम की नासी॥

॥ सोरठा ॥

तुलसी कहै बुझाय गुनुवाँ बूझौ बात यह ।
राम भर्म भौखान सब कहें संत पुकार के ॥

गुनवां उवाच

॥ चौपाई ॥

पुनि स्वामी पूछौं इक बाता। कहिये विधी जीव है शान्ता॥
ध्रुव प्रहलादजोगनिकाभइया। शेषनागगज नामदेवकहिया
बालमीकि औरसबहि बषानी। अजामेल शिवगुजरीजानी
तुलसी पत्र राम लिखवाई। अरु पखान जल माहिं तराई॥
यह स्वामीकहो कैसी भइया। कह गुनुवां मोको समझइया॥

तुलसीदास उवाच

॥ चौपाई ॥

सुन गुनुवां मैं बूझ बताई। मन ठहराय सुनो चित लाई॥
राम अनादि चारजुगभइया। ग्यारा जीव ताहि में तरिया॥

तामें सात जीव की चरचा। और चार बतलाओ परचा॥
गिरे पड़े दस पांच और होई। यह सब साख बताऊं सोई॥
पोढ़ २ तौ सातै भइया। चार बिधी परचे की कहिया॥
चारो जुग जिव भये अनेका। सतजुग द्वापर त्रेता देखा॥
कलजुग सुधा चार जुगपेखा। चार जुगन को पूछौं लेखा
तामें सात जीव सब तरिया। सब जिव गये कहांजो मरिया॥
राम राम चारो जुग आवा। चारो जुगसबहिन मिलगावा॥
निर्मल सतजुगजीव अनेका। राम २जप बांधी टेका॥
सो तरे जीव अनेकन होई। तुमने सात जीव कहे सोई॥
और जीवका भाषौ लेखा। तरिगये है हैं जीव अनेका॥
और नहीं थोड़े पुनि कहिये। सतजुग क्रोर जीवतौचहिये॥
सतजुग उजली बुधि मन होई। राम जपा निश्चय से सोई॥
तामें क्रोर जीव तो चाही। यह तौ सात नाम भये भाई॥
और अनेक राम जप जानी। सात तरे की हम नहिं मानी॥
क्रोर जीव का नाम बतावै। तब हमरे मन साची आवै॥
उजला सतजुग सात बखाना। मैले कलि का कौन ठिकाना॥
सतजुग सात नीठ से गइया। कलजुग एक तरे नहिं भइया॥
सतजुग में तुम सात बतावा। कलजुग कर्म निष्ठ लिपटावा॥
जो कोई कहै राम से तरि है। यह झूंठी मन में नहिं धरिये॥
राम रमा जुग चारो खानी। तरिहो यासे कस कंस मानी॥
तुमको कहत शरम नहिं आई। याको मन में बूझौ भाई॥
यह विधि तुम मनअपनेबूझा। करबिचार तबपरिहैसूझा॥

क्रोरों ऋषि मुनि जब पुनि होई। क्रोरों तपसी जानो सोई ॥
क्रोरों इष्ट नेम पुनि करिया। कइ इक राम पतीब्रत धरिया॥
राम २ कह सब जग तरते। भौसागर में कोई न परते ॥
जो तुम कहौ करै परतीता। सतजुग में थी सत की रीता ॥
सांचा जुग परतीत न आई। झूंठे कलु की कौन चलाई ॥
काल राम मन उतपत मांही। राम न तारा हूं है भाई ॥
सतजुग रामकहैनहिं तरिया। भौसागर मेंसबजिवपरिया॥
तुम तो कहौ राम सब माहीं। चारि खान मे रहा समाई ॥
राम खान में रहा बिराजा। कस २ भयौ तुम्हारो काजा ॥
राम खानि सब रहिया भाई। तुम को कस मुक्ती पठवाई ॥
यह सब जानें झूंठी बाता। यामें खैहैं जम की लाता ॥
सत सतलोक राह चढ़िजाई। तब यह जीव मुक्ति को पाई॥
राम राम की झूंठी आसा। गये राम कह जम की फांसा ॥

गुनुवां उवाच।

॥ चौपाई ॥

तुम पुनि राम २ कस कहिया। सब ग्रंथन में साख सुनइया॥

तुलसीदास उवाच।

॥ चौपाई ॥

जग अबूझ कारन संग गाई। जो करै इष्ट राम से भाई ॥
जो हम न्यारा भेद सुनावैं। तौ जग माहिं रहन नहिं पावैं॥
तासे न्यारा भेद न भाषा। संत भेद हम गुप्ते राखा ॥

भेद ग्रंथ में गुप्त लखावा। पुनि काहू की दृष्टि न आवा ॥
हमने भाषा अगम अलेखा। जाको मर्म न जानै भेषा ॥
हम सतपुर्ष अलख लखवावा। वेद न भेद भेष नहिं पावा ॥

गुनुवां उवाच ।

॥ चौपाई ॥

स्वामी एक मोहिं समझाई। गुजरी सिला की कहौ बुझाई॥
सब भाषैं जल में जो तरिया। याविधि कहौमोर मनभंरिया

तुलसीदास उवाच ।

॥ चौपाई ॥

याकी मैं परत्यक्ष बताई। देखो जाय नज़र से भाई ॥
याकी विधि मैं तुर्त बताऊं। ज्यों बज़ार सौदा समझाऊँ ॥
जस बज़ार में सौदा लीन्हा। परखा तोल दाम तेहि दीन्हा॥
अपने मनमें सांची आई। पैसा दीन गांठ बँधवाई॥
ऐसा परचा ततवर पेखो। अपने नैन नज़र से देखो ॥
वहि पानी वहि पत्थर होई। वहि पुनि राम लिखाओसोई॥
राम लिखो पत्थर के माहीं। पानी डार देख लेव भाई ॥
जो पत्थर पानी नहिं बूड़ा। तौ तुम जानो राम अगूढ़ा ॥
पत्थर डूबा राम लिखे से। तौ तुम बुड़िहौ राम कहेसे ॥
ततवर करो नज़र से पेखो। यह तौ आज सुरत से देखो॥
संसै सोग सब झारि निकारो। लै पत्थर पानी में डारो॥
जो जल पत्थर रह उतरानी। सिल गुज़रीकीसांचीमानी॥

बूड़ा पत्थर राम लिखाना। अपने बूड़न की अस जाना ॥
एक विधी मैं और बताई। तासे देखो सत्त बनाई ॥
राम २ जेहि तुमहिं दृढ़ाओ। लैपत्थरवहिहाथलिखाओ॥
सोइ पत्थर वहि हाथ डरावै। जो बूड़ै झूंठे कर गावै ॥
नहिं तौ और बिधी इक भाखूं। जैसी बिधी जुगत करताकूं॥
राम २जग कहे अनेका। राम इष्ट जेहि२ कर देखा ॥
सोइ२हाथ सबनलिखवाओ। पत्थरलिखपानीसोइनाओ॥
एक२ बिधि २ से डारी। यह परचा सब देखो भारी ॥
यामें कोइ परतीती होई। सब का परचा भिन्न २जोई ॥
यामें रहौ भरम इक साथा। यह लिख देखो अपने हाथा॥
तुलसीपत्र की बिधि बताई। सोई बृक्ष बहुत जग माहीं ॥
पत्र तोड़ कर परचा पेखो। लिख वहि राम पत्र धरिदेखो॥
पत्रतोल में हलुक उठाना। तौ यह विधि झूंठी कर जाना॥

गुनुवाँ उवाच

॥ चौपाई ॥

तुलसी स्वामी सुन बिख्याता। यह सब वही समय कीघाता
वही समय में यह बिधिहोती। आज कलू नहिं जामेंभौती
राम २सुनशिव अबिनासी। यह भी वही समय की बासी॥

तुलसीदास उवाच

॥ चौपाई ॥

राम २ कौने बिधि कहिया। जासे शिव अबिनाशीभइया॥

मुख से जपकीन्हा कुछऔरी। यहगुनुवाँबिधिकहौबहोरी॥

गुनुवाँ उवाच

॥ चौपाई ॥

गुनुवाँ कहै सुनो हो स्वामी। मुखसे जप२ राम बषानी॥
महादेव ने मुख जप कीन्हा। भया यह वही समयकाचीन्हा

तुलसीदास उवाच

॥ चौपाई ॥

यामें राम वड़ा नहिं होई। यहतौ समय वड़ा भया सोई॥
रामकहै शिवनहिं अविनासी। वे भयेसमयभावबिधिबासी
यहतौसमयवड़ाबिधिभाषी। रामवड़ाकहोकेहिबिधिराखी
राम वड़ा जब जानें भाई। जलमें पत्थर आज तिराई॥
उनको वड़ा जबै हम जानें। आज लिखे पत्थर उतरानें॥
समय भाव पत्थर उतराई। कहो राम की कौन बड़ाई॥
कहो राम से मुक्ति बताई। पुनि फिर ले समया ठहराई॥
कभी राम को वड़ा बताओ। कवहीं ले समया ठहराओ॥
एकहि बात सत्त ठहरावै। तब सत हमरे मनमें आवै॥

॥ दोहा ॥

एक कहै दूजी कहै दो दो क़हत वनाय।
यह दो मुख का बोलना घने तमाचे खाय॥

॥ चौपाई ॥

कह तुलसी सुन गुनुवां भाई। समा वड़ा कहौ राम बड़ाई॥

थामें एक सत्त कर भाषो । एक बात झूंठी कर राखो ॥
जो तुम कहौ राम सब तारा । परचा देखन कहै लबारा ॥
ऐसी बड़ी राम गति जेही । समया झूंठ राम कर देई ॥
राम से समय बड़ा है भाई । कहौ राम की कौन बड़ाई ॥
समया झूंठ राम कर डारे । ऐसी कहौ तौ साँच बिचारे ॥
समय राम की कला उड़ाई । तुम जपि मुक्ति कौन बिधिपाई ॥
अपनी मुक्ति खोज नहिं पाओ । राम २ कह जक्त ढृढ़ाओ ॥
जो सच्चा तुम राम सुनाओ । तौ पत्थर पानी में नाओ ॥
जब जानों वहि सच्चा रामा । पानी पत्थर आज तिराना ॥
अपनी देखी कहौ न भाई । मुये गये की बिधी बताई ॥
सांचा सोई मिलै जो आजी । मूये मुक्ति बतावैं पाजी ॥
जीवत मिलै सोई मत सूरा । मुये कहैं धूर के पूरा ॥
अब सुन आगे बिधी बताऊँ । महादेव की बिधि समझाऊं ॥
महादेव राम नहिं कीन्हा । यह साषी झूंठी तुम दीन्हा ॥
महादेव जो जोग कमाया । राम २ जोगी नहिं गाया ॥
उन अपनी इन्द्री मन जीता । मुद्रा साधी पाँच पुनीता ॥
स्वांसा साध गगन मन धावा । उनमुन साधी गगन लगावा ॥
चाचरी भूचरी भावक जानी । खेचरी मिल यों पांच वषानी ॥
आगे अगोचर साख सुनाऊँ । ऐसे जोगी जोग जनाऊँ ॥
जोग किया जब भये अविनासी । राम २ कह कालकी फांसी
जोग किया पुनि जोत समाने । जोत दृष्ट मुक्ती पद जाने ॥
मुक्ती भोग भोग भया भाई । पुनि फिर २ चौरासी पाई ॥

संत मते की राह न जानी। यासे भरमें चारो खानी ॥

गुनुवाँ उवाच

॥ चौपाई ॥

यह स्वामी तुम सत्त बताई। यह सब मोरे मन में आई ॥
एक बिधीमोहिंबर्णसुनाओ। बालमीकिबिधिसाखबताओ
अजामेल गति कैसी भइया। सो बिधि मोकोबर्णसुनइया ॥

तुलसीदास उवाच

॥ चौपाई ॥

कहे तुलसी गुनवां बाता। बालमीकि की सुन बिख्याता ॥
बालमीकि जपउलटा कहिया। उलटा जपत मुक्ति नहिं भइया
सूधा जप २ जनम सिराना। मुक्ती को सपने नहिं जाना ॥
उलटा जपत मुक्ति जो होती। सुलटे मिलन जपी जपथोथी॥
जीवत मुये मुक्ति नहिं पाई। यह जमझूंठी जाल बिछाई ॥
अजामेल का भाखूं लेखा। सुन गुनुवां अपने मन पेखा ॥
नारायन जेहि सुत का नामा। ताको मोह बांधबसजामा ॥
अपने सुत तें मोह जो कीन्हा। मरते नाम नरायन लीन्हा॥
मुक्ति भई अस कहैं बुझाई। याकी बिधी कहौं समझाई॥
जग में पुत्र सबन के होई। राम कृष्ण नारायन सोई ॥
गोविंद नामगुपालमुरारी। यहबिधि पुत्र नामजुगचारी॥
मोह बंध बस नाम पुकारी। नाम पुत्र जगहोत उबारी ॥

यह विधि मुक्ति होत जोभाई। तौ भौमें जिव एक न जाई॥
यह सब जानो झूंठी बाता। राम काल जीव कीन्ही घाता॥
और तुमने ध्रुव मुक्ति बतावा। सो तौ गगन दृष्ट में आवा॥
ध्रुव तारा की मुक्ति बताओ। सब तारों की विधि समझाओ॥
तारा गगन मुक्ति जो होती। तारा टूट गिरे भुइँ जोती॥
जो तुम ध्रुव को अटल बताया। गगन फूट ध्रुव कहाँ समाया॥
पांचतत्व का ह्वै है नासा। कहौ ध्रुवने कहँ कीन्हा वासा॥

दोहा

चंद मरै सूरज मरै मरि है ज़िमी अकाश।
ध्रुव प्रहलाद भभीषना परैं काल की फाँस॥

॥ चौपाई ॥

सुन गुनवां सब विधी बताई। यह सब की तोहि भाष लखाई॥
अब प्रहलाद का भाषूं लेखा। सो तुम सुन कर करो विवेका॥
दस औतार काल के भाई। तामें नरसिंह है दशमाही॥
हरनाकुश का उदर विदारा। यह जानो सब कालपसारा॥
वह दयाल इक सबके माहीं। वह कहौ केहि का मारन जाई॥
हरनाकुश को मार विदारा। पुनि प्रहलाद राज बैठारा॥
राज भोग जिन कीन्हा भाई। सो तेहि पुत्र विलोचन राई॥
बैलोचन के बलि भयो सोई। जाको बावन बांधा जोई॥
जो मुक्ती वाके ह्वै जाते। बली छुड़ावन केहि विधि आते॥
आवागवन मुक्ति नहिं भाई। बली छुड़ावन कस २ आई॥
भागवत में देखो यह साखी। बली काज आये अस भाषी॥

जो प्रहलाद मुक्ति को जाता। आवागवन केहि कारन आता॥
सहाय करी नरसिंह बतावा। पिता मार राज जिन पावा॥
राज करै सो नरके जाई। कस कस ताकी मुक्ति बताई॥
जो नरसिंह जीवत लै जाता। तौ ताकी हम मानै बाता॥
राज थाप तेहि भोग करावा। भोगभोग भौखाने आवा॥
ताकी मुक्ति साख बतलाओ। कह झूंठे झूंठे समझाओ॥
सुवा पढ़ावत गनिका तारी। यह बिधि भाषो कहोबिचारी॥
सूवा पढ़त जो गनिका तरती। सहजै होत जगत सब मुक्ती॥
सूवा २ घर घर में होते। तौ मुक्ती का सोच न करते॥
ध्रुवतप की तुम साख बताई। गोपीचंद भरथरी भाई॥
पढ़ २ सुवा मुक्ति मन मँजते। तौ पुनि राज काहे को तजते॥
ध्रुवको तप की विधी बताया। राज छाँड़ तन खाक मिलाया॥
गनिका मुक्तिसहज बतलाओ। ध्रुवजी राजगये किमिगाओ॥
कभी सुवा पढ़ि सहज बतावा। कभि २ कष्ट तपस्या गावा॥
यह तौ बिधी मिली नहिं भाई। यह सब झूंठ २ सी गाई॥

॥ सोरठा ॥

सुन गुनुवां यह बात राम काल जग में फँसा।
बसा कर्म के माहिं लखो खान चारौं भरी॥

गुनुवां उवाच

॥ चौपाई ॥

यह स्वामी सत २ तुम भाषी। समझ पड़ा बूझी सब साखी॥

यह सब काल जाल करलेखा । अपने मनमें किया विवेका ॥
जब गुनुवाँ बोला असबानी । महूँ आप चरनन लिपटानी ॥
चरनदास मोहि जानो चेरा । किरपा दृष्टि मोहिं तन हेरा ॥
मैं पुनि रहूँ चरन के लारा । जीव काज मम करो सुधारा ॥
अबमैं सरन आपकी लीन्हा । राम काल धोखा यह चीन्हा ।

तुलसीदास उवाच

॥ चौपाई ॥

अब तुलसीअस करीबषानो । हिरदे की सतसंग पहिचानो ॥
निस दिन हिरदे संग निहारो । हिरदे से हूँ है निरवारो ॥
मनको थिर कर बूझी बाता । मन थिर बिना न आवै हाथा
इंद्री मन थिर सूरत हेरो । तब भौ जल से होय निवेरो ॥
यह हिरदे रहे हमरे पासा । तन मन विधी रहो यहि दासा ॥
यह सतसंगत सगरी जानी । यासे प्रीत करो पहिचानी ॥
हिरदे का तुम भेद न पाई । सूरत पाय चरन चित लाई ॥
यासे पिता भाव नहिं जानेँ । सूरत सैल चरन में आनों ॥
तब हिरदे बोला असबानी । अब चलने घर कहूं बषानी ॥
यह गुनुवाँ परशाद कराऊँ । पुनि सिरनाय चरनमें आऊँ ॥
अस कह दीन दंडवत कीन्हा । चरन पाय मारग को लीन्हा ॥

गुनुवाँ उवाच

॥ चौपाई ॥

तुलसी स्वामी अर्ज़ हमारी। किरपा करो कहौं निरवारी॥
हिरदे की मोहिं बिधी बताई। हिरदे पार समझ मोहिं आई॥
अस बिस्वास मोरमन आवा। याको कृपा कहौ परभावा॥
मैं स्वामी निजदास तुम्हारा। यहिकहि यहि बूझौ निजसारा।

तुलसीदास उवाच

॥ चौपाई ॥

तब तुलसी बोले यहि भांता। हिरदे भेद सुनाऊं बाता॥
इन सतसंगत बहु बिधि कीना। संत चरन में रहै अधीना॥
दीनबिधी और मनमत लीना। संत चरन में बहुत अधीना॥
सूरत लीन अधर रस भांती। का पूंछौ हिरदे की बाती॥
सतसंगत बिधि सगरी जाना। सूरत शैल फोड़ असमाना॥
दसदिस पार सार सब जाना। नौ लख कँवल पार पहिचाना
मान सरोवर बेनी तीरा। जल प्रयाग बहै निर्मल नीरा॥
तामें न्हाय चढ़े असमाना। सतगुरु चौथे पाय ठिकाना॥
निसदिन सैल सुरत सों खेला। सुरत नाम करै निसदिन मेला
अष्टकँवल दल गगन समाई। सहस कँवलपर तेहिकी राही॥
ताके परे चार दल लीन्हा। द्वै दल जाय दोय में कीन्हा॥
यह बिधि रहे दिवस और राती। जाने कोई न इनकी बाती॥
ऐसे कई दिवस गये बीती। ता पीछे भइ ऐसी रीती॥

कोऊ न भेद जान घर माहीं। एक दिवस भइ ऐसी राही॥
चल हिरदे पुनि घर को जाई। घर में त्रिया पुत्र द्वउ रहई॥
रात सैन पुनि घरमें कीना। भोजन कर पुनि कीन्ही सैना॥
पुनि २ निसा गई अधराती। चढ़गइ सुरत सैल रसमाँती॥
ता समै तिरिया कीन उपावा। रोग सोग अपना दुख गावा॥
जब हिरदे मन कीन बिचारा। यह ग्रह साल जाल है न्यारा॥
अस मन में कुछ भई उदासी। पुनि तब से रहे हमरे पासी॥

गुनुवाँ उबाच

॥ चौपाई ॥

तुलसी स्वामी बिधी बताई। हिरदे की कुछ अगम सुनाई॥
हिरदे पार सार गति पाई। तुलसी स्वामी अगम लखाई॥

तुलसीदास उबाच

॥ चौपाई ॥

इतने में पंडित चलि आई। करी दंडवत परसे पाई॥
श्यामा नैनू माना नामा। तीनों मिल बैठे वहि ठामा॥
पुनिनैनू ने अर्ज़ बिचारी। स्वामी तुम चरनन बलिहारी॥
ब्राह्मण ज़ात मान मदभारी। स्वामी तुमने लीन उबारी॥
अब मैं अपनी बिधी बताऊं। स्वामी सुन मनचित्तकर भाऊ
चमके बीज और गगन दिखाई। अंदर स्वावी फैलतजाई॥
पांचतत्त रँग भिन २ देखा। कारा पीरा सुर्ख सफ़ेदा॥
और जंगार रंग तेहि माहीं। यहि बिधि पांचोंततदरसाई॥

तासे सुरत भिन्न ह्वै खेली। तेहि के आगे चली अकेली॥
सहस कँवल से न्यारी जाई। सेतदीप द्वारे के माहीं॥
तासे चली निकर ह्वै न्यारी। देखा सब ब्रहमंड पसारी॥
नैनू यह विधि बिधी बताई। तुलसी सन्मुख जाय सुनाई॥
तुम्हरी कृपा और कुछ पैहौं। पुनि चरनन में आनि सुनैहौं॥
हम जड़ जीव निंदा के माते। आज्ञा ज़ात बुद्धि में राते॥
पढ़ि २ के हम जनम गँवावा। संतन सन्मुख राख दुरावा॥
मैली बुद्धि ज्ञान मन छोटा। संतन से मन राखा मोटा॥
तासे बिधी भेद नहिं पाई। अब स्वामी तुम सब दरसाई॥
तुम्हरी कृपा नज़र बिधि सारी। बिधि २ देख पड़ी गति न्यारी

श्यामा उवाच

॥ चौपाई ॥

तब श्यामा बोले अति दीना। मन बुधि चित चरनन में लीना॥
तुलसी स्वामी हम बलिहारी। तुम्हरे चरनन में सुख भारी॥
जिन २ तुम्हरे चरन निहारा। सो २ उतरे भौजल पारा॥
जो २ चरन और कोउ धरिहै। भौ के माहिं कभी नहिं परिहै॥
यह मोरे मन सत कर भासा। तुम्हरे चरन छूट जम फांसा॥
यह दयाल तुम किरपा कीना। जस २ सुरत होय लौलीना॥
होत उजास जोत हिय माहीं। छिन २ सुरत ताहि में लाई॥
जोत फाड़ सूरत गई आगे। मानौ सुरत द्वार पर लागे॥
द्वार बैठ देखा हिय मांहीं। चांद अरु सूरज गगन सब ठांई॥

घट २ देखा अगम बिलासा। सो सबभा पातुम्हरे पासा॥
अब है है विधि पुनि २ आऊँ। पुनि चरनन में आन सुनाऊं॥
स्वामी हमें दया नित कीजे। निसदिन चरनन सरन लखलीजे॥
स्वामी हमने अपत विचारी। तुम दयाल कुछ मन नहिं धारी॥
हमने टहल कछू नहिं कीन्हीं। तुमने वस्तु अमोलक दीन्हीं॥
शास्तरन।हिं न बेदन माहीं। अरु पुरान यह जानत नाहीं॥
ब्रह्म माया को अंक न चीन्हा। यह विधि औतारन से भिन्ना॥
आतम ब्रह्म से यह गति न्यारी। चीन्हें कोइ२ संत सँवारी॥
संत चरन जोई जिव जाना। ताका आवागवन नसाना॥
संत चरन जो चीन्हें नाहीं। पुनि २ ताका जन्म नसाई॥
अस २ समझ पड़ा यह स्वामी। यह दयाल किरपा से जानी
संतन की गति अगम अपारा। हम पंडित लघु पावें न पारा॥

माना उबाच

॥ चौपाई ॥

माना कह कर जोरे हाथा। चरन नाय सिर दीन्हों माथा॥
स्वामी हम कीन्हीं अजगूती। मारन काज कीन मजबूती॥
तुम दयाल कछु स्वाल न भाषा। मन से द्रोह कछू नहिं राखा
हम औगुन कह कर २ भाषा। तुम स्वामी चित कछू न राखा
लड़का कपूत बाप दे गारी। पितु औगुन तेहि नहीं बिचारी
तेहि समझाय मिठाई दीन्हा। पुनि २ ताहि बोध कर लीन्हा॥
यह बिधि भाव भई गति मोरी। स्वामी से कीन्ही बरजोरी॥

तुलसीदास उवाच

॥ चौपाई ॥

तुलसी माता मनहिं बिचारी । याबिधि होत आई जुग चारी ॥
संतन गति दोऊ के माहीं । या विधि आदि अंत चल आई ॥
अब या का बरतंत सुनाऊं । बिधि दृष्टान्त बहुर दरसाऊं ॥
संत जगत तारन बतलावें । जग पुनि उनको मारन धावे ॥
परमारथ की राह बतावें । जग पुनि उनकी निंदा लावे ॥
साधू जीव करें उपकारा । जित्र मतहीन उनहिं को मारा ॥
जस बालक फुड़िया दुखमाहीं । माता चहै नीक है जाई ॥
पक फुड़िया बालक दुख पावे । माता फोड़न ताको चावे ॥
बालक माता मारन धाई । वह जाने मोको दुखदाई ॥
माता कहै नीक है जावे । तब हिरदा मोरा माहिं जुड़ावे ॥
माता सुख उपकार बतावे । बालक के मन में नहिं आवे ॥
बालक बुद्धि जग रीती जाना । माता अस मत संत बखाना ॥
वे दुख का उपकार बतावें । वे पुनि उनको मारन धावें ॥
ऐसी संत जगत की रीती । यामें तुम कह करी अनीती ॥
ताका इक दृष्टान्त बताऊं । हाथी ऊपर नक़ल दिखाऊं ॥
हाथी की बिधि बरन सुनाई । मातासुन औं मन चितलाई ॥
हाथी का इक बन रहे भाई । तहँवाँ हथिनी अनेक रहाई ॥
तामें गज मकरंद रहाई । ताकी बिधी सुनो तुम भाई ॥
गज मकरंद की विधी बताई । सब हथिनी सँग रहे बनाई ॥

दूजा हाथी रहै न लारे। दूजा देख प्राण से मारे ॥
सब हथिनी सँग आप रहाई। दूजा वन में रहन न पाई ॥
हथिनी ब्याय ताहि को देखे। नर बच्चा हुै मारै लेके ॥
बच्चा नारी जो कोई होई। ताको नहिं पुनि मारे सोई ॥
नर को देख प्राण हर लेई। मादी देख बोलै नहिं तेही ॥
नर बच्चा जहँ रहन न पाई। यह विधि आप रहे वन मांही॥
सब हथिनी में आप रहाई। दूजा हाथी रहन न पाई ॥
सब हथिनी मिल कीन विचारा। यह तौ बूढ़ भया लनसारा॥
हाथी बच्चा रहन न पावै। जो उपजै तेहि मारि गिरावै ॥
बूढ़ भया यहि छूटै प्राना। पुनि फिर अपना कौन ठिकाना॥
सब हथिनी मिल कीन विचारा। यह विधि बच्चा होय उबारा
वह बन में इक साध रहाई। बच्चा लेराखौं तहँ जाई ॥
साधू दया हीन नहिं होई। वह पालै पुनि वाको सोई ॥
यह कह हथिनी कीन्ही आसा। बच्चा डार कुटी के पासा ॥
साधू देख दया अति आई। बच्चा लीन कुटी के माहीं ॥
दया जान तेहि पालन कीन्हा। मोटा भया जातको चीन्हा॥
चल्यो जहां सब हथिनी माहीं। गजमकरंद देख तेहि भाई॥
सन्मुख जुद्ध भया तेहि जाई। यह जवान वह बूढ़ा भाई ॥
गज मकरंद को मार गिराई। पुनि हथिनी में आप रहाई॥
पुनि बच्चा यह कीन बिचारा। वहि साधू ने मोहिं उबारा॥
साधू मार मिटाऊं ख्याले। मो सरका दूजा नहिं पाले ॥
सो पुनि मोरा वैरी होई। तासे साधू मारौं सोई ॥

यह विचार साधू को मारा । यह विधि माना यह संसारा ॥
वै साधू बच्चा को पाला । सो पुनि भया ताहि कर काला ॥
दया जान उन कियो उबारा । वे बच्चा साधू को मारा ॥
साधू जग कोयहविधि जाना। यहबिधिचारोजुगपरमाना॥
काल बुद्धि सब जग के माहीं । संत दया विधि माने नाहीं ॥
वे दयाल विधि दया बिचारा। कोइ२जीव होय उपकारा॥
सब जग जीवकालमुखमांही। कोइ२जीवनिकसिपुनिजाई
सुन माना जग को व्यौहारा। आदि अंत अस रचा पसारा॥
यामें तुमको दोप न भाई । आदि अंत ऐसी चलि आई ॥

माना उवाच

॥ चौपाई ॥

तुम दयाल हो पूरे स्वामी। जीव काल बसतुम्है नजानी॥
तुम परमारथ राह बताई । जग करमी स्वारथ को धाई ॥
अस स्वामी इक अर्ज़ विचारी । मैं तुमचरननकी बलिहारी॥
जो कुछ वस्तु आपने दीन्हा। ता विधि भाष सुनाऊं चीन्हा॥
नील सिखर है सूरत जाई । श्याम सिखर के पार समाई ॥
सातो दीप सेत के पारा । जहँ है पहुंचे गगन अधारा ॥
तहँ पुनि सैर सुरत से कीन्हा । आतम निरख भिन्न लख लीन्हा ॥
घट२ देखा शब्द पसारा। सूरत चढ़ी शब्द की लारा ॥
सुरत शब्द में जाय समानी । जस२ भई सो भाष बखानी ॥
जब स्वामी तुम दाया कीन्हा । बस्तु अगम की हाथैं दीन्हा॥

अनेक जनम यह देह सिराती। पुनि मरते कहुं हाथ न आती॥
मैं पुनि सतगुरु तुम को जाना। तुलसी सत सतगुरु कर माना॥
जस २ सतगुरु की जस रीती। तस २ मोरे भई परतीती॥
माना की मन होश निकारी। तुलसी चरन सरन गति न्यारी॥
स्वामी तुलसी सतगुरु दाता। अगम निगम का किया विख्याता॥
सतगुरु सत्त २ हम जाना। सतगुरु बिना न मिले ठिकाना॥
बिन सतगुरु पावै नहिं कोई। बिन सतगुरु सब गये डबोई॥
तुम सतगुरु मोहिं राह लखाई। आदि और अंत नज़र में आई॥

॥ सोरठा ॥

तुलसी परम दयाल, तुम स्वामी दाया करी।
छूटा भ्रम दुख जाल, कहि दयाल विधि सब लखी॥

॥ चौपाई ॥

अस कह माना सीख जो मंगी। नैनू श्यामा तीनों संगी॥
चरन टेक दंडवत जो कीन्हा। चरन छुवा पुनि मारग लीन्हा॥
तीनों पंडित मारग जाई। कीन्हा भवन गवन की राही॥
पुनि गुनुवां आया तेहि बारा। किया परनाम दंडवत सारा॥
गुनुवां पूछै तुलसी स्वामी। इक बिधी मैं कहूँ बखानी॥
जीव राह की जुगत बताई। तासे छूटै जम की राही॥
तुम दयाल सतगुरु हो स्वामी। जामें होय जीव कल्यानी॥
यह भौजाल जगत व्यौहारा। तामें जीव कर्म बस डारा॥

तुलसीदास उवाच ।

॥ चौपाई ॥

सुन गुनुवां यह जमकी बाज़ी । जग संसार याहि में राज़ी ॥
पंडित और समझैं नहिं क़ाजी । यह सब झूंठ कालसे राज़ी ॥
इनकी बात न चितपर दीजै । यह सब पाप पुन्यमें भीजै ॥
संत चरन की आसा कीजै । संत सरन मुक्ती कर लीजै ॥
यह जग में कुछ नाहीं भाई । सुपन जगत जीव भौभरमाई ॥
राम कृष्ण दोनों बटपारा । शिव ब्रह्मा मिल फांसीडारा ॥
जाते संत राह धर लीजै । इनकी कहन चित्त नहिं दीजै ॥

गुनुवाँ उवाच

॥ चोपाई ॥

चरन बन्द तुम्हरी सरनाई । यह सब झूंठ समझ में आई ॥
मोरे चितका भर्म उठावा । जब से चरन सरन में आवा ॥
हिरदे मोहिँ बिधी समझावा । भर्म भाव बिधि सबहिं बतावा
अब प्रभु कृपादृष्ट मोहिं कीजै । जीवसरन अपनाकरलीजै ॥
मैं तो स्वामी तुमको पाये । तुम्हरे सरन चरनचितलाये ॥
अबकोउ बात बिधीनहिंभावै । सूरत तुलसीचरनसमावै ॥
अब कुछ राह मोहि को दीजै । यह गुनुवां अपनाकरलीजै ॥

तुलसीदास उवाच

॥ चौपाई ॥

जब जेहि को कुछ राह बताई । गुनुवां सीस चरन तरनाई ॥

सुन गुनुवां यह विधी बताई । मनथिर करो गुनोनहिंभाई॥
सूरत शुद्ध कँवल में राखो । नित प्रति सुरत दृष्ट है ताको॥
यहबिधिरहौदिवसऔररराती । गुनुवां गुननकरोमतभांती॥

॥ सोरठा ॥

सुन गुनुवां यह बात, विधि विचार गुप्त रहौ ।
कहौ न काहू साथ, यह विधिमनमें वस रहौ ॥

॥ चौपाई ॥

चरन लाग मारग कोलीन्हा । घर कीसुरतगवनजिनकीन्हा

फूलदास उवाच

॥ चौपाई ॥

स्वामी हमको नाहिं विसारी । नेक सुरत हमहूँ परडारी ॥
हमको अपना दासविचारो । असजानी मोरिओरनिहारो॥

तुलसीदास उवाच

॥ चौपाई ॥

फूलदास विधि करोबिचारा । विन चौके नाहीं निरवारा ॥
चौके की बिधि करौ वनाई । जब सूरत अपना घर पाई॥
सूरत से नरियर को मोड़ो । हाथै से नरियर नहिं फोड़ो ॥
सुरत पान पर बीरा खाओ । बरई बीरा दूर बहाओ ॥
तीन गुनन का तिनका तोडो । वासन पांच इंद्रीकोमोड़ो ॥
और कहां लग बिधी बताऊँ । यह चौका विधि औरैगाऊँ॥
जग चौकै को दूर बहाओ । सत चौका हिरदे में लाओ ॥

जग चौके की झूठी वाता । सत चौका संतन रस माता ॥
जो चौका संतन ने जाना । सोई कबीरदास पहिचाना ॥
सो चौका तुमको बतलैहैं । तासे राह अगम की पै हौ ॥
जो कबीर ने राह बताई । सो चौके की कहूँ बुझाई ॥
जो २ कबीर राह विधि गाई । सोई राह संत बतलाई ॥
संत कबीर में अंतर नाहीं । या विधि से कोइ भर्म न लाई ॥
सूरत चढ़ै संध जो पावै । सो कबीर सम चित में लावै ॥
वामें भिन्न भाव कोइ लैहै । कर्म भाव विधि नरकै जैहै ॥
कहो कबीर ने अगम सुनाया । और संत नहिं वहं से आया ॥
कहो कबीर अवगति से आये । और संत वह घर नहिं पाये ॥
ऐसी विधि कोइ मनमें आने । तौ पुनि पड़ै नर्क की खानै ॥
भेषी पंथ संत यह नाहीं । आदि अंत सो संत कहाई ॥
आदि संत सब वहिं से आवैं । भेष पंथ में वह नहिं पावैं ॥
भेष पंथ मे ढूंढौ भाई । यासे तुमको नज़र न आई ॥
अंदर की आँखो से देखो । तब पुनि संत नजर से पेखो ॥
तुमको नज़र कहाँ से आई । चौका पंथ माहिं उरझाई ॥
चौका पंथ को दूर वहावै । तब वह संत नज़र में आवै ॥
चौका पहा हाट बज़ारा । यासे पड़ै कर्म की लारा ॥
संतन का चौका विधि न्यारा । यह सब जानो हाट बज़ारा ॥
संतन का चौका विधि गाऊँ । संत कृपा से समझ बताऊँ ॥
सुरत मोड़ नरियर को फोड़ा । अगम पान चढ़ धनुवां तोड़ा ॥
राह विधी कोइ संत बतावै । जीवत अगम वस्तु को पावै ॥

तुलसी कह इक शब्द लखाऊं। तामें सब चौका विधि गाऊं॥
फूलदास तुम सुनियो काना। विधि चौका का शब्द बषाना॥

जैजैवंती

एरी लै आज तौ अघर घर आई। तुलसी चढ़ देखिया ॥टेक
सूरत द्रुग दौड़ अटारी। हिय हेर लखीया प्यारी॥
सारी तौल हेर निहारी। प्यारी लै सँग पेखिया॥१॥
नरियर को मोड़ा जाई। प्रिय बास सुगंध उड़ाई॥
बीरा पान खाये आई। सुगंधी महकाइया॥२॥
मेवा आठ पुरुष लख जानी। खुल हेर हिये उड़ानी॥
शब्दा रस भइ रँगरानी। हरषानी पिय पाय के॥३॥
पलँगा पर जाय पौढ़ी। धन धन सुख की घड़ी॥
अटा महलन चढ़ी। प्यारा पिव पेखिया॥४॥
फूलदास द्रुग पर चौका। परवाना छांडो धोखा॥
नरियर सुरत से मोड़ो। तोड़ो असमान को॥५॥
तुलसी लस सूरत जाई। चौका परवाना याही॥
बस तिल हिरदे बिच आई। चढ़ी द्वारा पाय के॥६॥
रेतीदास को समझावा। फूलदास दोऊ लख पावा॥
कँवला में सुरत लखाई। तुलसी बिधि गाय कें॥७॥
इन्द्री पांच बासन मोड़ा। गुन तीन तिनका तोड़ा॥
पोढ़े तिनका बासन छूठा। झूंठे जग लूटिया॥८॥
तुलसी कब्बीर बषाना। सो चौका विधि हम जाना॥

पूंछौ कोई चितव्रत आई । ताको दरसाइया ॥ ९ ॥
पत्र कजली छेदा जाई । जहँ सेत चदरवा तनाई ॥
तुलसी विधि कह ठहराई । संत जनाइया ॥ १० ॥

॥ दोहा ॥

फूलदास चौका विधी सुरत नारियर मोड़ ।
पान अमरबीरा लखो चखे अधर रस और ॥
रेतीदास तुमहूँ लखो नरियर निरत निहार ।
निज अकाश पर पान है बीरा है निज सार ॥

॥ चौपाई ॥

फूलदास अस सुरत लगाई । नरियर माहिं पंथ सोइ राही ॥
यही पंथ की राह जो पावै । पंथ कबीर ताहि करनावै ॥
यही पंथ सूरत सो लावै । अगम अगोचर घर को पावै ॥
सूरत सैल करै असमाना । निज घर पहुँचे जाय ठिकाना ॥
या विधि पंथ संत दरसावै । तब सत सुरत समझ घरआवै ॥
आदि और अंत पंथ पद जाना । भाषैं सतगुरु संत बखाना ॥
सतसँग करै बूझ जब आवै । बूझै मत सतसंगत पावै ॥
जिन २ चरन विधि विधी जाना । सो गुरमत जानों परमाना
पंथी राह रीत सब छूटै । मन की मान मनी सब टूटै ॥
दीन होय कर सेवै संता । जब लख पड़ै अगम पद पंथा ॥
जस कबीर ने भाषा चौका । सो विधि करो मिटै जम धोखा ॥
उन कहि विधि जो बूझ विचारे । सो घर पुनिपद पार निहारे

संत गूढ़मत गुप्त पुकारै । बूझै सतगुरु शब्द सुधारै ॥
जोकछुकहीउलटविधिबानी । सोबिनसमझ बूझनहिंजानी
शब्द साष सो भाष सुनावै । बिन सतगुर कुछ हाथ न आवै॥
सतगुर मिलैं बतावैं भेदा । जब जम जाल मिटै मन खेदा ॥
संत बाग़ बन खंड पुकारा । सोइ ब्रहमंड बाग़ बन सारा ॥
तनमन बृक्षदेख द्रग अंडा । चढ़कर सुरत निरख नौ खंडा ॥
जो अंडे बिच बाग़ बषाना । देखा सुरत समझ असमाना ॥
बाग़ बृक्षबेली पर अंडा । सतगुरु सुरत बतावें डंडा ॥
यहमन खलक़ खानबिचडारा । पांच पचीस तीन तेहिलारा॥
अब याका सुन शब्द लखाऊँ । बृक्षबेल अंडा अरथाऊँ ॥
उलट मसी जो कही कबीरा । रमूज़ रेखता में मत धीरा ॥

रेख़ता

अली इकबाग़ बन खंडा । लगे बृक्ष वेल पर अंडा ॥
अजब इक फूल पँचरंगा । भंवर बस बास के संगा ॥१॥
अगर सब लोग फस खावैं । स्वाद बस रैन रह जावैं ॥
फले फल दाखके पेड़ा । रहत जेहि भूमि पर भेड़ा ॥२॥
भेड़ा रहे बाग़ में अलीजा । काढ़ नित खात कालेजा ॥
वही बनबीच में राजै । गरज़ सब सूरमाँ भाजै ॥ ३॥
कहूँ कोइ रहन नहिं पावै । सकल बन जीव चर जावै ॥
कहूँ उनमान बलकेरा । बनीबिच जीव सब घेरा ॥४॥
सुनो अब तोल तन केरा । नहीं त्रैलोक में हेरा ॥
अलीं इक बात अनतोली । सुनी सब संत की बोली ॥५॥

कहैं दससीस वहिकेरा । पाँव पच वीस तन हेरा ॥
अली मुख तीन से खावे । अजब वहि बात ये आवै ॥६॥
तरँग तन बीच में भावै । समझ दस सीस परलावे ॥
अरी थिर थोब नहिं जाना । रहे भ्रम भाव रस खाना ॥७॥
अली जिन अंड को फोड़ा । सुरत निज नैन से जोड़ा ॥
सुवामन भाव का भेड़ा । चले सत नाम चढ़ बेड़ा ॥८॥
तुलसी तब बूझ में आई । अगम सब समझ दरसाई ॥
लिये सतसंत के चरना । विधि बरतंत सब बरना ॥९॥

॥ चौपाई ॥

फूलदास दिल समझ विचारो । अस २ भेद कबीर पुकारो ॥
मनपच बीस पाँच संग भूला । गुनतन वृक्ष बसै सहे सूला ॥
बेली सुरत-अंड पर लागी । दिस दुरबीन चीन्ह सोइ भागी ॥
मनकर भर्म भूल थिर धावै । थिरकर सुरत निरत तत तावे ॥
नित २ ऐनक आँख दिखावै । लख कागज़ पर अक्षर पावै ॥
निःअक्षर निरनै गत न्यारा । निरख संत सो करै विचारा ॥
रेतीदास रमज़ रस बूझा । जिन २ को संतन मत सूझा ॥
यह मन काल बड़ा बल भूता । पाँच पचीस संग सम सूता ॥
तीनगुनन तनमन बिच राजै । चलकर स्रुत मन बिषरस साजै ॥
तामों थिरकर सुरत लगावै । कंज कँवल विधि विच ठहरावै ॥
पल २ सूरत सिखर निहारै । लीला गिरपर समझ सिधारै ॥
रविरज किरन गगन के पारा । सूरत सतगुरु ऐन निहारा ॥

सिखर निकर नभ द्वारे माहीं । सेता शहर अटारी जाई ॥
श्याम कंज स्रुत दूर बहाई । द्वै दल कँवल केलहिये आई ॥
सरवर गिरजा गुरुपद माहीं । कंज कँवल तज पदम सुहाई ॥
लघु दीरघ दल चार बिराजे । सतगुरु सुरत मीन जहँ राजे ॥
फूलदास यह लष २ बैना । सूरत द्वारपार की सैना ॥
यासे परे आदि घर न्यारा । यासे संत अंत दरबारा ॥
जिन सतगुर की सैन बिचारी । सो गत बूझै अगम अपारी ।
यह मत संत पंथ नहिं भेपा । खोज २ पच मुये अनेका ॥
सुरतवंत गुरु सैन लखावै । सो चेला सतगुरु से पावै ॥
पदम मध्य सत २ गुरधामी । सूरत सिमट शब्द अलगानी ॥
जिमिसागर बागरभया सिंधा । सलितासमुंद मिलेजिमबुंदा
अससूरत सिख सतगुरु पासा । शब्दगुरू मिलकियानिवासा
गुरुसिषसार धारइक जानी । ज्यौं जलमिल जलधारसमानी
अस २ खोज करै कोइ भाई । नित हित संत चरन लौ लाई ॥
तन मन धन सम्पति परवारै । नित २ सतसंगत की लारै ॥
दास भावसत सँग सँग करलीना । दीनहीन मनहोय अधीना
चित्त भाव दिल मारग चावै । सबसाधन की टहल सुहावै ॥
यह विध भांति रहे रसलाई । तब सतगुरु सत दया लखाई
द्वारा दृग दुरबीन लखावै । कंज श्यामता समझ सुनावै ॥
तामें समुदर सोत अपारा । तामें लील पील सम द्वारा ॥
सूरत समझ बूझ जहँ आवै । गज गिरजा तहँ आसन लावै ॥
निसदिन रहै सूरत लौलाई । पल २ राखौ तिल ठहराई ॥

यामें सुरत नेक नहिं बिसरे। छिन २ मन से न्यारी पसरे ॥
यह विधि जतन करै कोइ लाई। सूरत रहे द्वारपर छाई ॥

फूलदास उवाच

॥ चौपाई ॥

फूलदास कह अंतरजामी। अगम वस्तु दीन्ही सहदानी ॥
सुनी न भेष पंथ के माहीं। अजर पंथ मोको दरसाईं ॥
मोको कीन सनाथी स्वामी। आदि अलखकीदीननिशानी॥
अब तौ रहूँ चरन लौ लाई। जो कबीर सोइ तुलसी गुसाईं ॥
जो कबीर विधि भाष सुनाई। सो २ सब तुलसी पर पाई ॥
तुलसी कबीर एक कर जाना। दूजा भाव न मनमें आना ॥

॥ दोहा ॥

तुलसी कबीर एक गत दूजा कहै अचेत।
दोनों स्वामी एक रस मोर चरन से हेत ॥

तुलसीदास उवाच

॥ दोहा ॥

तुलसी विधि पहिचान के दीन्हा पंथ लखाय।
सुरत बांध असमान पर निज घर पहुँचो जाय ॥

छन्द

तुलसी विधि गाई अगम लखाई।
फूलदास विधि राह लई ॥ १ ॥

रेती अति दासा सुरत निवासा ।
तिलमें बासा जुगत सही ॥ २ ॥
राती और दिवसा छिन २ बासा ।
सुरत अकाशा निरत रही ॥ ३ ॥
मन सुरती लागी नेक न भागी ।
निस दिन जागी ठहरतही ॥ ४ ॥
रेती अरु फूला स्वामी अनुकूला ।
सूल बंध सब काट दई ॥ ५ ॥
मनही बुधि पाई भूल नसाई ।
स्वामी सहाई बांह गही ॥ ६ ॥
मन के भ्रम भागे थिर ह्वै लागे ।
कुछ अभिलाखा नाहिं रही ॥ ७ ॥
मन की ब्रत चेती छांड़ अचेती ।
सेत द्वार पर लाग रही ॥ ८ ॥
तुलसी कह कहिया अगम लखइया ।
चरन पाय स्रुत पाग रही ॥ ९ ॥

॥ सोरठा ॥

फूलदास सुन बात संत चरन अति अगम गति ।
सत मत गत पद सार यह अगार गत को लखै ॥
कोइ जाने स्रुत सार, शब्द लार लै पर रही ।
सिंधु बुंद स्रुतधार, मिलि अगार अद्भुत भई ॥

॥ चौपाई ॥

नाम जात इक आगरवाला । कहैं नाम सोई सुरतगुपाला ॥
जिनके गुरू गुसाईं आये । प्रियेलाल अस नाम सुनाये ॥
उन उनके घर किया निवासा । सुन सोई बात दरश अभिलाषा
जिन पुनि सुनी हमारी बाता । दोऊ चले दरश को साथा ॥
प्रियेलाल अरु सुरतगुपाला । आये लिये हाथ में माला ॥
आये कीन दंडवत बैठे । प्रीत उठी तुम दर्शन भेटे ॥
तुलसी कहै कृपा तुम कीन्हा । दास जान प्रभु दर्शन दीन्हा ॥
अपन जान प्रभु भयउ दयाला । स्वामी बिन किरपा को पाला ॥

प्रियेलाल उबाच

॥ चौपाई ॥

प्रियेलाल कह भये प्रसन्ना । भीतर प्रेम मगन प्रियमन्ना ॥
स्वामी दर्शन दुर्लभ तुम्हारे । संत दर्श बड़ भाग हमारे ॥
नगर नार सब यों विधि भाषा । सो विधि तौ हम एकन ताका ॥
सब मिल कहैं नगर के माहीं । उन दरशन नहिं जाओ भाई ॥
वेद पुरान एक नहिं जाने । राधा कृष्ण राम नहिं माने ॥
गंगा जमुना कछू न राखे । कुछ नहिं आदि अंत को भाषे ॥
सब जग मिल यह कहत बनाई । सो विधि सुन हम हूं चलि आई ॥

तुलसीदास उबाचं

॥ चौपाई ॥

तुलसी सत २ उन कहिया । मैं मतिहीन बुद्धि नहिं रहिया ॥

मैं तो सब चरनन की दासा । मैलीबुद्धि नीचमोरिआसा ॥
तुम्हरे चरन मोर निरवारा । पकड़ हाथ करिहौनिस्तारा ॥
मैं औगुनकीखानअपारा । सूरत संत चरन की लारा ॥
मोर निबाह तुम्हारे हाथा । अब तो लगौं चरन के साथा ॥

प्रियेलाल उबाच

॥ चौपाई ॥

हे स्वामी अस २कस भाषौ । हम जग जीव चरनमें राखौ ॥
काम अरु क्रोधलोभ के माते । बिषरसभोगफिरैंसँगसाथे ॥
यह जगजालकालदिनराती । कर्मभाव भरमै सँगसाथी ॥
हम चहिलेके जीव अनीती । छूटैं तुम चरनन की प्रीती ॥
श्री भगवान जी कहत पुकारा । मैंउनसदा संतकीलारा ॥
गीता में अरजुन से भाषा । मोसे बड़ा संत को राखा ॥